वर्ष-5 अंक-9 काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत प्रकाशित ISSN 2231 - 2455

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की विज्ञान पत्रिका

विज्ञान-गंगा

2015

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
BANARAS HINDU UNIVERSITY
सर्व विद्या की राजधानी

हिन्दी प्रकाशन समिति
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

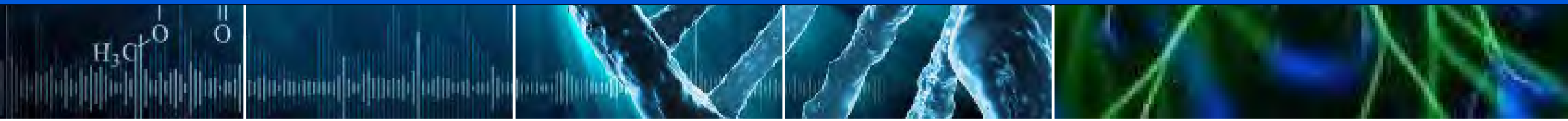

भारत रत्न डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

(1931-2015)

।। श्रद्धांजलि ।।

विज्ञान-गंगा 2015

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की विज्ञान पत्रिका

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत प्रकाशित

वर्ष - 5 अंक - 9 2015 ISSN 2231 - 2455

मुख्य संरक्षक

प्रो. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी
कुलपति
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सलाहकार मण्डल

प्रो. के.पी. उपाध्याय, कुलसचिव, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ. अभय कुमार ठाकुर, वित्त अधिकारी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. अरुण कुमार श्रीवास्तव, संकायप्रमुख, विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. मधुलिका अग्रवाल, वनस्पति विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. एस. एन. उपाध्याय, भूतपूर्व निदेशक, प्रौद्योगिकी संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. एस. एन. ठाकुर, पूर्व अध्यक्ष, भौतिकी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. रमा शंकर दुबे, कुलपति, तिल्का माझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर
प्रो. राम सन्मुख उपाध्याय, वनस्पति विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. शिव गोपाल मिश्र, प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद
प्रो. राणा प्रताप सिंह, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ
डॉ. श्रवण कुमार तिवारी, हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. अशोक कुमार, जैव प्रौद्योगिकी स्कूल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव, विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद
डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र, होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टी.आई.एफ.आर., मुम्बई
डॉ. डी.डी. ओझा, जोधपुर
संजय गोस्वामी, अणु शक्ति नगर, मुम्बई
शुकदेव प्रसाद, इलाहाबाद
मुहम्मद खलील, जामिया नगर, नई दिल्ली
प्रो. आर. पी. मलिक, भौतिकी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. सुनील कुमार सिंह, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
प्रो. बी.के. सिंह, भौतिकी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डा. सुनीता चन्द्रा, कुलसचिव, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

संपादक

प्रो. शशि भूषण अग्रवाल

उप-संपादक

डॉ. देवेश कुमार गुप्त
डॉ. दया शंकर त्रिपाठी

प्रकाशक

हिन्दी प्रकाशन समिति
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पर्क

समन्वयक
हिन्दी प्रकाशन समिति (भौतिकी प्रकोष्ठ)
द्वितीय तल, हिन्दी भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005 (भारत)

पत्रिका में प्रकाशित लेखों व कथन के लिए सम्पादक, प्रकाशक अथवा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय प्रशासन का सहमत या असहमत होना आवश्यक नहीं है। वे सभी लेखकों के अपने विचार हैं। पत्रिका में प्रकाशित कुछ छायाचित्र इन्टरनेट से लिये गये हैं जो जनहित में उपयोग किये गये हैं। इन छायाचित्रों के लिए हम सम्बन्धित छायाकारों के आभारी हैं।

अनुक्रमणिका

विज्ञान-गंगा अंक-9 (जुलाई-अगस्त 2015)

1. 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन और विज्ञान के लिए हिंदी
डॉ0 राकेश कुमार दूबे 6
2. प्रोफेसर श्रीधर सर्वोत्तम जोशी का 'जोशी प्रभाव'
प्रो0 सूर्य नारायण ठाकुर 7-14
3. प्लूटो मिशन 'न्यू होरिजन्स' की लम्बी यात्रा
काली शंकर 15-19
4. ब्लैक बॉक्स का बढ़ता आयाम
संजय गोस्वामी 20-22
5. वायु-प्रदूषण : समस्या और समाधान
मंजुलिका लक्ष्मी एवं प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव 23-25
6. परिवेशी वायु गुणवत्ता के लिए प्रेक्षित कलर कोडेड सूचकांक
प्रो0 शशि भूषण अग्रवाल एवं निवेदिता चौधरी 26-30
7. भारतीय राकेटों के पर्याय कलाम
शुकदेव प्रसाद 31-36
8. रोचक है हमारा सौरमंडल
प्रो0 कृष्ण कुमार मिश्र 37-40
9. अनावृष्टि का समाधान है कृत्रिम वर्षा
डॉ0 दिव्या पाण्डेय, मयंक पाण्डेय एवं प्रो0 मधूलिका अग्रवाल 41-43
10. मिसाइलमैन डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के कुछ अनछुए पहलू
डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी 44-50
11. नोबल के नौ नवरत्न
विष्णुप्रसाद चुतुर्वेदी 51-53
12. फास्ट फूड : ना बाबा ना !!!
मनीष मोहन गोरे 54-56
13. कहाँ मिलता है फिरोजा और लाजवर्त ?
डॉ0 विजय कुमार उपाध्याय 57-60
14. पैकेजिंग में प्लास्टिक का विकल्प : जैविक कचरा
डॉ0 (श्रीमती) अंजलि बाजपेयी एवं श्रीमती माया शर्मा 61-64
15. फसल ऋतुजैविकी की भविष्यवाणी एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभाव
पारोमिता घोष एवं मनमोहन सिंह कनवाल 65-67
16. प्रोटियोमिक्स : मेजबान पौधों व कवकों के सम्बन्ध को समझने का एक माध्यम
मनोज कुमार, प्रो0 कविता शाह, प्रो0 रमेश चन्द और प्रो0 आर0एस0 दूबे 68-71
17. अपराधियों की सटीक पहचान के लिए वीएनटीआर्स (VNTRs) एक नया क्रांतिकारी कदम
संजय गोस्वामी 72-73
18. निर्बाध जल प्रबंधन और भारत
प्रो0 गिरीश चन्द्र चौधरी 74-75
19. रजनीगंधा की लाभप्रद खेती
अतुल बत्रा एवं ए0के0 द्विवेदी 76-79
20. विज्ञान प्रवाह
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी 80-82
21. खट्टा मीठा 'अमरख'
जगनारायण 83-84
22. फल एवं सब्जियों के उपोत्पादों का करें सदुपयोग
डॉ0 राम रोशन शर्मा 85-89
23. बेहतर भोजन, उत्तम स्वास्थ्य और सुदीर्घ जीवन के लिए गृह वाटिका
डॉ0 कुमार भारत भूषण, डॉ0 रविशंकर एम., मनीष मोहन गोरे एवं देवेन्द्र पाल कौर 90-92
24. जैविक खेती में उपयोगी है वर्मीवाश
प्रतीक सनोड़िया, प्रो0 मनोज कुमार सिंह एवं डॉ0 राम स्वरूप मीना 93-95
25. प्रोजेक्ट स्पेस एलीवेटर-स्वर्ग की सीढ़ी
विजय चित्तौरी 96-98
26. इसरो का भावी मिशन एक नई पृथ्वी 'अर्थ-2' की खोज
शशांक द्विवेदी 99-101
27. डिजिटल इण्डिया बदलेगा देश की तस्वीर
डॉ0 संयुक्ता कुमारी 102-104
28. कृषि विज्ञान केन्द्र : किसानों की प्रगति में सहायक
स्नेहा सिंह एवं डॉ0 ओम प्रकाश मिश्र 105-108
29. सुंदर मस्तिष्क के गणितज्ञ-जॉन नैश को नमन
नवनीत कुमार गुप्ता 109-110
30. दुर्लभ जल पक्षियों और जैव विविधताओं के संरक्षक हैं नम भूमि
जगनारायण 111-112
31. मुझसे परिचय बढ़ाओ
आइवर यूशियल 113-114
32. अश्वगंधा रसायनम्
डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी 115-116
33. मानवीय मूल्यों के संरक्षण में योग-एक महत्वपूर्ण अध्ययन
मृत्युंजय द्विवेदी एवं संचित मिश्र 117-119
34. विज्ञान चलचित्र मेला : अब बनेंगी अच्छी विज्ञान फिल्में
डॉ0 इरफान ह्यूमन 120-121
35. सूचना प्रौद्योगिकी : कल, आज और कल पर द्विभाषी अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन
डॉ0 डी.डी. ओझा 122
36. पुरस्कार/सम्मान/सदस्यता/नियुक्ति 123-124
37. पाठकों के पत्र 125-126
38. हिन्दी प्रकाशन समिति की गतिविधियाँ
डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी 127

प्रो. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी
कुलपति

Prof. Girish Chandra Tripathi
Vice-Chancellor

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
BANARAS HINDU UNIVERSITY
(Established by Parliament by Notification No. 225 of 1916)
VARANASI-221 005 (INDIA)
Phones : 91-542-2368938, 2368339
Fax : 91-542-2369100, 2369951
e-mail : vcbhu1@gmail.com, vc_bhu@sify.com
website : www.bhu.ac.in

नवम्बर 16, 2015

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा ''**विज्ञान-गंगा**'' के **अंक-9** का प्रकाशन किया जा रहा है।

इस पत्रिका में विज्ञान, कृषि, चिकित्सा एवं प्रौद्योगिकी विषयों के मौलिक, रुचिकर, ज्ञानवर्धक व समाजोपयोगी लेख लोकप्रिय व सरल हिन्दी भाषा में प्रकाशित किये जा रहे हैं। विज्ञान-गंगा का प्रकाशन हमारे संस्थापक महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी की इच्छानुसार विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा में राष्ट्रभाषा हिन्दी के उपयोग, प्रचार-प्रसार और प्रोत्साहन की दिशा में विश्वविद्यालय का एक महत्त्वपूर्ण योगदान है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि **विज्ञान-गंगा** का यह **नौवाँ अंक** भी अपने पूर्व के अंकों के भाँति ही छात्र-छात्राओं, शोधकर्ताओं, शिक्षकों, कृषकों एवं जनसामान्य में लोकप्रिय होगी और पाठकगण इससे अधिक से अधिक लाभान्वित होंगे।

मैं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की तरफ से उक्त प्रकाशन से जुड़े समस्त लोगों को हार्दिक बधाई देता हूँ तथा अंक के सफल प्रकाशन हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(गिरीश चन्द्र त्रिपाठी)

विज्ञान-गंगा

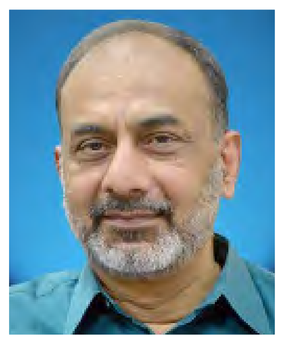

हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित 'विज्ञान-गंगा' (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की विज्ञान पत्रिका) का अंक-9 विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष में आपके समक्ष प्रेषित करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है। विज्ञान-गंगा अंक-9 काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका प्रकाशन 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष' के अन्तर्गत किया जा रहा है। इसके विगत अंक 6, 7 व 8 जो पूर्णतया रंगीन प्रकाशित हुई है और उसके पूर्व के पाँच अंकों ने काफी लोकप्रियता हासिल की है। पत्रिका ने मात्र पाँच वर्षों में ही अपनी राष्ट्रीय पहचान बना ली है और इसका अंक-6 व 7 विद्यार्थियों, शिक्षकों, अनुसंधानकर्ताओं और विज्ञान प्रेमियों तथा जनसामान्य के लाभार्थ बीएचयू की वेबसाइट पर भी उपलब्ध हैं। हम विज्ञान-गंगा के माध्यम से आप सभी तक विज्ञान एवं उससे जुड़ी महत्वपूर्ण सूचनाओं, आविष्कारों और नवीन अनुसंधानों को आप तक पहुँचाने का प्रयास कर रहे हैं। इसके पिछले अंकों में विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर सूचनापरक व जनोपयोगी लेख प्रकाशित किये गये हैं और वे जनसामान्य द्वारा काफी प्रसंशित हो रहे हैं। अब हमारे पाठकों की स्पष्ट टिप्पणी है कि विज्ञान-गंगा में स्तरीय और उत्कृष्ट सामग्रियाँ प्रकाशित की जा रही हैं। विज्ञान-गंगा के माध्यम से हम अपने विश्वविद्यालय की गरिमा के अनुरूप विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग को सुदृढ़ करने एवं जनमानस तक पहुँचाने का यथाशक्ति प्रयास कर रहे हैं।

पिछले वर्ष 2014 में दो महान हस्तियों को भारत का सर्वोच्च सम्मान ''भारत रत्न'' से अलंकृत किया गया था जिसके अन्तर्गत प्रथम, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के महान संस्थापक व समाज निर्माता महामना पं0 मदन मोहन मालवीय जी को मरणोपरान्त तथा दूसरा हमारे पूर्व प्रधानमंत्री माननीय अटल बिहारी बाजपेयी जी को यह सम्मान प्रदान किया गया। इन दोनों महापुरुषों का उच्च शिक्षा, विज्ञान प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, कृषि और विकास आदि क्षेत्रों में विशिष्ट योगदान रहा है।

यह वर्ष 2015 भी अनेक उपलब्धियों का साक्षी रहा है परन्तु एक दुखद पक्ष भी है, वह है भारत के पूर्व राष्ट्रपति व मिसाइल मैन डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम का हम लोगों के बीच से चले जाना। यह हमारे राष्ट्र की एक अपूरणीय क्षति है और उस महान व्यक्तित्व का व्यक्ति आज के समय में मिलना मुश्किल है। यद्यपि इस वर्ष 2015 का भौतिकी का नोबेल पुरस्कार कनाडाई वैज्ञानिक आर्थर बी मैकडोनाल्ड एवं जापानी वैज्ञानिक तकाकी कजीता को संयुक्त रूप से न्यूट्रिनों के स्पंदन के बारे में शोध उपलब्धियों के लिए प्रदान करने की घोषणा की गयी है। इनके अनुसंधान से ब्रह्मांड के बारे में सोच बदलने की संभावना व्यक्त की गयी है। वहीं रसायन विज्ञान के क्षेत्र में डीएनए की मरम्मत पर अनुसंधान कार्य करने वाले स्वीडन के टामस लिंडाल, अमेरिका के पाल मॉड्रिच और तुर्की के अजीज संकार को नोबेल पुरस्कार देने की घोषणा की गयी है। इस शोध से जीवित कोशिकाओं की गतिविधियों के बारे में अहम जानकारी मिली है और कैंसर के नए तरीके ईजाद होने की संभावना है। गत 28 सितम्बर 2015 को देश के पहले अंतरिक्ष वेधशाला एस्ट्रोसैट् का सफल प्रक्षेपण कर भारत ने भी इस वर्ष अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में सफलता का एक नया अध्याय जोड़ा है। इससे ब्रह्मांड को समझने में और अधिक सफलता मिलेगी।

गत वर्षों में हिन्दी प्रकाशन समिति के खाते में भी अनेक उपलब्धियाँ जुड़ी हैं जिसके अन्तर्गत समिति द्वारा विश्वविद्यालय स्तरीय पुस्तक निर्माण योजना में ''पर्यावरण विज्ञान के विविध आयाम'', ''ओजोन प्रदूषण : वनस्पतियों एवं मानव स्वास्थ्य पर

प्रभाव'' तथा ''भारतीय वैज्ञानिक पुनर्जागरण की आधुनिक महाविभूतियाँ'' प्रकाशित की गयी हैं। समिति द्वारा पूर्व में 'पर्यावरण सुरक्षा : मूलभूत समस्याएँ एवं निदान' तथा 'जल संरक्षण : समस्याएँ एवं समाधान' पुस्तिकायें प्रकाशित की जा चुकी हैं जिसने पर्यावरण प्रेमियों और छात्र-छात्राओं के बीच काफी लोकप्रियता हासिल की हैं। ये सभी पुस्तकें पर्यावरण विज्ञान के छात्रों, अध्यापकों, प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित हो रहे प्रतिभागियों, गैर-सरकारी समाजसेवी संस्थाओं एवं पर्यावरण प्रेमियों के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। इस वर्ष दो पुस्तकें 'मधुमेह के कारण एवं निवारण', लेखक- डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी तथा 'तरलन एक परिचय', लेखक- प्रो0 सिद्ध नाथ उपाध्याय एवं प्रो. वीरेन्द्र नाथ राय, मुद्रणाधीन हैं जो यथाशीघ्र आपके हाथों में होंगी। हमें पूर्ण विश्वास है कि हमारे लब्धप्रतिष्ठ कुलपति माननीय प्रो0 गिरीश चन्द्र त्रिपाठी जी के कुशल नेतृत्व में हिन्दी प्रकाशन समिति और भी समृद्ध होगी और निरंतर नई ऊँचाइयों तक पहुँचेगी।

सर्वप्रथम, मैं अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त अर्थशास्त्री एवं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के यशस्वी कुलपति और 'विज्ञान-गंगा' के मुख्य संरक्षक प्रो0 गिरीश चन्द्र त्रिपाठी जी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनका शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी को प्रोत्साहित करने में विशेष रुचि रहती है। उनके प्रोत्साहन, उत्साहवर्द्धन एवं आवश्यक धनराशि प्रदान करने के परिणामस्वरूप ही 'विज्ञान-गंगा' पत्रिका का यह उत्कृष्ट एवं आकर्षक रंगीन अंक-9 आप तक पहुँच रहा है। मैं, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ0 के0पी0 उपाध्याय तथा छात्र अधिष्ठाता प्रो0 एम0के0 सिंह का विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने इस अंक के प्रकाशन में सभी प्रकार के प्रशासनिक सहयोग प्रदान किये हैं। विज्ञान संकाय प्रमुख प्रो0 अरुण कुमार श्रीवास्तव के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जो हिन्दी को आगे बढ़ाने एवं समिति को सुदृढ़ बनाने में अपना रचनात्मक सुझाव एवं यथोचित सहयोग प्रदान करते रहे हैं। वित्तीय सहयोग प्रदान करने हेतु विश्वविद्यालय के वित्त अधिकारी डॉ0 अभय कुमार ठाकुर तथा वित्त विभाग के अन्य सभी अधिकारियों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ। मैं 'विज्ञान-गंगा' के सलाहकार मण्डल के सभी सदस्यों का विशेष रूप से आभारी हूँ जिनका 'विज्ञान-गंगा' को स्तरीय बनाने में हमें निरन्तर सहयोग एवं रचनात्मक सुझाव प्राप्त होता रहता है। मैं वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के अध्यक्ष एवं निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय प्रो0 केशरी लाल वर्मा एवं सहायक वैज्ञानिक अधिकारी डॉ0 बी.एस. बेहरा द्वारा इस समिति को प्रदान किये गये हर सम्भव सहयोग के लिए धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। इस पत्रिका में प्रकाशित लेख के लेखकों के प्रति मैं व्यक्तिगत रूप से धन्यवाद प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपने उत्कृष्ट लेख इस पत्रिका में प्रकाशन हेतु प्रदान किये हैं। हम अपने सहयोगी उप-संपादकों डॉ0 देवेश कुमार गुप्त एवं डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी को भी कुशल संपादन सहयोग हेतु आभार प्रकट करते हैं। साथ ही समिति के कार्यालय सहायक एवं संगणक कार्मिक श्री अनुप सोनकर एवं श्री तुलसी दास एक्का को भी उनके विविध सहयोगों हेतु धन्यवाद देते हैं। पत्रिका के मुद्रक मे0 गौतम प्रिन्टर्स, वाराणसी के अधिष्ठाता श्री अरुण कुमार सिंह पत्रिका को समय से प्रकाशित करने हेतु साधुवाद के पात्र हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका का प्रस्तुत अंक-9 भी अपने पूर्व प्रकाशित अंकों की भाँति ही छात्रों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों एवं सामान्यजनों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। आपके सृजनात्मक एवं उत्कृष्ट सुझावों का हम सदैव स्वागत करेंगे।

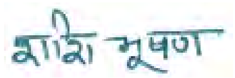

प्रो0 (शशि भूषण अग्रवाल)

10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन और विज्ञान के लिए हिंदी

डॉ0 राकेश कुमार दूबे*

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन भारत के मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में 10-12 सितंबर, 2015 तक सम्पन्न हुआ।सम्मेलन का उद्घाटन भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने किया। इस सम्मेलन के माध्यम से प्रथम बार 'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' विषय को भी रखा गया। देश-विदेश से आए विद्वानों ने इस मंच पर 'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' विषय पर गहन चर्चा की। इस वैश्विक मंच पर 39 देशों के प्रतिनिधि शामिल थे। भारत की विदेश मंत्री माननीया सुषामा स्वराज ने उद्घाटन सत्र में कहा कि पूर्व में विश्व हिन्दी सम्मेलन के सत्रों में जो चर्चा होती थी, उसकी रिपोर्ट बाद में आती थी पर इस बार ऐसा नहीं होगा।

उद्घाटन करते भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी

10 सितम्बर को 'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' विषय पर विद्यानिवास मिश्र सभागार में सत्र आरंभ हुआ। इस सत्र में भारत के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री डॉ0 हर्षवर्धन ने अध्यक्षता करते हुए कहा कि विज्ञान के अंदर हिन्दी को शामिल करने के लिए सरकारी स्तर पर प्रयास किये जा रहे हैं। पाठ्यक्रमों में भी हिन्दी को जगह मिले तभी विज्ञान के क्षेत्र में कुछ बेहतर हो सकेगा। विज्ञान का लेखन भी हिन्दी में करने का प्रयास होना चाहिए परन्तु उसमें मौलिकता आवश्यक है। मंच पर वक्ताओं के रूप में डॉ0 बी0के0 सिंहा, पूर्व निदेशक वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग; डॉ0 शिवगोपाल मिश्र, प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद, प्रयाग; प्रो0 एन0के0 सहगल एवं विज्ञान लेखक सुभाष चंद्र लखेड़ा तथा संयोजिका के रूप में विज्ञान प्रसार की वैज्ञानिक किंकिणी दासगुप्ता मिश्र उपस्थित रहे।

इस सत्र में पहले वक्ता डॉ0 शिवगोपाल मिश्र ने 'हिन्दी में विज्ञान साहित्य की वर्तमान स्थिति और संभावनाएँ एवं विज्ञान में हिन्दी की स्वीकार्यता में किये जा रहे प्रयास' तथा दूसरे वक्ता डॉ0 एन0के0 सहगल ने 'विज्ञान लोकप्रियकरण और वैज्ञानिक सोच विकसित करने में हिन्दी की भूमिका' पर व्याख्यान दिया।

सम्मेलन के दूसरे दिन 'चिकित्सा विज्ञान में हिन्दी की पढ़ाई कराने का प्रयास' विषय पर बोलते हुए अटल बिहारी बाजपेयी विश्वविद्यालय, भोपाल के कुलपति प्रो0 मोहनलाल छीपा ने बताया कि उनके विश्वविद्यालय में सभी पाठ्यक्रमों के साथ अभियांत्रिकी और चिकित्सा की पढ़ाई भी हिन्दी में ही होती है। डॉ0 बी0के0 सिंहा ने 'हिन्दी में विज्ञान शब्दकोश की आवश्यकता और वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दों के गठन में आने वाली चुनौतियों' पर बोलते हुए कहा कि पश्चिमी देशों की जिस थिसारस पद्धति को पूरी दुनिया में स्वीकृति मिली है वह भारत की हजारों वर्ष पुरानी निघण्टु पद्धति का ही रूपांतर है। इस सत्र के अंतिम वक्ता लोकप्रिय विज्ञान लेखक सुभाष चन्द्र लखेड़ा ने 'हिन्दी में विज्ञान संचार एवं रक्षा विज्ञान' पर व्याख्यान देते हुए कहा कि राष्ट्र की प्रगति के लिए विज्ञान का सृजन और उसका संचार दोनों ही बेहद जरूरी है। उन्होंने कहा कि विज्ञान संचार के लिए मीडिया की भूमिका भी सकारात्मक होनी चाहिए।

समापन समारोह में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री डॉ0 हर्षवर्धन

सम्मेलन के तीसरे दिन डॉ0 हर्षवर्धन ने हिन्दी के क्षेत्र में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के योगदान की चर्चा की और बतलाया कि भारत से ही विज्ञान पश्चिमी देशों में गया और वहीं से फिर अंग्रेजी में वापस आ रहा है। इस अवसर पर किंकिणी दासगुप्ता मिश्र ने रिपोर्ट प्रस्तुति किया। इस सम्मेलन के समापन-समारोह की अध्यक्षता भारत के गृहमंत्री माननीय राजनाथ सिंह ने की।

---

*डॉ0 एस.राधाकृष्णन पोस्ट डाक्टोरल फेलो, इतिहास विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

प्रोफेसर श्रीधर सर्वोत्तम जोशी का 'जोशी प्रभाव'

प्रो. सूर्य नारायण ठाकुर*

वर्ष 2015 की जनवरी में हमारे विश्वविद्यालय के इतिहास में दो विशिष्ट समारोह किये गये। 24 जनवरी को वसंत पंचमी के दिन से शताब्दी समारोह की शुरुआत हुई तथा दो दशक से भी अधिक समय के बाद विश्वविद्यालय परिवार के सदस्यों ने अपनी उपलब्धियों को दर्शाते हुए हजारों की संख्या में एकत्र होकर राजपूताना हास्टल से चलकर महिला महाविद्यालय होते हुए मधुवन तक मार्च किया। दूसरा समारोह 8 जनवरी से 12 जनवरी तक विश्वविद्यालय में स्पेक्ट्रोस्कोपी प्रयोगशाला की हीरक जयन्ती के अवसर पर एक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन का आयोजन कर मनाया गया। जब सन् 1939 में स्पेक्ट्रोस्कोपी प्रयोगशाला की स्थापना हुई उस समय रसायन विज्ञान में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिक प्रोफेसर श्रीधर सर्वोत्तम जोशी साइंस कालेज के प्रिंसिपल थे। उन्होंने न केवल वर्तमान की इस उत्कृष्ट प्रयोगशाला को शुरू करने में महती भूमिका निभायी बल्कि प्रकाश द्वारा अणु एवं परमाणु की संरचना एवं व्यवहार के अध्ययन की एक अनोखी विधि का आविष्कार भी किया। इस लेख का उद्देश्य विश्वविद्यालय की गरिमा बढ़ाने में प्रोफेसर जोशी के महान योगदान से वर्ममान पीढ़ी के छात्र एवं अध्यापक समुदाय को अवगत कराना है।

शताब्दी समारोह की झांकी में विज्ञान संकाय का एक दृश्य

महामना पं0 मदन मोहन मालवीय जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना शिक्षा के एक सर्वश्रेष्ठ केन्द्र के रूप में किया था तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वे सतत् प्रयत्नशील रहते थे। शिक्षक के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिये वे उस समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों से सम्पर्क स्थापित करते तथा उन्हें राष्ट्रहित में अपने विश्वविद्यालय में आने का अनुग्रह करते। मालवीय जी की आभा एवं लगन से प्रभावित होकर अत्यन्त प्रतिभाशाली विद्वान अन्य सुविधा संपन्न संस्थानों की विलासितापूर्ण सेवा करने की अपेक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में मालवीय जी के सपनों को साकार करने में अपने को धन्य समझते थे। विज्ञान के क्षेत्र में प्रतिभाशाली भारतीय युवक एवं युवतियाँ बीसवीं सदी के चौथे दशक तक उच्च शिक्षा के लिये यूरोप और विशेष रूप से इंग्लैंड जाते थे जहाँ से वापस आते ही उन्हें विभिन्न प्रकार के सरकारी संस्थानों में उच्च पद मिल जाया करते थे। मालवीय जी अपने सूचना सूत्रों से प्राप्त जानकारी के आधार पर ऐसे प्रतिभाशाली वैज्ञानिकों से भारत पहुँचने पर सम्पर्क करने वाले प्रथम व्यक्ति होते थे।

स्पेक्ट्रोस्कोपी हीरक जयन्ती समारोह के अवसर पर
विश्वविद्यालय के कुलपति द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का उद्घाटन

डाक्टर शान्ति स्वरूप भटनागर जब सन् 1921 में यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन से रसायन विज्ञान में डी.एससी. की डिग्री प्राप्त करने के बाद भारत लौटे तो उन्होंने मालवीय जी के आग्रह को सहर्ष स्वीकार करते हुए उस समय के सेन्ट्रल हिन्दू कालेज में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर के पद को गौरवान्वित किया। प्रोफेसर भटनागर को रसायन विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट जानकारी थी तथा चुम्बकीय रसायन, फोटो रसायन एवं कोलायड के क्षेत्र में वे विश्व के सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिकों में से एक थे। अपने 1921 से 1923 के कार्यकाल के दौरान प्रोफेसर भटनागर ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को बहुत कुछ दिया। विश्वविद्यालय का कुलगीत ''मधुर मनोहर अतीव सुन्दर, यह सर्व विद्या की राजधानी'' की रचना से लेकर विज्ञान के विविध विषयों में रीसर्च की परम्परा प्रोफेसर भटनागर की ही देन है। रसायन विज्ञान तो उच्च शिक्षा एवं रीसर्च के क्षेत्र में भारत के विश्वविद्यालयों की अगली कतार में आ खड़ा हुआ।

*भूतपूर्व अध्यक्ष, भौतिकी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

प्रो0 श्रीधर सर्वोत्तम जोशी (1898-1984)

श्रीधर सर्वोत्तम जोशी ने वर्ष 1921 में फर्गुसन कालेज पुणे से बी.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी जो उस समय बम्बई विश्वविद्यालय के अन्तर्गत था। प्रोफेसर भटनागर की प्रसिद्धि से प्रभावित युवा जोशी ने एम.एससी. की उच्च शिक्षा के लिये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपना नामांकन कराया तथा शीघ्र ही अपनी प्रायोगिक प्रतिभा से अपने शिक्षकों के प्रिय पात्र बन गये। 1923 में एम.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण करते करते युवा जोशी की प्रसिद्धि मालवीय जी तक पहुँची और उन्होंने इस प्रतिभाशाली छात्र से अपने विश्वविद्यालय में शिक्षक बनने का वचन ले लिया। जब डाक्टर जोशी 1928 में यूनिवर्सिटी कालेज लन्दन से रसायन विज्ञान में डी.एससी. की डिग्री प्राप्त करने के बाद भारत लौटे तो मालवीय जी ने उन्हें रसायन विज्ञान के प्रोफेसर पद पर आसीन कर दिया तथा प्रोफेसर जोशी विश्वविद्यालय की गरिमा में लगातार वृद्धि करते हुए 1959 तक इस पद को सुशोभित करते रहे। विज्ञान की शिक्षा देने वाले विभागों में विद्यार्थियों की संख्या में लगातार वृद्धि को देखते हुए विश्वविद्यालय प्रशासन ने 1935 में साइंस कालेज की स्थापना की। प्रोफेसर जोशी ने 1938 में साइंस कालेज के तीसरे प्रिंसिपल के रूप में विश्वविद्यालय में विज्ञान के शिक्षण एवं रीसर्च की दिशा निर्देशन का गुरुतर कार्यभार संभाला तथा अपने रिटायरमेंट तक इसका सफलता पूर्वक संचालन करते रहे। प्रिंसिपल के रूप में उन्होंने साइंस कालेज के विभिन्न विभागों में उत्कृष्ट शिक्षण के लिए प्रयोगशालाओं को अत्याधुनिक सुविधा से संपन्न कराने के साथ रीसर्च प्रयोगशालाओं की स्थापना करने का अतिमहत्वपूर्ण कार्य किया। प्रिंसिपल जोशी ने 1939 में डाक्टर असुन्डी का भौतिकी के प्रोफेसर पर चुनाव कर स्पेक्ट्रोस्कोपी प्रयोगशाला की स्थापना की जो इस वर्ष अणु, परमाणु एवं लेजर के उत्कृष्ट केन्द्र के रूप में अपनी हीरक जयन्ती मना रहा है। सन् 1940 के दशक में स्पेक्ट्रोस्कोपी के कई शोधकर्ताओं ने प्रकाश द्वारा अणुओं पर अनुसंधान में 'जोशी प्रभाव' का प्रयोग किया। 1970 के दशक में विभिन्न तरंगदैर्घ्य के प्रकाश उत्पन्न करने वाले लेजर स्रोत के विकास के बाद 'जोशी प्रभाव' का उपयोग लेजर आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी के रूप में बहुत प्रभावशाली रहा है। इस लेख में हम प्रोफेसर जोशी के रीसर्च एवं व्यक्तित्व के साथ ही आधुनिक समय में लेजर आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी का संक्षिप्त विवरण भी प्रस्तुत करेंगे।

विद्युत धारा एवं जोशी प्रभाव

जोशी प्रभाव या 'जोशी इफेक्ट' गैस में विद्युत धारा के प्रवाह से संबंधित है, अतः इसे समझने के लिये बिजली की खोज एवं उपयोग के बारे में कुछ मूलभूत जानकारी रखना जरूरी है। बहुत प्राचीन समय से लोग बादलों की गड़गड़ाहट के बीच आकाशीय बिजली की चमक से भली-भाँति परिचित थे। आकाशीय बिजली के पृथ्वी की सतह के संपर्क में आने पर जीव तथा वनस्पति के जल जाने का खतरा रहता है। इस प्रकार आम आदमी के लिए विद्युत एक दैवी शक्ति या आपदा के रूप में डर उत्पन्न करने वाली चीज थी। लोग इस बात से भी परिचित थे कि शीशे की छड़ को या सर के बालों को सिल्क के टुकड़े से रगड़ने पर शीशे की छड़ तथा सर के बाल विद्युत से आवेशित हो जाते हैं। सर के बालों को सिल्क से रगड़ने के दौरान स्पार्क की सी चमक दिखायी पड़ती है तथा शीशे की छड़ छोटे-छोटे कागज के टुकड़ों को आकर्षित करने लगती है। इस प्रकार की विद्युत को स्थिर विद्युत का नाम दिया गया मगर आकाशीय विद्युत से इसके सम्बन्ध के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।

18वीं सदी के आरम्भ में फाँस तथा अमेरिका के कुछ जिज्ञासु लोगों ने आकाशीय विद्युत के बारे में जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रयोग करना शुरू किया था। इस कड़ी में अमेरिका के बेन्जामिन फैंकलिन का नाम सर्व प्रमुख है। बेन्जामिन फैंकलिन का जन्म सन् 1706 में हुआ था तथा वे अपने समय के सर्वाधिक प्रसिद्ध अमेरिकन एवं दुनिया के सर्वकालीन महान विभूतियों में से एक हैं। वे पेशे से प्रिन्टर थे तथा प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने वाले वैज्ञानिक के रूप में उन्होंने अपनी पहचान बनायी थी। उन्होंने न केवल संयुक्त राज्य अमेरिका को एक राष्ट्र के रूप में स्थापित करने में अहम भूमिका निभाई बल्कि वहाँ के निवासियों में एक नई विचारधारा एवं कार्यपद्धति का भी विकास किया जिसकी वजह से अमेरिका आज एक अत्यन्त समृद्ध राष्ट्र है। बेन्जामिन फैंकलिन ने वैज्ञानिक शोध द्वारा मानव जीवन के लिए उपयोगी एवं कल्याणकारी उपकरणों के निर्माण की परम्परा की नींव डाली जिसे थॉमस एडिसन एवं ग्राहम बेल ने आगे बढ़ाया तथा आज के अमेरिकन वैज्ञानिक भी उसी परम्परा का अनुसरण करते दिखाई देते हैं। जून 1752 में बेन्जामिन फैंकलिन ने अपने 21 वर्षीय पुत्र की सहायता से प्रयोग करके सिल्क की बनी हुई पतंग को उड़ाते हुए बादलों के सम्पर्क में लाकर आकाशीय विद्युत को अपनी प्रयोगशाला के उपकरणों में एकत्र किया। उन्होंने अपने शोध के द्वारा न केवल आकाशीय विद्युत और स्थिर विद्युत की एकरूपता की पहचान की बल्कि यह सत्य भी स्थापित किया कि आकाशीय विद्युत को विद्युत धारा के रूप में बादलों से जमीन पर लाया जा सकता है।

विद्युत धारा पर सर्वाधिक प्रयोग करने तथा मानव जीवन में बिजली के उपयोग के लिये जिम्मेदार अगर किसी एक वैज्ञानिक का नाम लेना हो तो वह होंगे माइकेल फैराडे। 1791 में जन्में माइकेल की स्कूली शिक्षा गरीबी की वजह से अधूरी रही मगर 14 वर्ष की उम्र में बुक बाइन्डर सहायक के रूप में काम करते हुए उन्होंने स्वाध्याय द्वारा अपना ज्ञानवर्द्धन किया। इसी दौरान वे उस समय के महान रसायन विज्ञानी हम्फे डेबी के सम्पर्क में आये जिनके साथ काम करते हुए उनकी पहचान एक रसायन वैज्ञानिक के रूप में हुई। वास्तव में माइकेल फैराडे एक प्रकृति विज्ञानी अथवा नेचुरल फिलासफर थे तथा विज्ञान के अब तक के इतिहास में वे अकेले सबसे अधिक प्रयोग सम्पादित करने वाले वैज्ञानिक हुए हैं। विद्युत धारा के रासायनिक प्रभावों के अलावा उन्होंने विद्युत के चुम्बकीय प्रभावों का गहन अध्ययन किया जिसके आधार पर डाइनेमो, ट्रांसफार्मर तथा विद्युत मोटर के आविष्कार संभव हुए। सन् 1831 से 1835 के बीच

ISSN 2231 - 2455

फैराडे ने अति निम्नदाब पर शीशे की नलिका में स्थित वायु में बिजली के प्रवाह का अध्ययन किया। इन प्रयोगों के लिये बन्द तथा निर्वातित नलिका के भीतर दोनों किनारों पर धातु के इलेक्ट्रोड लगे थे जिनके बीच 1000 वोल्ट तक का वैद्युत विभव लगाया जा सकता था। शीशे की नलिका में स्थित वायु से विद्युत प्रवाहित होने पर काली पट्टी जैसे क्षेत्रों द्वारा अलग किये हुये विभिन्न लम्बाई के प्रकाशित क्षेत्र नलिका की पूरी लम्बाई में फैल जाते थे जिनका आकार तथा चमक वायु के दाब पर निर्भर होते थे। फैराडे ने गैस नली से उत्सर्जित प्रकाश का नामकरण ग्लो डिस्चार्ज किया तथा यह पाया कि गैस का दाब क्रमशः कम करने पर प्रकाश निकलना बन्द हो जाता है मगर विद्युत धारा फिर भी प्रवाहित होती रहती है। इस स्थिति का नामकरण उन्होंने 'अदीप्त धारा' किया। 1858 में प्लकर ने 0.01 मिलिमीटर पारे के दाब पर कैथोड किरणों को निकलते देखा जो शीशे की नलिका की दीवार पर पड़ने के बाद हरे रंग का प्रकाश उत्पन्न करती थीं। बाद के प्रयोगों से यह पता चला कि डिस्चार्ज नलिका में कोई भी गैस भरने पर एक ही प्रकार की कैथोड किरणें निकलती हैं तथा 1891 में स्टोनी ने इन किरणों की पहचान ऋण आवेशित विद्युत कणों के रूप में किया और इस कण का नाम इलेक्ट्रान रखा। 1897 में जोसेफ जान थामसन ने इलेक्ट्रान के आवेश एवं द्रव्यमान का विस्तृत अध्ययन कर यह सिद्ध किया कि सभी तत्वों के परमाणु की संरचना का इलेक्ट्रान एक मूल कण है जिसके लिए उन्हें 1906 के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। बीसवीं सदी के प्रथम चार दशकों तक डिस्चार्ज नलिकाओं का प्रयोग विभिन्न प्रकार के परमाणुओं एवं अणुओं के स्पेक्ट्रम प्राप्त करने तथा उनके द्वारा संचालित विद्युत धारा के अध्ययन के लिये किया जाता रहा। इसी क्रम में प्रोफेसर जोशी ने 1929 से 1943 के बीच काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में किये गये प्रयोगों के आधार पर 'जोशी इफेक्ट' का प्रतिपादन किया जिसे निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

"जब किसी डिस्चार्ज नलिका पर बाहरी प्रकाश डाला जाता है तो उसमें प्रवाहित होने वाली विद्युत धारा के मान में धनात्मक अथवा ऋणात्मक परिवर्तन हो जाता है।"

प्रोफेसर जोशी की प्रयोगशाला

लन्दन में अपने डी.एससी. शोध के दौरान प्रोफेसर जोशी ने डिस्चार्ज नलिकाओं का प्रयोग गैसीय अवस्था में सम्पन्न होने वाली रासायनिक क्रियाओं का अध्ययन करने के लिये किया था। उन्होंने विशेष रूप से नीरव या साइलेंट विद्युत डिस्चार्ज द्वारा नाइट्रस आक्साइड के विघटन का विस्तृत अध्ययन किया तथा अपने प्रयोगों के परिणाम 1927 से 1929 के बीच ट्रांजैक्सन्स फैराडे सोसायटी के करीब आधे दर्जन शोध पत्रों में प्रकाशित किया। इसमें रासायनिक क्रिया की गति तथा उस पर वाह्य गैसों के प्रभाव के अलावा रासायनिक क्रिया के दौरान विद्युत धारा में हुए परिवर्तन के बारे में भी अति महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की गयी थी।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपने आगमन के साथ ही प्रोफेसर जोशी ने रसायन विभाग में यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन की तर्ज पर प्रयोगशाला स्थापित करना शुरू कर दिया था। प्रोफेसर जोशी ने लन्दन में गैसीय अवस्था में रासायनिक क्रियाओं का अध्ययन करने के लिए डिस्चार्ज नलिका का उपयोग किया था। उनमें से एक रासायनिक क्रिया में हाइड्रोजन तथा क्लोरीन गैसों के संयोग से हाइड्रोजन क्लोराइड गैस बनने की गति का अध्ययन भी शामिल था। जब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की अपनी प्रयोगशाला में उन्होंने इस अनुसंधान को जारी रखने की मंशा अपने वरिष्ठ सहयोगियों के समक्ष रखी तो बहुतेरे लोगों ने ऐसा न करने का सलाह दिया। इसका कारण हाइड्रोजन तथा क्लोरीन गैसों का प्रकाश की उपस्थिति में विस्फोटक होना था। अगर प्रकाश के साथ-साथ विद्युत की भी उपस्थिति हो तो इस रासायनिक क्रिया में विस्फोट होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है। प्रोफेसर जोशी की प्रयोग करने की अपनी क्षमता एवं कुशलता पर इतना विश्वास था कि अपने वैज्ञानिक मित्रों की नेक सलाह के बावजूद उन्होंने उपरोक्त अनुसंधान को आगे बढ़ाने का फैसला किया। रासायनिक क्रियाः $H_2 + CI_2 \rightarrow 2HCI$ जब होने लगती है तो डिस्चार्ज नलिका में अधिक इलेक्ट्रान बन्धुता वाली CI_2 की जगह कम इलेक्ट्रान बन्धुता वाली HCI की प्रचुरता बढ़ जाती है। इस जानकारी के अनुसार रासायनिक क्रिया प्रारम्भ होने से पहले की अपेक्षा बाद में डिस्चार्ज नलिका के भीतर इलेक्ट्रान की प्रचुरता बढ़ने से उसकी विद्युत धारा में बढ़ोतरी होनी चाहिए। इसके विपरीत विद्युत धारा के मान में कमी दर्ज की गयी तथा डिस्चार्ज के भीतर अति क्षीण तीव्रता का लाल प्रकाश दिखाई पड़ा। इस अध्ययन द्वारा किसी निश्चित निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए शुद्ध क्लोरीन गैस में विद्युत धारा प्रवाहित कर डिस्चार्ज उत्पन्न किया गया तथा नलिका पर बाहर से प्रकाश डाला गया। बाह्य प्रकाश के पड़ते ही डिस्चार्ज नलिका में विद्युत धारा कम हो गयी तथा प्रकाश की तीव्रता बढ़ाने पर एक ऐसी स्थिति आयी कि विद्युत धारा शून्य हो गयी। जब बाह्य प्रकाश बन्द कर दिया गया तो विद्युत धारा पूर्ववत अंधेरी अवस्था के बराबर हो गयी। इस प्रयोग से यह सिद्ध हो गया कि अंधेरी हालत में डिस्चार्ज नलिका में प्रवाहित होने वाली विद्युत धारा बाह्य प्रकाश की एक खास तीव्रता होने पर शून्य हो जाती है। जोशी प्रभाव की ऋणात्मक Δi की इस खोज ने उस समय के भारतीय वैज्ञानिक जगत में काफी हलचल मचायी। प्रोफेसर जोशी ने करीब दस वर्ष के अनवरत परिश्रम के बाद तथा बहुत विचार विमर्श के बाद अपने अनुसंधान के परिणाम सन् 1939 में एक संक्षिप्त पत्र के रूप में [1] तथा एक वर्ष बाद सन् 1940 में पूरे विवरण के साथ [2] भारत के अग्रगण्य जर्नल करेन्ट साइन्स में प्रकाशित किया। भारतीय वैज्ञानिकों के समक्ष उन्होंने 1943 की भारतीय साइन्स कॉग्रेस अधिवेशन में रसायन विज्ञान के अध्यक्ष पद से बोलते हुये 'जोशी प्रभाव' का वर्णन किया था। प्रोफेसर जोशी ने वाह्य प्रकाश द्वारा डिस्चार्ज नलिका में विद्युत धारा के घटाव की निम्नलिखित त्रिस्तरीय विवेचना प्रस्तुत की थी :

- डिस्चार्ज की दशा में शीशे की नलिका की भीतरी सतह पर उत्तेजित अवस्था के परमाणु आयन एवं इलेक्ट्रानों की एक तह जम जाती है।
- शीशे की सतह पर जमी क्रियाशील या एक्टिव तह द्वारा उत्सर्जित इलेक्ट्रानों की वजह से Δi धनात्मक होती है।
- डिस्चार्ज नलिका में उपस्थित अधिक इलेक्ट्रान बन्धुता के अणुओं एवं परमाणुओं द्वारा स्वतंत्र इलेक्ट्रानों को पकड़ लिये जाने से Δi ऋणात्मक होती है।

जोशी प्रभाव में विद्युत धारा का मापन

प्रोफेसर जोशी द्वारा प्रयुक्त विभिन्न प्रकार की डिस्चार्ज नलिकायें चित्र 1 में प्रदर्शित की गयीं हैं। चित्र 1A में अंग्रेजी अक्षर U के आकार की

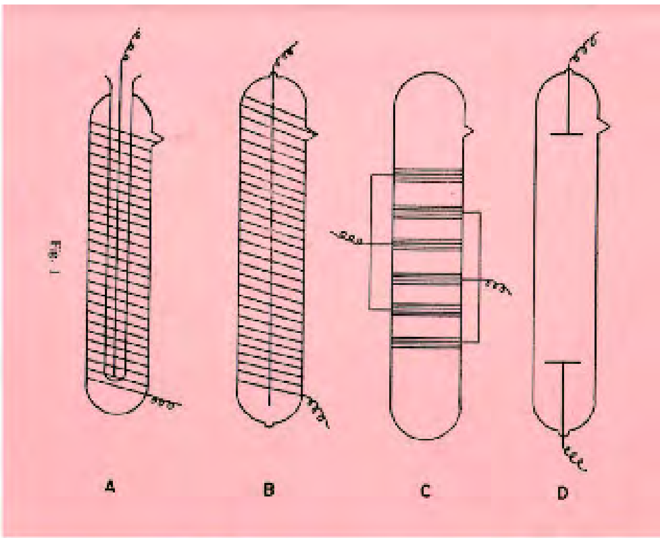

चित्र 1 : जोशी प्रभाव के अध्ययन में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार की डिस्चार्ज नलिकायें

समेन्स कम्पनी की ओजोनाइजर डिस्चार्ज नलिका में दोनों इलेक्ट्रोड नलिका के बाहर हैं जबकि चित्र 1B की बेलनाकार गीगर मूलर काउन्टर में प्रयुक्त होने वाली नलिका में एक इलेक्ट्रोड नलिका के अन्दर लगा है। चित्र 1C में एक अन्य डिजाइन की बाह्य इलेक्ट्रोड वाली नलिका दिखाई गयी है तथा 1D में गिसलर डिस्चार्ज नलिका प्रदर्शित है जिसमें धातु के समान्तर पट्टिका वाले आन्तरिक इलेक्ट्रोड लगे हैं। इन सभी डिस्चार्ज नलिकाओं की विशेषता है कि कम दाब की गैस भरने के बाद इन्हें सील कर दिया गया है। इनके अतिरिक्त ऐसी डिस्चार्ज नलिकायें भी प्रयुक्त की जाती थीं जिनको निर्वात उत्पन्न करने वाले पम्प से जोड़कर रखा जाता था जिसमें गैस का दाब इच्छानुसार कम या अधिक किया जा सकता था।

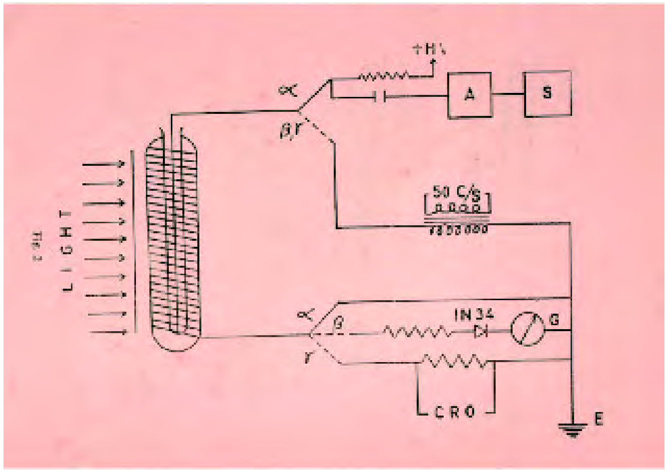

चित्र 2 : जोशी प्रभाव के लिए विद्युत धारा मापन की तीन विधियाँ

जोशी प्रभाव के अध्ययन के लिये तीन प्रकार से मापन किये जाते थे जिन्हें समन्वित रूप से चित्र 2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है। काउन्टर द्वारा मापन के लिए विद्युत धारा का मार्ग α से होकर जाता है जबकि गैल्वानोमीटर द्वारा मापन के लिये यह मार्ग β से तथा आसिलोस्कोप द्वारा मापन के लिए γ से दिखाया गया है। चित्र 1A एवं 1B में प्रदर्शित डिस्चार्ज नलिकाओं को उपयोग में लाते समय उनके भीतरी इलेक्ट्रोड को स्थायीकृत विद्युत सप्लाई के धनात्मक उच्च वोल्टेज से जोड़ दिया जाता था तथा दूसरे इलेक्ट्रोड को ग्राउन्ड कर दिया जाता था। डिस्चार्ज नलिका पर प्रकाश पड़ने तथा न पड़ने दोनों ही स्थितियों में उच्च धनात्मक सिरे से जुड़े कैपिसिटर से छनकर निकलने वाली विद्युत धारा का मापन काउन्टर ए में एम्प्लीफायर A द्वारा प्रवर्धित करने के बाद होता था। चित्र 1A, 1B, 1C में प्रदर्शित डिस्चार्ज नलिकाओं में उत्पन्न विद्युत धारा का गैल्वानोमीटर द्वारा मापन करते समय उनके इलेक्ट्रोड को कम फ्रिक्वेन्सी के ट्रान्सफार्मर से जोड़ दिया जाता था और सिल्वेनिया क्रिस्टल IN34 से रेक्टिफाइड धारा गैल्वानोमीटर में प्रवाहित होती थी। आसिलोस्कोप द्वारा विद्युत धारा की शक्ल मापन के समय कार्बन के उचित प्रतिरोधक का उपयोग करके उसके तरंग की आकृति तथा कला को सन्तुलित रखा जाता था।

प्रकाश की उपस्थिति में मापित विद्युत धारा i_L तथा प्रकाश की अनुपस्थिति में मापित धारा i_D होने पर जोशी प्रभाव का मान $\Delta i = i_L - i_D$ से प्रदर्शित किया जाता था। जोशी प्रभाव को प्राप्त करने के लिए 15 सेन्टीमीटर लम्बी डिस्चार्ज नलिका में 30 डिग्री सेन्टीग्रेड पर पारे के 120 मिलिमीटर दाब पर क्लोरीन गैस भरी गयी जिसे 30 सेन्टीमीटर की दूरी पर रखे गये 200 वाट तथा 220 वोल्ट वाले टंग्स्टन फिलामेंट के बल्ब से प्रकाशित किया जा सकता था। डिस्चार्ज नलिका के दोनों इलेक्ट्रोड के बीच लगे विद्युत विभव का मान 4 हजार वोल्ट से बढ़ाकर 8 हजार वोल्ट तक करने में जोशी प्रभाव प्रदर्शित करने वाली विद्युत धारा Δi का मान पहले धनात्मक और बाद में ऋणात्मक पाया गया। प्रकाश की सबसे कम तीव्रता के लिए जिस विद्युत विभव पर जोशी प्रभाव धनात्मक से ऋणात्मक होता था उसे 'प्रतिलोमन विभव' Vi का नाम दिया गया। डिस्चार्ज नलिका पर लगे विद्युत विभव को बढ़ाने पर प्रकाश की सबसे कम तीव्रता के लिए एक ऐसी स्थिति आती थी जिसमें प्रकाश की उपस्थिति में नलिका में डिस्चार्ज होता था और ज्योंही नलिका पर प्रकाश पड़ना बन्द होता था त्योंही डिस्चार्ज रुक जाता था। यह विभव Vm प्रतिलोमन विभव Vi से कम होता था। यह भी देखा गया कि अगर डिस्चार्ज नलिका पर लगे विद्युत विभव का मान Vm और Vi के बीच स्थिर रखते हुए उस पर पड़ने वाले प्रकाश की तीव्रता में परिवर्तन किया जाये तो विद्युत धारा Δi में धनात्मक से ऋणात्मक या इसके विपरीत बदलाव पाया जाता था। इन प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया कि कुछ खास परिस्थितियों में बिना बाहरी प्रकाश की उपस्थिति के नलिका के दोनों इलेक्ट्रोड के बीच विद्युत विभव विद्यमान होने के बावजूद भी उसमें डिस्चार्ज नहीं संभव था।

1950 तथा 1960 के दशक में बहुत से वैज्ञानिकों ने जोशी प्रभाव पर कई प्रकार के योगदान किये [3-8] मगर धनात्मक एवं ऋणात्मक जोशी प्रभाव के दृष्टिकोण से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रोफेसर खस्तगीर की प्रयोगशाला का कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है [4]। इस कार्य में प्रयुक्त उपकरण चित्र 3 में दिखाया गया है जहाँ चित्र 1 में प्रदर्शित डिस्चार्ज नलिका C का प्रयोग हुआ है जिसमें केवल दो वाह्य इलेक्ट्रोड

8.5 सेन्टीमीटर की दूरी पर लगे हैं। डिस्चार्ज नलिका की लंबाई 15 सेन्टीमीटर तथा व्यास 18 सेन्टीमीटर था और उसमें रखी आयोडिन गैस का 40 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम पर दाब 3 मिलिमीटर था।

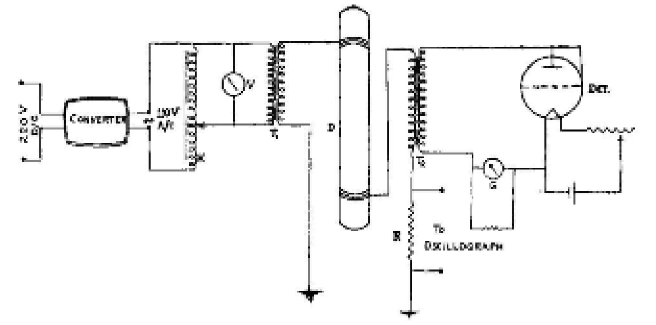

चित्र 3 : बाहरी इलेक्ट्रोड वाली डिस्चार्ज नलिका में उच्च ए सी वोल्टेज पर गैल्वानोमीटर एवं आसिलोस्कोप द्वारा जोशी प्रभाव मापन में प्रयुक्त उपकरण : डिस्चार्ज नलिका (D) वोल्टेज परिवर्तक (K) वोल्टमीटर (V) उच्च वोल्टेज ए एफ ट्रान्सफार्मर (ऊ1) डिस्चार्ज विद्युत धारा मापन के लिए ए एफ ट्रान्सफार्मर (T2) वाल्व अथवा जर्मेनियम क्रिस्टल डिटेक्टर (DET) गैल्वानोमीटर (G)

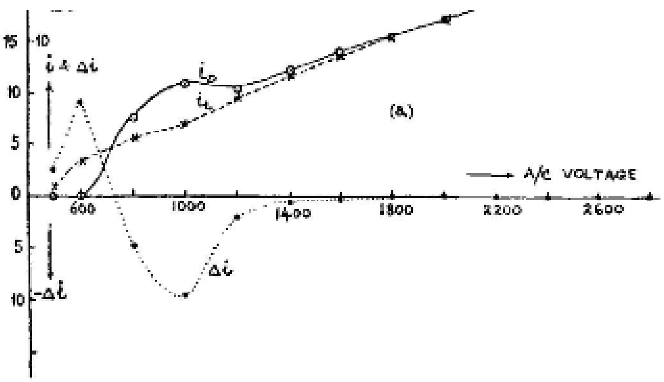

चित्र 4 : जोशी प्रभाव में विद्युत विभव पर आश्रित धनात्मक एवं ऋणात्मक विद्युत धारा Δi

प्रोफेसर खस्तगीर एवं सेठी के प्रयोग में मापी गयी विद्युत धारा i_L, i_D एवं जोशी प्रभाव के कारण विद्युत धारा में परिवर्तन $\Delta i = i_L - i_D$ चित्र 4 में दिखाया गया है। इस प्रयोग में डिस्चार्ज वोल्टेज 1800 वोल्ट से ऊपर रखने पर कोई जोशी प्रभाव नहीं पाया गया, 700 और 1800 वोल्ट के बीच ऋणात्मक जोशी प्रभाव तथा 500 और 700 वोल्ट के बीच धनात्मक जोशी प्रभाव पाया गया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उपरोक्त प्रयोग में आयोडिन वाष्प के लिए 'प्रतिलोमन विभव' Vi 700 वोल्ट है।

जोशी प्रभाव की विशेषताएँ

- जोशी प्रभाव विद्युत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम की इन्फ्रारेड से लेकर गामा तरंगों तक सभी प्रकार की किरणों के लिए संभव है।
- जोशी प्रभाव का धनात्मक से ऋणात्मक परिवर्तन केवल बाह्य प्रकाश की तीव्रता बदलने से संभव है।
- जोशी प्रभाव का मान वाह्य प्रकाश के उच्च विभव वाले इलेक्ट्रोड के पास पड़ने पर सर्वाधिक तथा निम्न विभव वाले इलेक्ट्रोड के पास पड़ने पर सबसे कम होता है। इन दोनों क्षेत्रों के बीच में इसका मापन अत्यधिक कठिन है लेकिन एक्स-रे एवं गामा-रे के लिए इसे डिस्चार्ज नलिका के सभी भागों में आसानी से मापा जा सकता है।
- जोशी प्रभाव का मान तथा चिन्ह दोनों ही इलेक्ट्रोड की सतह की परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं जिससे यह धारणा बनती है कि यह प्रभाव गैस एवं इलेक्ट्रोड के अन्तरापृष्ठ पर भी निर्भर है।
- डिस्चार्ज नलिका का तापक्रम बढ़ाने पर धनात्मक प्रभाव के मान में बढ़ोतरी होती है मगर ऋणात्मक प्रभाव घट जाता है।

जोशी प्रभाव एवं लेजर आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी

सन् 1960 में लेजर के आविष्कार की वजह से प्रकाश भौतिकी के शोध क्षेत्र में भारी उछाल देखने को मिला। लेसर प्रकाश का शुद्ध एकवर्णी होना तथा इसकी अत्यधिक तीव्रता उन क्षेत्रों के लिए वरदान साबित हुई जिनमें साधारण प्रकाश स्रोतों द्वारा प्रकाशजनित प्रभाव अतिशय क्षीण पाये गये थे। इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण भारतीय महान वैज्ञानिक चन्द्रशेखर वेंकट रामन का 1928 में खोजा गया रामन प्रभाव है। रामन प्रभाव में अणुओं से प्रकीर्णन के लिए एकवर्णी प्रकाश की जरूरत होती है और साधारण प्रकाश स्रोत से प्राप्त एकवर्णी प्रकाश की तीव्रता बहुत ही कम होती है। इसका फल यह हुआ कि अणुओं का रामन प्रकीर्णन स्पेक्ट्रम प्राप्त करने में 24 से 72 घंटे तक का समय लग जाता था। 1950 के दशक तक वैज्ञानिकों में यह विचारधारा व्याप्त हो चली थी कि सैद्धांतिक तौर पर अपार संभावानायें होने के बावजूद रामन प्रभाव का उपयोग संभव नहीं था। आज लेजर प्रकाश द्वारा न केवल रामन स्पेक्ट्रम मात्र कुछ सेकेण्ड में प्राप्त हो जाता है बल्कि रासायनिक क्रियाओं से लेकर जीव विज्ञान तथा सभी प्रकार की इण्डस्ट्री से लेकर सेना एवं राष्ट्रीय सुरक्षा तक का शायद ही कोई क्षेत्र हो जो इसका उपयोग न करता हो। लेजर के आविष्कार का असर जोशी प्रभाव की प्रगति पर भी पड़ा मगर दुर्भाग्यवश इस प्रगति के दौरान प्रोफेसर जोशी का नाम गुम हो गया और वह आप्टोगैल्वानिक प्रभाव से महिमामंडित हो गया। वैज्ञानिकों के भारी समूह में स्पेक्ट्रोस्कोपी के विश्वविख्यात ज्ञाता आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जार्ज सीरीज अकेले व्यक्ति हैं जिन्होंने इस संदर्भ में सर्वप्रथम प्रोफेसर जोशी द्वारा किये गये शोध का उल्लेख किया है [9]। पेनींग ने 1928 में प्रयोगों के दौरान पाया था कि नियान एवं आर्गन गैस के मिश्रण वाली डिस्चार्ज नलिका में डिस्चार्ज प्रारंभ करने के लिए लगने वाला विद्युत विभव उस नलिका पर एक बाहरी नियान गैस की डिस्चार्ज नलिका से पड़ने वाले प्रकाश की उपस्थिति में बदल जाता था [10]। नियान एवं आर्गन गैस के मिश्रण वाली डिस्चार्ज नलिका में डिस्चार्ज प्रारंभ करने के लिए विद्युत विभव का यह अन्तर चित्र 4 में दिखाने की कोशिश की गयी है। इस प्रकार से प्रकाश जनित विद्युत डिस्चार्ज में परिवर्तन को 'आप्टोगैल्वानिक प्रभाव' कहा जाता है।

Ne + Ar Discharge Tube
Ne Discharge Tube

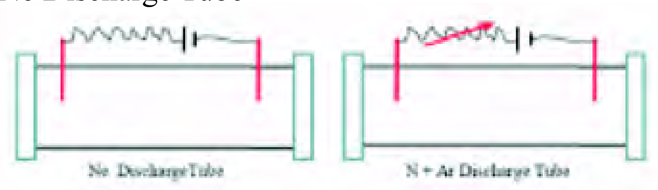

चित्र 5 : बायीं ओर की डिस्चार्ज नलिका से उत्सर्जित प्रकाश पड़ने की स्थिति में दाहिनी नलिका में डिस्चार्ज प्रारंभ होने के लिए आवश्यक विद्युत विभव का मान बदल जाता है।

सन् 1976 से 1978 के बीच अमेरिका के वाशिंग्टन शहर में तब के नेशनल ब्यूरो ऑफ स्टैण्डर्स (वर्तमान NIST) के वैज्ञानिकों ने डाई लेजर से विभिन्न तरंगदैर्घ्य के एकवर्णी प्रकाश के प्रभाव का गैसीय डिस्चार्ज पर सघन अध्ययन किया [11, 12]। आधुनिक इलेक्ट्रानिक उपकरणों की मदद से डिस्चार्ज विद्युत धारा में होने वाले अति क्षीण परिवर्तन का मापन संभव हो सका। जोशी प्रभाव की ही भाँति इन प्रयोगों में भी धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों ही तरह के परिवर्तन पाये गये। नियान, आर्गन तथा अन्य गैसों के स्पेक्ट्रम से प्राप्त अपार आँकड़ों के आलोक में विस्तृत विवेचना की गयी तथा इसे आप्टोगैल्वानिक प्रभाव जनित स्पेक्ट्रोस्कोपी का नाम दिया गया। डिस्चार्ज नलिका में स्थित गैसीय परमाणुओं (या अणुओं) द्वारा आप्टोगैल्वानिक प्रभाव में विद्युत धारा का बढ़ना अथवा घटना इस बात पर निर्भर करता है कि प्रकाश द्वारा इनके किस ऊर्जा स्तर में जनसंख्या बढ़ती अथवा घटती है। अब तक के अनुसंधान से यह सुनिश्चित हो गया है कि प्रकाश पड़ने पर डिस्चार्ज नलिका की विद्युत धारा में परिवर्तन होने का मुख्य कारण उससे विभिन्न ऊर्जा स्तरों में उपस्थित परमाणुओं तथा अणुओं द्वारा आपतित प्रकाश का अवशोषण ही होता है। जब परमाणु या अणु उचित तरंगदैर्घ्य के प्रकाश को अवशोषित कर अपने किसी उच्च ऊर्जा स्तर में पहुँचता है तो वह इस अतिरिक्त ऊर्जा को एक अथवा अधिक फोटान के उत्सर्जन द्वारा प्रकाश में परिवर्तित कर देता है या पुनः प्रकाश के अवशोषण द्वारा अथवा अन्य कणों से टक्कर के कारण आयनित हो जाता है। आयनन की यह संभावना उक्त उच्च ऊर्जा स्तर की स्थिति एवं उसके जीवनकाल पर निर्भर करती है। अगर प्रकाश के अवशोषण के बाद वाले ऊर्जा स्तर से आयनन की दर परमाणु के पहले वाले ऊर्जा स्तर से आयनन की दर से अधिक होती है तो प्रकाश के कारण डिस्चार्ज विद्युत धारा में धनात्मक तथा विपरीत स्थिति होने पर ऋणात्मक परिवर्तन होता है। लगातार तरंगदैर्घ्य बदलने की क्षमता वाले डाई लेजर के प्रयोग से उत्सर्जित प्रकाश के परमाणु द्वारा अवशोषण से उसका संक्रमण उसके किसी भी निम्न ऊर्जा स्तर से उच्च ऊर्जा स्तर में संभव है। चित्र 6 में परमाणु की निम्नतम ऊर्जा स्तर तथा दो उच्च दर्जा स्तर प्रदर्शित किये गये हैं जिसमें ऊर्जा का मान दायीं ओर तथा प्रत्येक ऊर्जा स्तर की परमाणु संख्या का घनत्व बायीं ओर दिखाया गया है।

एकवर्णी लेजर प्रकाश की उपस्थिति में परमाणुओं के रेजोनेन्ट अवशोषण के चलते Ei एवं Ej ऊर्जा स्तरों का जनसंख्या घनत्व अचानक बदल जाता है जिसका समय के साथ बदलाव एक बहुलीकरण घटक K द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। आप्टोगैल्वानिक प्रभाव में डिस्चार्ज

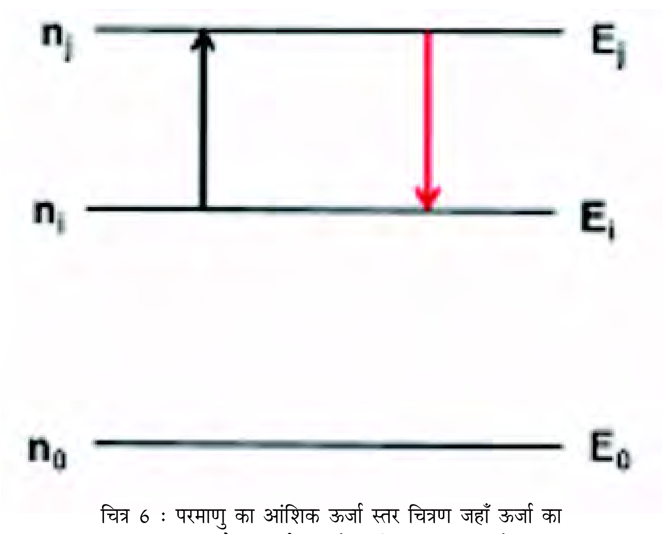

चित्र 6 : परमाणु का आंशिक ऊर्जा स्तर चित्रण जहाँ ऊर्जा का मान (E) तथा प्रत्येक ऊर्जा स्तर में तापीय साम्यावस्था में परमाणु संख्या का घनत्व (n) दिखाया गया है जहाँ ऊपर की ओर मुँह वाले तीर से अवशोषण एवं नीचे मुँह वाले तीर से उत्सर्जन द्वारा परमाणु का Ei और Ej के बीच संक्रमण प्रदर्शित किया गया है।

नलिका के प्लाज्मा की साम्यावस्था में हुए परिवर्तन को विद्युत सर्किट में जुड़े बाह्य अवरोधक R के दो सिरों के बीच उत्पन्न वोल्टेज परिवर्तन ΔV द्वारा वापस लाया जाता है जहाँ K का मान 1 होता है। आप्टोगैल्वानिक प्रभाव द्वारा उत्पन्न इस वोल्टेज परिवर्तन को निम्नलिखित समीकरण से व्यक्त किया जा सकता है।

$\Delta V = -\beta \Sigma \alpha i \Delta n$ (1)

जहाँ $\beta = (\delta K/\delta V)^{-1} > 0$ और $ai = \delta K/\delta ni$, $aj > ai$ यदि $Ej > Ei$ हो

विद्युत डिस्चार्ज की साम्यावस्था में सभी $\Delta ni = 0$ जिसकी वजह से $\Delta V = 0$ होता है। यदि यह मान लिया जावे कि डिस्चार्ज में स्थित परमाणुओं से क्षणिक एकवर्णी प्रकाश के फोटान के टक्कर का समय $t=0$ है तो ें और Ej के बीच परमाणुओं के प्रेरित संक्रमण की वजह से इनकी जनसंख्या घनत्व में परिवर्तन के बीच निम्नलिखित संबंध होते हैं।

$\Delta ni(0) = -Q(ni-nj)$ $\Delta ni(0) = -\Delta nj(0)$ और $\Delta nk = 0$ सभी अन्य ऊर्जा स्तरों के लिए जहाँ $k \neq i, j$ वाला संबंध लागू होता है।

यदि Ei और Ej के जीवनकाल क्रमशः τi और τj हों तो इन ऊर्जा स्तरों के जनसंख्या घनत्व में सामयिक परिवर्तन क्रमशः $\Delta ni(t) = \Delta ni(0)\exp(-t/\tau i)$ और $\Delta nj(t) = \Delta nj(0)\exp(-t/\tau j)$ होगा। अतः समीकरण 1 के आलोक में आप्टोगैल्वानिक प्रभाव द्वारा उत्पन्न बोल्टेज का सामयिक परिवर्तन निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है।

$\Delta V(t) = -\beta Q(ni-nj)[aj\exp(-t/\tau j) - ai\exp(-t/\tau i)]$ (2)

ऊर्जा स्तर Ei तथा Ej के जीवनकाल में अन्तर के कारण दो प्रकार के आप्टोगैल्वानिक प्रभाव संभव हैं। दोनों ऊर्जा स्तरों का जीवनकाल बराबर $(\tau i = \tau j = \tau)$ होने की स्थिति में $\Delta V(t) = -\beta Q(ni-nj)[aj-ai]\exp(-t/\tau) = [-ve]\exp(-t/\tau)$ क्योंकि $aj > ai$ है। अतः आप्टोगैल्वानिक प्रभाव के कारण विद्युत विभव (एवं धारा) में ऋणात्मक परिवर्तन होता है जो

ISSN 2231 - 2455

क्षणिक एकवर्णी लेजर के बंद होने पर अपने न्यूनतम मान पर पहुँचने के बाद धीरे-धीरे शून्य की ओर बढ़ता है जैसा चित्र 7 में दिखाया गया है। यदि ऊर्जा स्तर Ei का जीवनकाल Ej की अपेक्षा बहुत अधिक हो ($\tau i >> \tau j = \tau$) तो एकवर्णी लेजर प्रकाश पड़ने के तुरन्त बाद तो विद्युत विभव (एवं धारा) में ऋणात्मक परिवर्तन होता है जो थोड़े समय के बाद शून्य होकर धनात्मक हो जाता है तथा अपने उच्चतम मान पर पहुँचने के बाद धीरे-धीरे घटकर शून्य हो जाता है जैसा चित्र 7 में दिखाया गया है। इस प्रकार ऋणात्मक आप्टोगैल्वानिक प्रभाव तब देखा जाता है जब ($t << \tau j$) हो क्योंकि $\Delta V(t) = -\beta Q\ (ni\text{-}nj)[aj\text{-}ai]\ \exp(-t/\tau j) = [-ve]\ \exp(-t/\tau j)$ और धनात्मक दिखने के लिये ($t >> \tau i$) होना चाहिए क्योंकि तब $\Delta V(t) = -\beta\ Q(ni\text{-}nj)[0\text{-}ai\ \exp(-t/\tau i)] = [+ve]\ \exp(-t/\tau i)$ होता है।

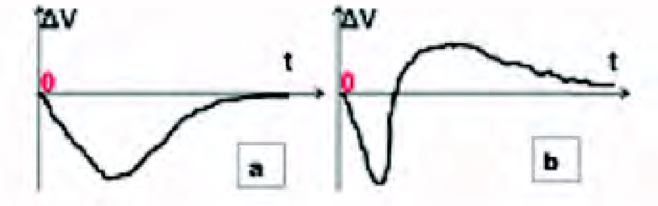

चित्र 7 : क्षणिक लेजर प्रकाश के बाद ऋणात्मक (a) एवं धनात्मक (b) आप्टोगैल्वानिक प्रभाव का समय के साथ क्रमिक विकास

नियान तथा आर्गन गैस की लेजर आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी

नियान गैस का आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम रिकार्ड करने के लिए प्रयोग की रूपरेखा चित्र 8 के माध्यम से दिखायी गयी है। ड13.। इसमें प्रयुक्त नियोडियम लेजर द्वारा पंपित कुछ नैनोसेकण्ड के क्षणिक डाई लेजर

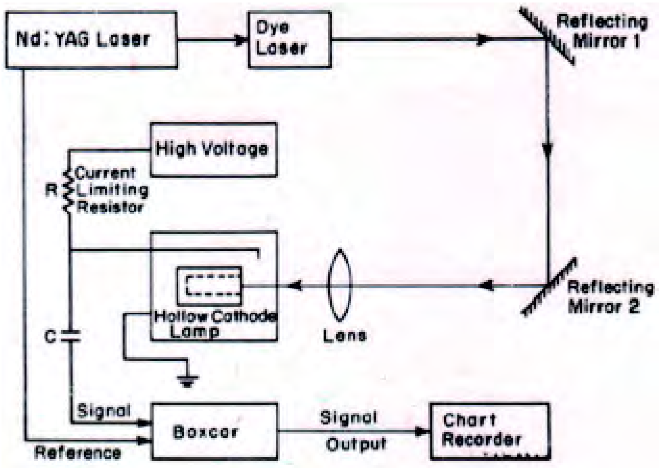

चित्र 8 हालो कैथोड वाले बल्ब के गैसीय डिस्चार्ज की लेजर आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी के लिये प्रयुक्त उपकरण

द्वारा उत्सर्जित एकवर्णी प्रकाश का विस्तार 500 से 540 नैनोमीटर (2000 से 18240 वेभनम्बर) तक था। क्षणिक उत्पन्न आप्टोगैल्वानिक सिग्नल को बाक्सकार में भेजा जाता है जहाँ क्षणिक लेजन से उत्सर्जित प्रकाश को आधार बनाकर उसके रिकार्डिंग में विलंब का समय स्थिर किया जाता है। बाक्सकार से उत्पन्न सिग्नल द्वारा आप्टोगैल्वान्कि स्पेक्ट्रम रिकार्ड किया जाता है।

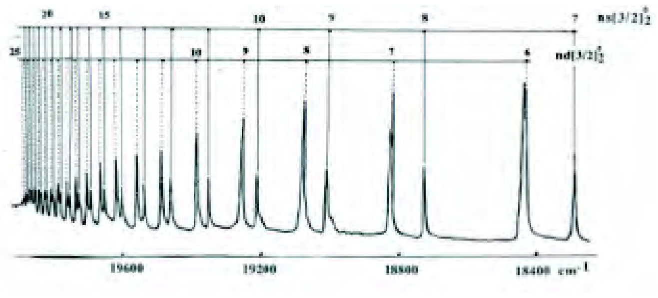

चित्र 9 : नियान परमाणु के उत्तेजित मेटास्टेबल ऊर्जा स्तर से 2 फोटान के अवशोषण द्वारा प्राप्त आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम की ns और nd रिडबर्ग शृंखला की स्पेक्ट्रमी रेखाएँ वेभनम्बर स्केल में प्रदर्शित

चित्र 9 में आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी विधि से नियान गैस के स्पेक्ट्रमी रेखाओं की रिडबर्ग शृंखला प्रदर्शित की गयी है जिसमें दो तरह की रेखायें साफ दिखती हैं। दोनों प्रकार की स्पेक्ट्रमी रेखाओं के लिए एक ही साझा मेटास्टेबल निम्न ऊर्जा स्तर होता है जो नियान जैसे जटिल परमाणु के लिए प्रयुक्त j-1 स्कीम में 3s[3/2]2 द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। लेजर जनित 2 फोटान अवशोषण में शामिल सभी उच्च ऊर्जा स्तर का जीवनकाल निम्न ऊर्जा स्तर की अपेक्षा अधिक होता है जिसकी वजह से चित्र 7a की भाँति आप्टोगैल्वानिक प्रभाव ऋणात्मक होता है।

आर्गन गैस के आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम की रिकार्डिंग के लिए नियान गैस की ही भाँति डाई लेजर प्रयुक्त किया गया जिसका वेभनम्बर प्रसार 13520 से 16520 तक था [14]। चित्र 10 में प्रदर्शित आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम से स्पष्ट है कि कुछ रेखायें पतली तथा कुछ मोटी हैं। लेजर प्रकाश पड़ने के 2 माइक्रोसेकण्ड बाद की रिकार्डिंग में पतली तथा मोटी दोनों प्रकार की स्पेट्रमी रेखाओं में ऋणात्मक आप्टोगैल्वानिक प्रभाव देखने को मिलता है जबकि 13 माइक्रोसेकेण्ड बाद पतली रेखायें ऋणात्मक एवं मोटी धनात्मक आप्टोगैल्वानिक प्रभाव प्रदर्शित करती हैं। जैसा हम कह चुक हैं कि नियान के 2 फोटान आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम में शामिल उच्च ऊर्जा स्तर का जीवनकाल अधिक होने के कारण चित्र 7a के आलोक में आप्टोगैल्वानिक प्रभाव ऋणात्मक ठीक उसी प्रकार की स्थिति चित्र 10 में आर्गन की पतली स्पेक्ट्रमी रेखाओं के लिए लागू होती है। चित्र 10 की मोटी स्पेक्ट्रमी रेखाओं के लिए 2 माइक्रोसेकण्ड बिलम्ब पर तो ऋणात्मक आप्टोगैल्वानिक प्रभाव देखने को मिलता है मगर 13 माइक्रोसेकेण्ड बाद वह धनात्मक हो जाता है। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि ये रेखायें एक फोटान का अवशोषण प्रदर्शित करती हैं जिनमें उच्च ऊर्जा स्तर का जीवनकाल निम्न ऊर्जा स्तर से कम होने के कारण चित्र 7b की भाँति ऋणात्मक एवं धनात्मक दोनों ही प्रकार के आप्टोगैल्वानिक प्रभाव दिखायी पड़ते हैं। आर्गन परमाणु के आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम में एक और दो फोटान के अवशोषण को चित्र 10 द्वारा ऊर्जा स्तरों के बीच संक्रमण के रूप में प्रदर्शित किया गया है।

प्रोफेसर जोशी का व्यक्तित्व

प्रोफेसर जोशी की गिनती अपने समय के भारत के श्रेष्ठतम वैज्ञानिकों में थी तथा मालवीय जी को अपने विश्वविद्यालय में अनुसंधान की परम्परा

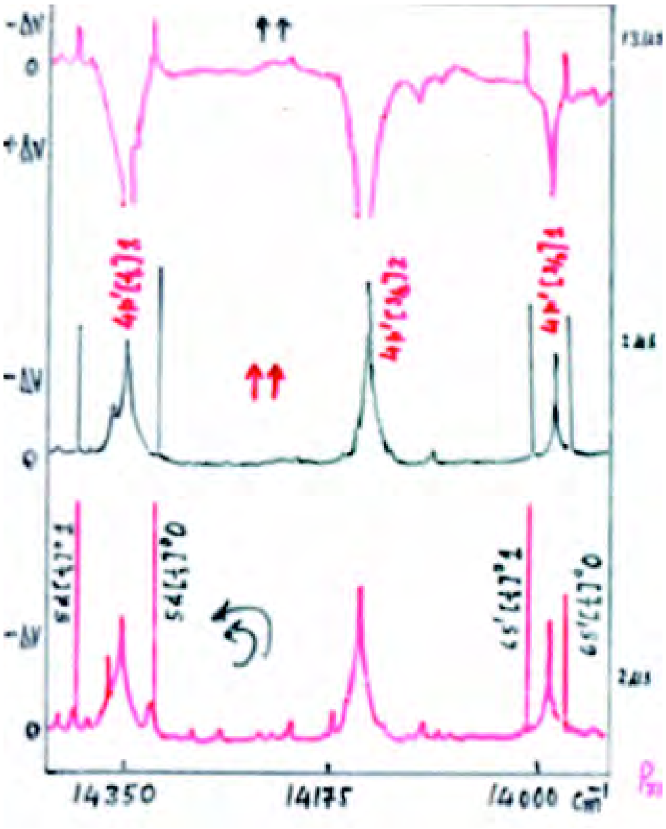

चित्र 10 : डाई लेजर के क्षणिक प्रकाश के बाद अलग-अलग समय पर आर्गन परमाणु का आप्टोगैल्वानिक स्पेक्ट्रम बायीं ओर प्रदर्शित है जिसमें ऊपर तथा बीच के स्पेक्ट्रम में लेजर प्रकाश रेखियध्रुवित तथा नीचे वाले स्पेक्ट्रम के लिये वृत्तीयध्रुवित किया गया। नीचे एवं बीच वाला स्पेक्ट्रम क्षणिक प्रकाश के 2 माइक्रोसेकण्ड बाद तथा ऊपर वाला 13 माइक्रोसेकण्ड बाद रिकार्ड किया गया। आर्गन परमाणु के आंशिक ऊर्जा स्तर दायीं ओर प्रदर्शित हैं जहाँ काले एकल तीर से स्पेक्ट्रम की मोटी एवं दोहरे तीर से पतली रेखाओं का संक्रमण दिखाया गया है।

की शुरुआत करने वाले इस प्रतिभावान प्रोफेसर पर बहुत गर्व था। भारतीय विज्ञान कांग्रेस के वार्षिक आधिवेशन में विदेश से आने वाले विशिष्ठ वैज्ञानिकों को प्रोफेसर जोशी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आदर के साथ बुलाते थे तथा अपने विद्यार्थियों को उनसे नवीनतम अनुसंधानों के बारे में विचार विमर्श के सुनहरे अवसर उपलब्ध कराते थे। साइंस कालेज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर भी वे प्रिंसिपल की हैसियत से मुख्य अतिथि के रूप में किसी महान वैज्ञानिक को ही निमंत्रित करते थे। महाराष्ट्र अकाडमी ऑफ साइंसेज के संस्थापक सदस्य होने के साथ ही वे कई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान संस्थाओं से जुड़े थे। वे रायल इंस्टिट्यूट ऑफ केमेस्ट्री लन्दन, इन्डियन अकाडमी ऑफ साइंसेज बंगलोर तथा इन्डियन नेशनल साइंस अकाडमी नई दिल्ली के फेलो थे। उन्हें 1943 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के केमेस्ट्री प्रभाग के अध्यक्ष, 1957 में पी सी रे मेडल, 1959 में म्युनिख के अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस ऑन प्योर एण्ड एप्लाएड केमेस्ट्री के फिजिकल केमेस्ट्री प्रभाग के चेयरमैन तथा 1963 में इन्डियन नेशनल साइंस अकाडमी के उपाध्यक्ष के सम्मान से नवाजा गया था।

प्रोफेसर जोशी के व्यक्तित्व की छाप उनके शिष्यों में आज भी देखने को मिलती है। गोरखपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति तथा प्रोफेसर जोशी के सबसे प्रिय शिष्यों में से एक प्रोफेसर बेनी माधव शुक्ल की राय में उनके देवतुल्य व्यक्तित्व का वर्णन शब्दों में नहीं व्यक्त किया जा सकता। प्रोफेसर शुक्ल कहते हैं कि उनके गुरू जिन्हे वे प्रेम मिश्रित सम्मान से 'दाजू' कहते थे आज भी उनके प्रेरणास्रोत हैं क्योंकि वैज्ञानिक प्रतिभा के साथ ही उनका व्यक्तित्व आदर्श रूप से संतुलित था। वे परम्परागत भारतीय संगीत में गहरी रुचि रखने के साथ ही क्रिकेट के शौकीन थे और शाम के समय प्रयोगशाला में इतना रम जाते थे कि डिनर खाना ही भूल जाते थे।

आज के प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिकों में से एक सी.एन.आर.राव 1953 में एम.एससी. केमेस्ट्री के विद्यार्थी थे तथा उन्हें प्रोफेसर जोशी के निर्देशन में रीसर्च करने का अवसर मिला था। उनकी राय में प्रोफेसर जोशी विज्ञान के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थे। वे अनुशासन के सख्त पक्षधर थे और समय से कार्य सम्पन्न करने तथा कराने में विश्वास रखते थे। प्रोफेसर राव के अनुसार उनकी अपनी वैज्ञानिक सफलता का श्रेय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में प्राप्त प्रारंभिक अनुसंधान की कला को जाता है।

प्रोफेसर जोशी के शिष्यों के अलावा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में जिन लोगों को भी उन्हें देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ वे उनके चौड़े ललाट पर लटकते हुए चाँदी से सफेद सुन्दर बालो और आभा युक्त मुखमंडल को याद कर आज भी रोमांचित हो उठते हैं।

आभार

इस लेख की प्रेरणा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र एवं प्रमुख उद्योगपति श्री दीनानाथ झुनझुनवाला से मिली। विश्वविद्यालय तथा इसके महान अध्यापकों के प्रति उनका आदर भाव देखकर मैं जब लेखन सामग्री की खोज शुरू किया तो यह देखकर विस्मय हुआ कि प्रोफेसर जोशी के जीवन से संबंधित बहुत कुछ उपलब्ध नहीं है। प्रोफेसर बेनी माधव शुक्ल से वार्तालाप के द्वारा जोशी जी के बारे में काफी प्रेरणादायक एवं रोचक प्रसंगों की जानकारी हुई। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रसायन के प्रोफेसर एस.के. सेनगुप्ता ने प्रोफेसर जोशी के अनुसंधान से संबंधित लिखित सामग्री उपलब्ध कराने में बहुत सहयोग किया।

"परमात्मा की सृष्टि में मनुष्य–मनुष्य में कोई भेद नहीं।
सब ही बुद्धि और विकास के समान नियमों के अधीन हैं।"

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

प्लूटो मिशन 'न्यू होरिजन्स' की लम्बी यात्रा

काली शंकर*

यू होरिजन्स एक अन्तराग्रहीय अन्तरिक्ष प्रोब है जिसे नासा के न्यू फ्रन्टियर कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रमोचित किया गया। इसके लिए जॉन हापकिन्स विश्वविद्यालय की अप्लाईड भौतिकी प्रयोगशाला (ए पी एल) तथा दक्षिण पश्चिम अनुसंधान संस्थान के अभियंताओं की एक टीम का गठन किया गया जिसका नेतृत्व एस अलग स्टर्न ने किया। टीम के द्वारा एक अन्तरिक्ष यान 'न्यू होरिजन्स' का प्रमोचन 19 जनवरी, 2006 को किया गया जिसका प्रमुख उद्देश्य प्लूटो, इसके चन्द्रमाओं और कूपियर बेल्ट का अध्ययन करना था। इसके लिए इसे प्लूटो तंत्र और एक या इससे अधिक कूपियर बेलट के पिन्डों के समीप से गुजरना था।

न्यू होरिजन्स परियोजना की मिशन टीम

न्यू होरिजन्स मिशन प्लूटो के लिए किसी मिशन को भेजने की दिशा में अनेक वर्षों की कड़ी मेहनत का परिणाम है। इसके लिए प्रयास 1990 से प्रारंभ कर दिये गये थे। इसके लिए पहले अनेक परियोजनाएँ प्रस्तावित की गईं। अन्त में सबको रद्द करके न्यू होजिन्स मिशन को चुना गया। इस परियोजना के लिए बजट की भी समस्या आई। अन्त में 3 वर्ष के निर्माण और परियोजना कार्यान्वयन के कार्यों के बाद न्यू होरिजन्स मिशन का प्रमोचन 19 जनवरी, 2006 को केप केनेवेरल से सीधे भू-एवं-सौर पलायन परिपथ में किया गया। इसमें पृथ्वी सापेक्ष गति 16.26 कि.मी. प्रति सेकेन्ड (58536 कि.मी. प्रति घं.) थी तथा इसने उच्चतम गति का एक विशिष्ट रिकार्ड कायम किया जिसके द्वारा पहली बार कोई मानव निर्मित पिन्ड पृथ्वी से प्रमोचित किया गया। 6 दिसम्बर, 2014 को न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान प्लूटो से एनकाउन्टर की स्थिति में पहुँचा तथा इसके उपकरणों की जाँच प्रारंभ हुई। 15 जनवरी, 2015 को यह यान प्लूटो की ओर विभिन्न चरणों में बढ़ा। 14 जुलाई, 2015 को सार्वत्रिक समय 11 बजकर 49 मिनट पर यह प्लूटो की सतह से 12500 कि.मी. की ऊँचाई से गुजरा तथा इस गुजरने की घटना ने एक और रिकार्ड को जन्म दिया। यह रिकार्ड यह था कि न्यू होरिजन्स प्रथम अन्तरिक्ष यान

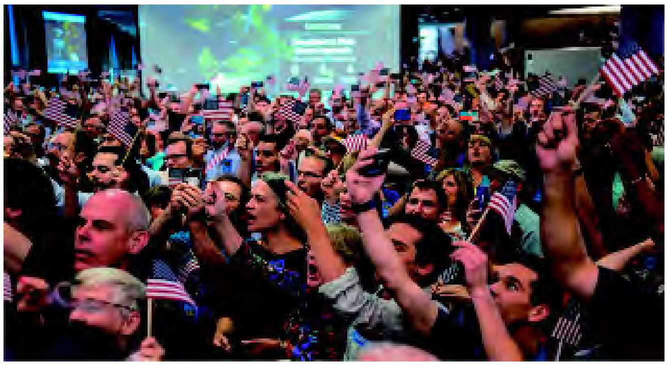

14 जुलाई, 2015 को न्यू होरिजन्स मिशन के सफलतापूर्वक प्लूटो के समीप से गुजरने (फ्लाई बाई) तथा पृथ्वी के मिशन नियंत्रण केन्द्र में अन्तरिक्ष यान से सिग्नल प्राप्त करने के बाद खुशियों का प्रदर्शन करते हुए अधिकारीगण

बना जिसने ड्वार्क ग्रह प्लूटो का पहली बार प्रेक्षण किया। उसके 13 घण्टे बाद अमरीकी अन्तरिक्ष संस्था नासा ने इस अन्तरिक्ष यान से पहला सम्पर्क स्थापित किया। इससे इस बात की पुष्टि हुई कि अन्तरिक्ष यान प्लूटो के समीप से सफलता पूर्वक गुजरा। इस पर न्यू होरिजन्स टीम ने इस सुनहरे अवसर का मिशन नियंत्रण में तालियों की गड़गड़ाहट से स्वागत किया। इससे इस बात की पुष्टि हुई कि इस अन्तरिक्ष प्रोब ने आशा के अनुरूप कार्य किया। प्रस्तुत लेख में न्यू होरिजन्स मिशन के विभिन्न पहलुओं को अप-टु-डेट करके प्रस्तुत किया गया है।

लोरी (लाँग रेंज खोजी प्रतिविम्बक) के द्वारा प्लूटो का 76800 किमी. दूर से लिया गया चित्र

मिशन के उद्देश्य

मिशन के उद्देश्यों में शामिल है प्लूटो तंत्र, कूपियर बेल्ट तथा प्रारंभिक सौर तंत्र के बदलाव को समझना है। इस मिशन द्वारा प्लूटो तथा इसके चन्द्रमाओं के वायुमंडल, सतह के अन्तः भाग का अध्ययन करना

*सेवानिवृत्त वरिष्ठ वैज्ञानिक, इसरो; आवासः के-1058, आशियाना कालोनी, कानपुर रोड, लखनऊ-226 012.

था। इसके उद्देश्यों में शामिल हैं:

(क) प्लूटो और इसके चन्द्रमा चैरन की सतही संरचना का मानचित्रण।

(ख) प्लूटो और चैरन के भूगर्भ-शास्त्र और मार्फोलोजी का पता लगाना।

(ग) प्लूटो के उदासीन वायुमण्डल और इसकी पलायन दर को चिन्हित करना।

(घ) चैरन के चारों ओर के वायुमण्डल का पता लगाना।

(च) प्लूटो और चैरन के सतही तापक्रम का मानचित्रण।

(प) प्लूटो के चारों ओर रिंग और अतिरिक्त उपग्रहों का पता करना।

(फ) उपर्युक्त प्रकार की जाँचे एक या कई कूपियर बेल्ट पिन्डों पर करना।

न्यू होरिजन्स मिशन की यात्रा के विभिन्न पड़ाव

19 जनवरी, 2006 को न्यू होरिजन्स मिशन का पृथ्वी से प्रमोचन

19 जनवरी, 2006 को फ्लोरिडा के केप केनेवेरल स्टेशन से प्रमोचन के बाद इसे प्लूटो के परिपथ की ओर अग्रसर किया गया। इसके लिए बृहस्पति के गुरुत्व का सहारा लिया गया। इसके लिए बृहस्पति ग्रह के गुरुत्व का सहारा लिया गया। इसकी यात्रा के प्रारंभिक 13 महीनों में अन्तरिक्ष यान एवं इसके उपकरणों की जाँच एवं उपकरणों का कैलीब्रेशन किया गया। इस दौरान लघु परिपथ संशोधन मनूवर किये गये तथा बृहस्पति ग्रह के साथ एनकाउन्टर का रिहर्शल करके देखा गया। इस एनकाउन्टर का अर्थ यह था कि बृहस्पति ग्रह का विशाल गुरुत्व न्यू होरिजन्स मिशन की गति को बहुत बड़ा बूस्त (गति में विशाल वृद्धि) देगा। इसे 'गुरुत्व सहायक' (ग्रैविटी असिस्ट) तकनीक कहते हैं। 7 अप्रैल, 2006 को यह मंगल ग्रह की कक्षा को पार कर गया। 13 जून, 2006 को इसने एक लघु क्षुद्र ग्रह का भी अनुवर्तन किया जिसका बाद में नाम

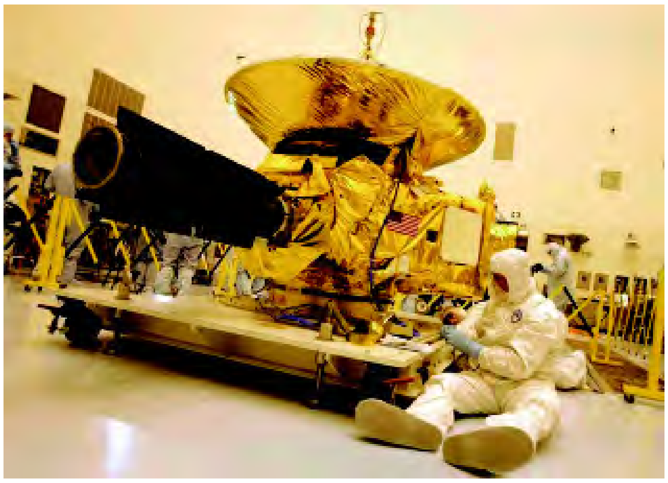

4 नवम्बर, 2005 को तकनीशियन अन्तरिक्ष यान के नीतभार पर काम करते हुए

'132524 ए पी एल' रखा गया। इस क्षुद्र ग्रह की आर पार लम्बाई 2.3 कि.मी. थी।

न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान 28 फरवरी, 2007 को बृहस्पति ग्रह के सबसे समीप से गुजरा तथा उस समय इसकी गति 23 किमी. प्रति सेकेन्ड थी। कैसिनी अन्तरिक्ष (शनि ग्रह मिशन) यान की तुलना में यह बृहस्पति ग्रह से 2-3 गुना अधिक समीप था। न्यू होरिजन्स यान बृहस्पति ग्रह के 23 लाख किमी.समीप गुजरा।

प्लूटो चन्द्रमा निक्स और हाइड्रा (14 जुलाई, 2015)

यान की अन्तरातारकीय यात्रा (प्लूटो के लिए) 8 वर्षों तक चली तथा इसमें अन्तरिक्ष यान और इसके उपकरणों की वार्षिक जाँच, परिपथ संशोधन तथा उपकरणों का कैलीब्रेशन शामिल था। यात्रा के दौरान न्यू होरिजन्स ने 8 जून, 2008 को शनि ग्रह की कक्षा, 18 मार्च, 2011 को यूरैनस ग्रह की कक्षा तथा 25 अगस्त, 2014 को नेपच्यून ग्रह की कक्षा को पार किया। बृहस्पति ग्रह से प्लूटो तक 8 वर्ष की यात्रा के दौरान न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान धीमी गति से स्पिन करता हुआ ''सुप्तावस्था'' (हाइबरनेशन) में था। इस दौरान वह सप्ताह में एक बार इस बात का सिग्नल भेजता था कि वह शान्तिपूर्वक तरीके से सुप्तावस्था में है। लेकिन

प्रत्येक वर्ष 50 दिन के लिए इसकी सुप्तावस्था इसलिए तोड़ी जाती थी जिससे इसके विभिन्न उपकरणों की जाँच की जा सके तथा इसके ऊपर नेविगेशन मापन किये जा सकें। यह इस बात को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक थी कि अन्तरिक्ष यान सही रास्ते पर चल रहा है।

दिसम्बर, 2014 में न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान की, पूर्व निर्धारित कार्यक्रम से हटकर, सुप्तावस्था को तोड़ दिया गया। इसका कारण था इसकी प्लूटो के साथ एनकाउन्टर करने की तैयारी करना। 14 जुलाई, 2015 को यह अन्तरिक्ष यान प्लूटो के सबसे समीप से गुजरा।

न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान में लगे उपकरण

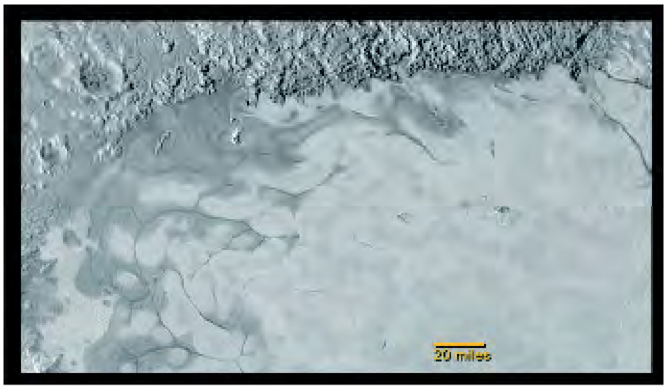

प्लूटो में न्यू होरिजन्स के द्वारा बहती हुई बर्फ का चित्रांकन

(क) **एलाइस :** यह एक अल्ट्रावायलेट प्रतिबिम्बन स्पेक्ट्रोमीटर है जिसका प्रमुख उद्देश्य प्लूटो के वायुमंडल की संरचना का विश्लेषण करना है।

(ख) **लोरी :** यह एक उच्च विभेदन प्रकाशिकी दूरबीन है एवं कैमरा है जो प्लूटो का लगातार मानीटरन कर रहा है।

(ग) **रैल्फ :** यह एक संयुक्त रूप से प्रकाशिकी एवं इन्फ्ररेड स्पेक्ट्रम में काम करने वाला उपकरण है जो प्लूटो और इसके चन्द्रमा चैरन की सतहों के रंगीन चित्र प्रदान करेगा तथा इनकी सतहों की संरचनात्मक और तापीय सूचना प्रदान करेगा।

प्लूटो का उच्च विभेदन प्रतिबिम्ब जिसमें बर्फ के 300 मीटर ऊँचाई के पहाड़ दिखाई दे रहे हैं

(घ) **पेप्सी :** यह एक कण संसूचन उपकरण है जो प्लूटो के वायुमंडल से पलायन करने वाले अणुओं और परमाणुओं का संसूचन करेगा।

(च) **स्वैप :** यह एक कण सम्बन्धित उपकरण है जो प्लूटो के चारों ओर सौर पवन के गुणों का मापन करेगा।

(छ) **रेक्स :** यह मिशन की अवधि के दौरान किया जाने वाला एक परीक्षण है जिसके अन्तर्गत पृथ्वी से विशाल एन्टेनाओं के द्वारा भेजे जाने वाले रेडियों सिग्नलों के मुड़ने की प्रक्रिया के द्वारा भेजे जाने वाले रेडियो सिग्नलों की प्रक्रिया का प्रेक्षण किया जायेगा।

(ज) **स्टेडेन्ट डस्ट काउन्टर :** इस उपकरण का विकास कोलोरैडो विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के द्वारा किया गया है। यह उन धूल कणों की गिनती करेगा जो पृथ्वी से आकर कूपियर बेल्ट के ऊपर आघात करते हैं।

न्यू होरिजन्स मिशन की वर्तमान स्थिति

न्यू होरिजन्स प्रोब

14 जुलाई, 2015 को न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान प्लूटो-चैरन तंत्र के सबसे समीप से गुजरा तथा इसने समीपता दूरी के विज्ञान का करवेज पूरा कर लिया है। अन्तरिक्ष यान से आने वाले दूरमिति सिग्नल से यह मालूम पड़ गया है कि अन्तरिक्ष यान पूरी तरह स्वस्थ है तथा इसका उड़ान परिपथ सीमा के अन्दर है एवं प्लूटो-चैरन तंत्र के वैज्ञानिक पहलू की रिकार्डिंग कर ली गई है। वर्तमान में अन्तरिक्ष यान सूर्य के सापेक्ष में 14.52 किमी. प्रति से. की गति से तथा प्लूटो के सापेक्ष में 13.77 किमी. प्रति से. की गति से चल रहा है। अन्तरिक्ष यान और प्लूटो के बीच सिग्नलों के आने जाने में 4.5 घण्टे का समय लगता है। इस दूरी पर अन्तरिक्ष यान केवल 1 से 2 कि. बिट प्रति सेकेन्ड की गति से ही डाटा का प्रेक्षण कर सकता है जिसका अर्थ यह हुआ कि सम्पूर्ण डाटा के प्रेक्षण में 16 महीने लगेंगे। वर्तमान में न्यू होरिजन्स मिशन सैगीटैरियसतारा-मंडल (कन्स्टेलेशन) की दिशा में आगे बढ़ रहा है।

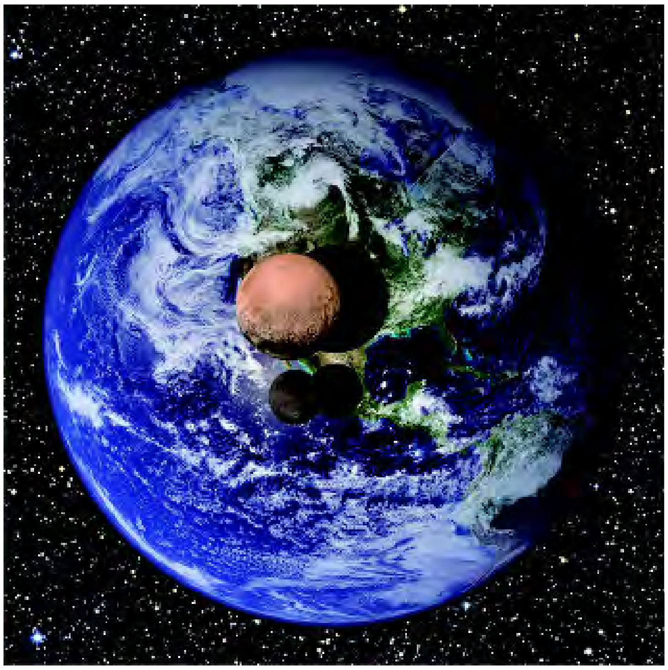

प्लूटो और इसके चन्द्रमा चैरन का दृश्य यदि उन्हें पृथ्वी के ऊपर रखकर दूर से उनका चित्रांकन किया जाय

न्यू होरिजन्स मिशन की भावी योजना

प्लूटो के समीप से गुजरने (फ्लाई-बाई) के बाद न्यू होरिजन्स मिशन कूपियर बेल्ट के बीच से गुजरेगा तथा एक कूपियर बेल्ट के एक पिन्ड के समीप से गुजरेगा। यह न्यू होरिजन्स मिशन का विस्तार होगा। पाठकों की जानकारी के लिए कूपियर बेल्ट सौर तंत्र का वह क्षेत्र है जो नेप्च्यून ग्रह की कक्षा (30 खगोलिकी इकाई से) लगभग 50 खगोलिकी इकाई (सूर्य से) तक फैला हुआ है। यह क्षुद्र ग्रह बेल्ट से मिलता-जुलता है लेकिन क्षुद्र ग्रह बेल्ट की तुलना में 20 गुना चौड़ा और 20 से 200 गुना अधिक भारी है।

13-14 जुलाई, 2015 को प्लूटो (बायें) और इसके चन्द्रमा चैरन का संयुक्त प्रतिबिम्ब लिया गया

भावी मिशन विस्तार के लिए मिशन नियोजकों ने एक या कुछ अधिक कूपियर बेल्ट पिन्डों का ध्यान रखा है जिनका व्यास 50-100 किमी. सीमा में हो। चूँकि उड़ान पथ का निर्धारण यान की प्लूटो से समीपता पर निर्भर करता है तथा न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान में ईंधन के रूप में केवल 33 किग्रा. हाइड्राजीन ही बचा हुआ है इसलिए यान के द्वारा

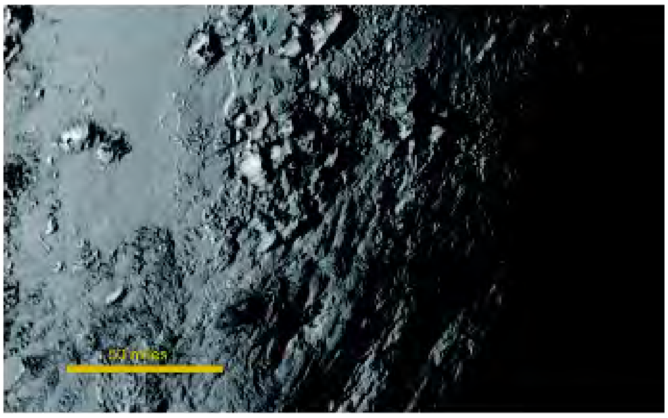

प्लूटो के बर्फीले पहाड़ (14 जुलाई, 2015)

जो भी पिन्ड विजिट किया जाता है वह एक कोन की ज्यामिति (प्लूटो से विस्तृत होता हुआ) में हो। इस सीमितता के कारण ड्वार्फ ग्रह एरिस (जो प्लूटो के आकार से काफी मिलता जुलता है) के पास से न्यू होरिजन्स मिशन का गुजरना असम्भव लगता है। इसके साथ यह भी आवश्यक है कि समीपता पिन्ड 55 खगोलिकी इकाई दूरी के अन्दर हो क्यों कि 55 खगोलिकी इकाई से अधिक दूरी पर संचार लिंक बहुत कमजोर हो जायेगी तथा आर टी जी पावर स्रोत काफी क्षीण हो जायेगा। प्रेक्षणों के लिए यह भी आवश्यक है कि कूपियर बेल्ट पिन्ड 50 किमी. व्यास से बड़े हों। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन से जाँच करने के बाद यह पाया गया कि न्यू होरिजन्स मिशन के उड़ान पथ में केवल कूपियर बेल्ट पिन्ड रेंज सीमा में थे तथा इनमें भी एक पिन्ड को बाद में प्रेक्षण लिस्ट से हटा दिया गया। मिशन का यह कार्य नासा की अनुमति के बाद 2016-20 के दौरान किया जायेगा।

न्यू होरिजन्स मिशन में काम करने वाली महिलाएँ

वर्ष 2019 में न्यू होरिजन्स मिशन किसी एक कूपियर बेल्ट पिन्ड के पास से गुजरेगा तथा यह पिन्ड होगा- '2014 एम यू $_{69}$' अथवा '2014 पी एन $_{70}$'। वर्ष 2026 में न्यू होरिजन्स मिशन का अन्त अपेक्षित है है लेकिन वह 'आर टी जी' पावर स्रोत की सक्रियता पर निर्भर करेगा। वर्ष 2038 में न्यू होरिजन्स मिशन सूर्य से 100 खेगोलिकी इकाई दूर होगा तथा उस समय यदि यह सक्रिय स्थिति में होगा तो यह सूर्य मंडल

14 जुलाई, 2015 को ए पी एल के मिशन नियंत्रण केन्द्र का दृश्य

(हीलियोस्फीयर) की जानकारी देगा।

न्यू होरिजन्स मिशन के कुछ कौतूहल पूर्ण तथ्य

ये तथ्य निम्न हैं :

1. न्यू होरिजन्स प्रोब का प्रमोचन पृथ्वी से अब तक के किये गये प्रमोचनों में सबसे तीव्र गति वाला था। यह एक रिकार्ड की बात है। इसका अर्थ यह है कि 9 घं. में पृथ्वी के चन्द्रमा के पास से गुजर गया जबकि अपोलो अंतरिक्ष यात्रियों को चन्द्रमा तक पहुँचने में 3 दिन लगते थे।

2005 में केनेडी अन्तरिक्ष केन्द्र में न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान

2. जिस समय न्यू होरिजन्स मिशन का प्रमोचन किया गया उस समय प्लूटो हमारा 9वाँ ग्रह था लेकिन इस प्रमोचन के 8 महीने बाद प्लूटो का ग्रह का दर्जा हट गया।

3. न्यू होरिजन्स मिशन में क्लाइड टामबाग की अस्थियाँ रखकर भेजी गयीं है जिन्होंने 1930 में प्लूटो की खोज की थी। उस समय यह माना जाता था कि प्लूटो का आकार पृथ्वी के आकार का है।

4. इस मिशन के साथ एक सी डी भेजी गई है जिसमें 4,34,000 लोगों के नाम अंकित हैं। इसके लिए नासा ने एक नोटिस निकाला था। अन्तरिक्ष यान में अमरीका का 1991 का एक टिकट भी भेजा गया।

प्लूटो की खोज करने वाले क्लाइड टामबाग

5. न्यू होरिजन्स प्रोब सूर्य से इतनी दूर है कि यह उपकरणों को प्रचलित करने के लिए सौर ऊर्जा पर नहीं निर्भर कर सकता हैं इसलिए इसमें पावर के लिए परमाणु ऊर्जा प्लान्ट लगाई गई है।

6. प्रेक्षण के लिए इसमें 7 उपकरण लगे हुए हैं तथा उनके नाम विभिन्न टी वी कैरेक्टर शृंखला से लिये गये हैं।

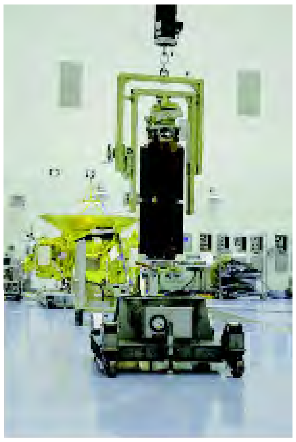

न्यू होरिजन्स अन्तरिक्ष यान का पावर आपूर्ति तंत्र- आर टी जी (रेडियो आइसोटोप थर्मोइलेक्ट्रिक जनरेटर)

7. प्लूटो के सम्पूर्ण व्यास के आर-पार जाने में इसे मात्र 3 मिनट लगे।

8. न्यू होरिजन्स मिशन ने अपनी यात्रा का अधिकांश समय सुप्तावस्था (हाइबरनेशन) में गुजारा है। इसने बृहस्पति के चन्द्रमा 'आई ओ' के एक ज्वालामुखी के 'विस्फोट' का भी चित्रांकन किया है।

9. 14 जुलाई, 2015 को अन्तरिक्ष इतिहास में न्यू होरिजन्स पहला मिशन है जो प्लूटो के सबसे समीप से गुजरा।

10. प्लूटो चन्द्रमा निक्स और इड्रा के प्रथम अक्षरों को लेकर न्यू होरिजन्स मिशन (एन एच) का नाम रखा गया।

11. वायजर मिशन के बाद न्यू होरिजन्स पहला मिशन है जिसे किसी अ-अन्वेषित ग्रह के अन्वेषण के लिए भेजा गया।

12. न्यू होरिजन्स मिशन में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक उपकरण लगाये गये हैं तथा ये उपकरण पहली बार किसी अ-अन्वेषित ग्रह के लिए भेजे गये हैं।

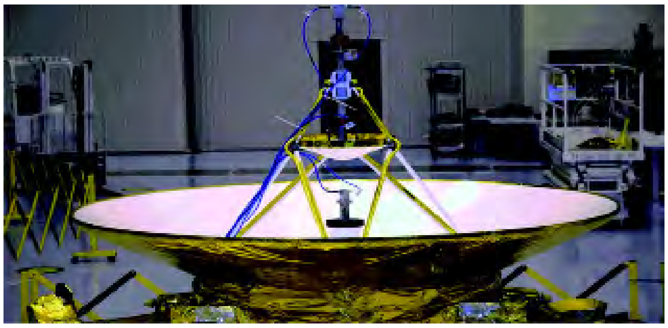

अन्तरिक्ष यान का एन्टेनीं

ब्लैक बॉक्स का बढ़ता आयाम

संजय गोस्वामी*

ब्लैक बॉक्स किसी भी दुर्घटना के दौरान विभिन्न सूचनाओं को संग्रह करने वाला उपकरण है। इसमें विमान से जुड़ी कई जानकारियाँ, जैसेकि विमान की गति, ऊँचाई, अक्षांश, इंजन तथा अन्य यंत्रों की ध्वनि, त्वरण, रोटेशन यात्रियों और पायलटों की बातचीत आदि, दर्ज होती रहती है। इन सूचनाओं के विश्लेषण द्वारा विमान के दुर्घटनाग्रस्त होने की स्थिति में दुर्घटना के कारणों की पहचान की जाती है। ब्लैक बॉक्स को अंग्रेजी में 'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' या 'फ्लाइट रिकॉर्डर' भी कहा जाता है। वर्ष 1953-54 में कई हवाई हादसों की श्रृंखला के बाद हवाई जहाज में एक ऐसा उपकरण लगाने की जरूरत महसूस की गई थी जो कि दुर्घटना के समय या उससे तुरन्त पहले वायुयान में होने वाले हलचलों और आँकड़ों को संग्रहित कर रख सके तथा जो दुर्घटनाओं में सुरक्षित रहे। सन् 1954 में ब्लैक बॉक्स का पहला प्रारूप हवाई जहाज में लगाया गया। समय-समय पर इसकी बनावट में बदलाव आते रहे हैं। शुरू में इसे 'रेड एग' पुकारा गया था, जो रंग की दृष्टि से उसका अधिक उपयुक्त नाम था। ब्लैक बॉक्स के शुरुआती प्रारूपों में उसकी भीतरी दीवार को काला रखा जाता था। वह फोटो फिल्म आधारित ऑकड़ा संग्राहक था और भीतरी काला रंग किसी अंधेरे कक्ष की तरह काम करता था। शायद वहीं से इसका नाम ब्लैक बॉक्स पड़ा।

वर्तमान समय में प्रयुक्त ब्लैक बॉक्स का रंग 'ब्लैक' अर्थात् काला नहीं बल्कि सामान्यतः लाल या गहरा नारंगी होता है। इसके अंदर वायुयान में होने वाली बातचीत, एटीसी और क्रू के सदस्यों के बीच हुई बातचीत और परिवेश की ध्वनियाँ रिकॉर्ड होती रहती हैं। यह 270 नॉट्स तक के आघात वेग और अत्यधिक तापमान को भी सह सकता है। यही वजह है कि किसी भी विमान हादसे में विमान में आग लगने और उसके दुर्घटनाग्रस्त हो जाने के बावजूद इसे नुकसान नहीं पहुँचता। उच्च दबाव और ताप के बावजूद उसमें मौजूद जानकारी सुरक्षित रहती है। इसे सुरक्षित रखने के लिए सामान्यतः वायुयान के पिछले हिस्से में रखा जाता है, क्योंकि अगले हिस्से को 'क्रश जोन' माना जाता है। इसकी मजबूत बॉडी स्टील या टाइटेनियम की बनी होती है। यह भीतर से पूरी तरह तापरोधी होता है। इससे एक खास तरह की प्रकाश तरंगें निकलती रहती हैं। लगातार 3 दिनों तक निकलने वाले इन तरंगों के कारण दुर्घटना के बाद इसे ढूँढने में मदद मिलती है।

किसी विमान हादसे की वजह का पता लगाने में दो डिवाइस बेहद महत्वपूर्ण होते हैं। एयरक्राफ्ट का फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर (एफडीआर) और कॉकपिट वॉइस रिकॉर्डर (सीवीआर)। इसे ही 'ब्लैक बॉक्स' कहा जाता है। एक में कॉकपिट के अंदर की बातें रिकॉर्ड होती हैं, तो दूसरे में विमान से जुड़े आँकड़े, जैसे- गति और ऊँचाई रिकॉर्ड होती है। यह उच्च संक्षारक प्रतिरोध और 2000 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान में भी सक्षम है। ब्लैक बॉक्स नामतः काले रंग का नहीं है यह ऑरेंज कलर का होता है, इस पर आग-पानी का कोई असर नहीं होता है। 25,000 फीट की दूरी से इसका पता लगाया जा सकता है। ब्लैक बॉक्स की बैटरी में अर्धचालक पदार्थ थैलियम सल्फाइड होता है जो 30-35 दिनों तक ही चलती है, लेकिन इसके डाटा को वर्षों बाद भी इस्तेमाल किया जा सकता है। ब्लैक बॉक्स को विमान के पिछले हिस्से में लगाया जाता है, क्योंकि यह दुर्घटना की स्थिति में भी सबसे ज्यादा सुरक्षित माना जाता है।

हाल ही में सी-130 जे सुपर हरक्यूलस विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। हादसा क्यों हुआ, इसके बारे में पता नहीं चल पाया। क्योंकि ब्लैक बॉक्स नहीं मिला, वहीं मलेशियन विमान एमएच-370 के कई दिनों बाद दुर्घटनाग्रस्त होने की खबर आई। कैसे पता चलेगा कि इसके पीछे वजह क्या थी? दरअसल, ब्लैक बॉक्स वह उपकरण है, जिसके जरिए पता लगाया जा सकता है कि विमान के दुर्घटनाग्रस्त होने के पीछे वजह क्या थी। हर विमान हादसे के बाद 'ब्लैक बॉक्स' के बारे में आये टीवी और समाचार-पत्रों में जरूर देखते-पढ़ते होंगे। इन दिनों 'ब्लैक बॉक्स' दो विमान दुर्घटनाओं से चर्चा में है। पहला, एक हजार करोड़ रुपये का हरक्यूलस विमान और दूसरा, मलेशियन विमान एमएच।

ब्लैक बॉक्स को कई टेस्ट से गुजारा जाता है। जैसे स्वीकृति परीक्षण, भुर-भुरापन परीक्षण, धुँआ परीक्षण, सॉफ्टवेयर परीक्षण, ए बी एक्स परीक्षण, तनाव परीक्षण, टेस्ट स्वचालन, वेब अनुप्रयोग, सुरक्षा स्कैनर,

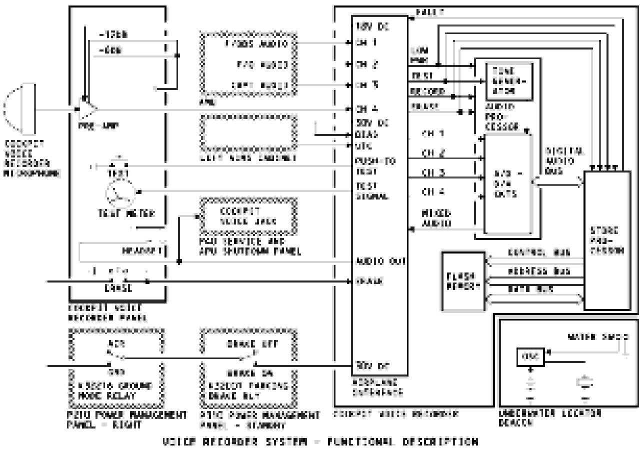

*यमुना जी/13, अणुशक्तिनगर, मुंबई- 400 094.

व्हाइट हैट हैकर, व्हाइट बॉक्स टेस्टिंग, ग्रे बॉक्स टेस्टिंग, ब्लाइंड प्रयोग, ध्वनिक उत्सर्जन परीक्षण, जंग परीक्षण, विनाशकारी व गैर विनाशकारी परीक्षण, व्याप्ति डाई परीक्षण, संतुलन परीक्षण, पर्यावरणीय परीक्षण, गुणवत्ता नियंत्रण के लिए रेडियोग्राफी, और अल्ट्रासोनिक परीक्षण, आग परीक्षण आदि हैं। उदाहरण के तौर पर ब्लैक बॉक्स रिकॉर्डर 'एल-3 एफए 2100' 1150 डिग्री सेल्सियस फायर में 10 घंटे और 280-300 डिग्री सेल्सियस हीट में 10-12 घंटे तक रह सकता है। यह 50 से 70 डिग्री सेल्सियस तापमान में भी काम कर सकता है। वर्ष 1960 में ऑस्ट्रेलिया पहला ऐसा देश था जिसने विमानों में ब्लैक बॉक्स लगाना अनिवार्य कर दिया था। भारत में नागर विमानन महानिदेशालय के नियमों के अनुसार 01 जनवरी, 2005 से सभी विमानों और हेलिकॉप्टरों में सीवीआर और एफडीआर लगाए जाने को अनिवार्य कर दिया गया। विमान का ब्लैक बार्क्स मिलने के बाद जाँचकर्ता उसे लैब में ले जाते हैं, जहाँ इसमें रिकॉर्ड डाटा के जरिए विमान के दुर्घटनाग्रस्त होने के कारणों के बारे में पता लगाया जाता है।

इसमें हाइपरसेंसिटिव हाइड्रोफोन लगा होता है, जो सिग्नल्स को 6000 मीटर की गहराई तक पता लगा सकता है। अगर विमान समुद्र में दुर्घटनाग्रस्त हो जाए, तो ब्लैक बॉक्स की खोज के लिए ब्लूफिन 21 का इस्तेमाल किया जाता है। इसे अंडर वाटर ड्रोन भी कहा जाता है। यह 4500 मीटर की गहराई तक खोज कर सकती है।

ऑस्ट्रेलिया के साइंटिस्ट डेविड वारेन ने ब्लैक बॉक्स का आविष्कार 1950 के दशक में किया था। वे मेलबोर्न के एयरोनॉटिकल रिसर्च लेबोरेट्रीज में काम करते थे। उस दौरान पहला जेट आधारित कॉमर्शियल एयरक्राफ्ट 'कॉमेट' दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। वे हादसे की जाँच करने वाली टीम में शामिल थे। उन्होंने सोचा, क्यों न कुछ ऐसा बनाया जाए, जो विमान के दुर्घटनाग्रस्त होने से कुछ समय पहले तक की चीजों को रिकॉर्ड कर सके। इसके बाद उन्होंने फ्लाइट डाटा रिकार्डर पर काम करना शुरू कर दिया। क्विंसलैंड में हुए विमान हादसे के बाद ऑस्ट्रेलिया दुनिया का पहला ऐसा देश था, जिसने कॉमर्शियल एयरक्राफ्ट में ब्लैक बॉक्स को लगाना अनिवार्य कर दिया था। आज विमान की बढ़ती दुर्घटना के तथ्य वास्तविक कारण की खोज के लिए ब्लैक बॉक्स बहुत उपयोगी उपकरण है यह असल में ब्लैक बॉक्स विमान की आत्मा है। इस पर न तो पानी का प्रभाव और न तो आग का प्रभाव रहता है जो विमान दुर्घटना के बाद सुरक्षित रहता है।

आज समुद्र या पानी में ब्लैक बॉक्स की खोज के लिए रोबोटिक्स प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है। आधुनिक उपकरण ब्लैक बॉक्स में विमान में पायलट और इंजन गतिविधियों से संबंधित सौ से अधिक पैरामीटर है जैसे पायलट और चालक दल के सदस्य के बीच दर्ज की गई बातचीत की रिकॉर्ड पायलट और सह पायलट के बीच आखिरी पल की बातचीत, विमान का वेग, आवाज, अक्षांश, संवेग, विमान प्रक्षेप पथ के

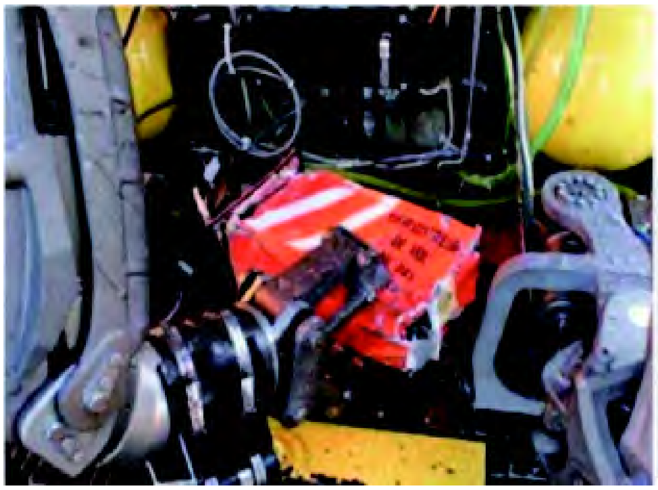

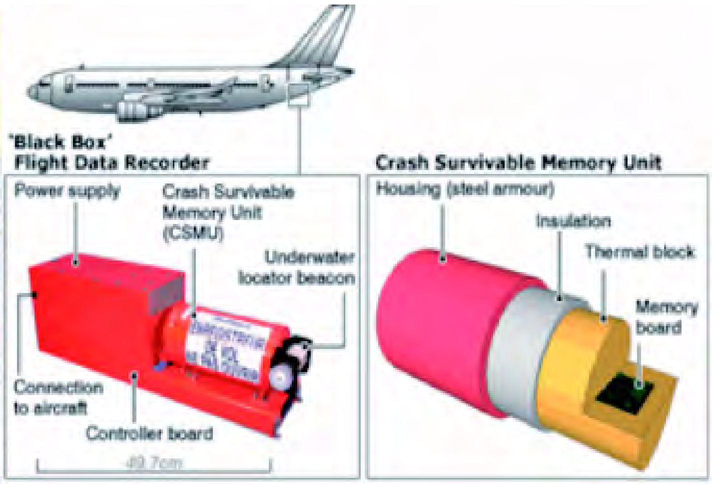

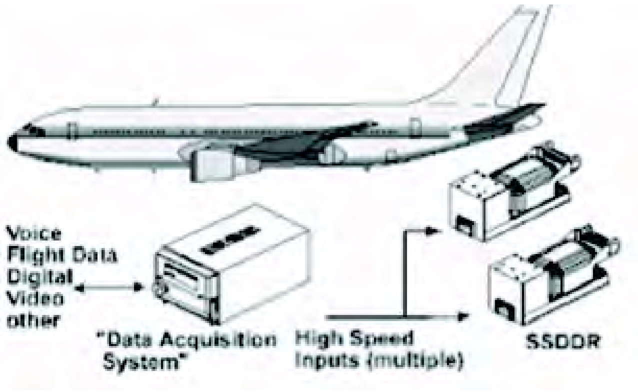

डिजिटल फ्लाइट डाटा रिकार्डर

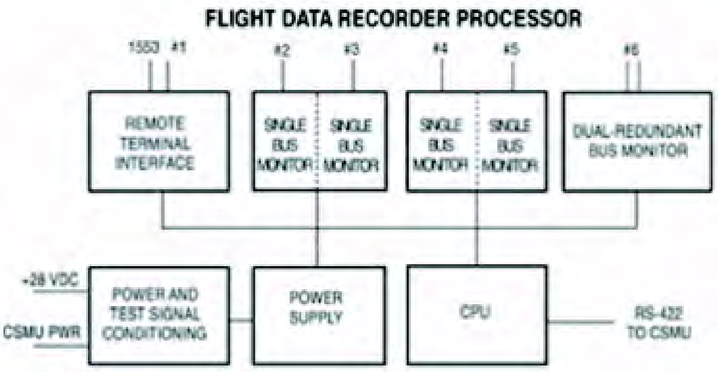

ब्लैक बाक्स (DFDR) का चित्र

कोण, चक्कर, एयर ट्रैफिक सिग्नल, मौसम का असर, विमान के हिस्से की गुणवत्ता, शुद्ध तेल की गुणवत्ता, किसी भी आग का कारण या आतंकवादी द्वारा अपहरण, टेकऑफ के बिंदु आदि जिसकी तकनीकी जानकारी विमान दुर्घटना के बाद केवल ब्लैक बॉक्स द्वारा हासिल कर सकते हैं। अधिक सही कारण की पहचान करने के लिए पोस्ट दुर्घटना की जाँच के लिए सक्षम वैज्ञानिकों ने उड़ान विसंगतियों के लिए ब्लैक बॉक्स डेटा का विश्लेषण करती है। एक हवाई जहाज के डिजिटल उड़ान डाटा रिकॉर्डर या ''ब्लैक बॉक्स'' आमतौर पर एक उड़ान के दौरान नियमित रूप से एक-दूसरे के अंतराल पर, इंजन, कॉकपिट नियंत्रण, हाइड्रोलिक उपकरण और जीपीएस सिस्टम के साथ जोड़कर भारी मात्रा में सही डेटा प्राप्त करते हैं। विमान निरीक्षकों की टीम द्वारा दुर्घटना के बाद फोरेंसिक विशेषज्ञ के साथ मिलकर ब्लैक बॉक्स में दर्ज की गई जानकारी के आधार पर विमान दुर्घटना के वास्तविक कारण को समझा जा सकता है कि यह एक आतंकवादी साजिश है, या पायलट की गलती। ब्लैक बॉक्स में दर्ज की गई संगठित डेटा का उपयोग कर दुर्घटना के अंतिम क्षणों की महत्वपूर्ण वाकया की तस्वीर पाया जाता है। दुर्घटना के बाद ब्लैक बॉक्स शट डाउन हो जाता है। हाल ही में, विश्लेषकों की टीम ने एयर एशिया विमान की दुर्घटना का सही कारण ब्लैक बॉक्स डेटा से प्राप्त किया व इस तरह की दुर्घटनाओं को रोकने के प्रयास में विमान की सही विधि द्वारा जाँचकर विमान रख-रखाव प्रणाली में सुधार, और सुरक्षा तकनीक को और अधिक उन्नत करने का प्रयास जारी है।

उड़ान प्रक्रियाओं के साथ कुछ समस्या है। जैसे बुरा मौसम, हवाई अड्डे की कम लंबाई, इंजन भाग की गुणवत्ता की जाँच पुराने एयरबेस, पुराने विमान, रडार प्रणाली, संचार की कमी आदि प्रभाव हैं। अगर डेटा अर्जन को तेजी से ऑपरेटर कर सकते हैं फिर यह निर्धारित कर सकते हैं कि सॉफ्टवेयर उपकरण का उपयोग विमान निरीक्षण के रूप में उचित तरीका से किया है या नहीं। हवाई जहाज के ''डिजिटल उड़ान डाटा रिकॉर्डर'' या ''ब्लैक बॉक्स'' आमतौर पर उड़ान के दौरान नियमित रूप से हवाई जहाज के टेकऑफ वेग से चलने के अंतराल पर, इंजन, कॉकपिट नियंत्रण, हाइड्रोलिक उपकरण और जीपीएस सिस्टम प्राप्त डेटा का मौसम सूचनात्मक जानकारी विमान को नियंत्रण रखती है। ब्लैक बॉक्स का चक्कर पिछले कुछ समय से यह देखने में आ रहा है कि जब भी कोई छोटा या बड़ा विमान दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है या खो जाता है, तो सबसे पहले उसके ब्लैक बॉक्स की खोज चालू की जाती है, ताकि दुर्घटना के कारणों का पता चल सके और आश्चर्य की बात है कई बार वह बॉक्स बहुत दिनों बाद मिलता है या मिलता ही नहीं। मैं यह सोचकर आश्चर्यचकित हूँ कि इतने अधिक तकनीकी विकास के बाद भी हम ऐसा ब्लैक बॉक्स नहीं बना सके जो हर समय अपनी उपस्थिति का संकेत देता रहे। जबकि एक साधारण मोबाइल फोन भी बैटरी खत्म होने तक अपनी खबर देता रहता है। करोड़ों-अरबों रुपये के एक जहाज में क्या कुछ लाख रुपये खर्च करके कोई ऐसा उपकरण नहीं लगाया जा सकता, जो जीपीएस तकनीक का उपयोग करके हर समय अपने ठिकाने की जानकारी देता रहे और जो फायर प्रूफ तथा वाटर प्रूफ भी हो? उस जानकारी को किसी अलग कंप्यूटर में हर समय रिकार्ड किया जा सकता है। अगर ब्लैक बॉक्स के साथ या अलग से ऐसा कोई उपकरण हवाई जहाजों और पानी के जहाजों में लगा दिया जाए, तो उनके लापता होने की संभावना समाप्त हो जाएगी। परिणामतः यह सुरक्षा के लिए बहुत महत्वपूर्ण उपकरण है जो प्रौद्योगिकी उन्नयन और अनुसंधान के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भाँग और अफीम से नहीं कम होता दर्द

दुनिया भर में दर्द और मानसिक रोगों से जूझ रहे लोगों को भाँग और गाँजे में पाई जाने वाली यौगिक कैनाबिनॉयड्स से तैयार दवा दी जाती है। माना जाता है कि इसकी मदहोशी से व्यक्ति अपनी मुश्किल भूल जाता है और दर्द से उसे राहत मिलती है। लेकिन ब्रिटेन स्थिति यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों के अनुसार यह उतना कारगर नहीं है जितना माना जाता हैं। प्रमुख शोधकर्ता पेनी विटिंग ने अध्ययन में पाया कि कैनाबिनॉयड्स कुछ हद तक कैंसर और तंत्रिका रोगों से होने वाले दर्द को तो कम करते हैं। लेकिन कीमोथेरेपी के साइड इफेक्ट से होने वाली मिचली, उल्टी, एड्स की वजह से वजन में बढ़ोतरी और अनिद्रा में यह उतना कारगर नहीं है, जितनी की उम्मीद की जाती है। इस बात के भी कम सबूत हैं कि भाँग, गाँजा या चरस जैसे नशीले पदार्थों में पाई जाने वाली यौगिक से तैयार दवाएँ मनोविकार के इलाज कारगर होती हैं। विटिंग ने कहा, कैनाबिनॉयड्स के सेवन करने से माना जाता है कि मिचली, उल्टी, चक्कर आने, भ्रम होने, शरीर का संतुलन बिगड़ने की शिकायत हो सकती है।

वायु-प्रदूषण : समस्या और समाधान

मंजुलिका लक्ष्मी एवं प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव*

वातावरण में बढ़ते वायु-प्रदूषण के भयावह दुष्प्रभाव से अब भारत में नाना प्रकार के रोगों के आक्रमण की पदचाप सुनाई देने लगी है। नवजात शिशुओं के आकार और भार में कमी, निर्धारित समय से पूर्व ही जन्म (प्री-मैच्योर बर्थ) और मानसिक विकास में अबोध जैसी समस्यायें भी वायु-प्रदूषण के फलस्वरूप बढ़ रही हैं। चिकित्सकों ने चेतावनी दे दी है कि यदि वायु-प्रदूषण बढ़ता रहा और उसे नियंत्रित न किया गया तो भविष्य में स्थिति अत्यंत भयावह होने वाली है। वायु-प्रदूषण के कारण होने वाली यह नई समस्यायें फेफड़े के सामान्य रोगों, दमा और हृदय रोगों के अतिरिक्त होंगी।

सामान्यतौर पर भारत के छोटे-बड़े सभी नगर वायु-प्रदूषण की चपेट में हैं, किन्तु राजधानी दिल्ली की दशा सर्वाधिक चिंतनीय है। दिल्ली में वायु-प्रदूषण का स्तर सबसे अधिक पाया गया है। विशेषज्ञों का निश्चित मत है कि ऐसा कोई भी कारक जो अंग विकास में बाधक होता है उसका दुष्प्रभाव गर्भस्थ शिशु और नवजात शिशुओं पर भी निश्चित रूप से होता है।

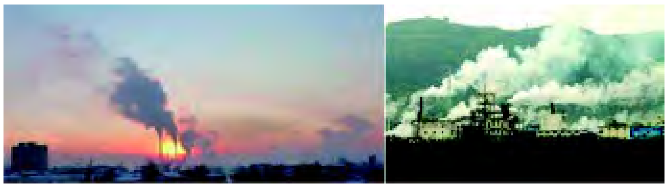

कल-कारखानों द्वारा वायु प्रदूषण

इसका सबसे बड़ा उदाहरण है ''नवजात शिशुओं में तंत्रिका नलिका (न्यूरल ट्यूब) और रीढ़ रज्जु (स्पाइनल कॉर्ड) का ठीक तरह से निर्माण न हो पाना। चिंतनीय तथ्य यह है कि ऐसा उन माताओं के शिशुओं में भी देखा जाता है जो मातायें आहार में पोषक तत्व लेती रहती हैं तथापि उनके गर्भस्थ भ्रूण प्रभावित होते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य जन्मजात न्यूनताएँ भी आम हैं।'' उपरोक्त विचार डॉ0 नीलम क्लेर द्वारा व्यक्त किए गए हैं जो 'सर गंगाराम हॉस्पिटल' के नियोनैटोलॉजी विभाग की अध्यक्षा हैं। पिछले दिनों 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' की मीटिंग में वायु-प्रदूषण और नवजातों की गड़बड़ियों के पारस्परिक संबंध के विषय में गहन चर्चा की गई थी।

'ग्लोबल बर्डेन ऑफ डिजीज' की रिपोर्ट के अनुसार वायु-प्रदूषण के कारण समय से पूर्व कालकवलित होने वालों की संख्या भारत में छः लाख बीस हजार तक पहुँच चुकी है। दिल्ली में वायु में सूक्ष्म कणिकीय पदार्थों की अत्यधिक मात्रा होने के कारण 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' तथा अन्य वैश्विक संस्थाओं द्वारा दिल्ली की गणना विश्व के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में की गई है।

सर गंगाराम अस्पताल तथा भारत के जन स्वास्थ्य संस्थान (पब्लिक हेल्थ फाउण्डेशन ऑफ इण्डिया) के परस्पर सहयोग से विशेष रूप से उन माताओं के आस-पास की वायु की गुणवत्ता का अध्ययन किया गया जिन्होंने 2007-2012 के बीच शिशुओं को जन्म दिया था। इस अध्ययन का उद्देश्य वायु-प्रदूषण और शिशुओं के भार पर उसके पड़ने वाले दुष्प्रभाव के पारस्परिक संबंध का पता लगाना था।

शिशुओं के अतिरिक्त कम आयु के बालक, वयस्क और वृद्ध लोग भी वायु-प्रदूषण की इस मार को झेल रहे हैं। चिंता का विषय यह है कि इस नगरीय प्रदूषित वायु से स्वास्थ्य को कितना खतरा है इसे भली-भाँति समझते हुए भी लोग उसके प्रति उदासीन हैं। सरकार तब भी उदासीन थी जब दिल्लीवासियों को बाहर निकलने के बाद प्रदूषित वायु का स्पर्श होने से आँखों में जलन होने लगती थी और आज भी उदासीन है जब अधिकांश लोग श्वाँस रोगों से आक्रान्त हैं। ये सारी स्थितियाँ भयावह और चिंताजनक तो हैं, परन्तु दृढ़ इच्छाशक्ति और सतत् प्रयत्न से वायु-प्रदूषण को नियंत्रित करना आज भी असंभव नहीं है। विश्व के अनेक देशों ने अपने यहाँ वायु-प्रदूषण को कम करने के उपायों और कानूनों के माध्यम से काफी सफलता प्राप्त की है। वास्तविक आवश्यकता सरकार और आम जनता, दोनों में प्रबल इच्छाशक्ति की है। इस दृष्टि से सर्वप्रथम वायु-प्रदूषण के कारकों को समझना बहुत आवश्यक हैं। ये कारण हैं-

1. हरित गृह गैसें, यथा कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन, काला कार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स।
2. सूक्ष्म कणिकीय पदार्थ, यथा सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स, उड़नशील/वाष्पीय कार्बन यौगिक, अमोनिया, कार्बन मोनोऑक्साइड, ओजोन आदि।

*अनुकम्पा', वाई 2 सी 115/6, त्रिवेणीपुरम्, झूँसी, इलाहाबाद-211 019.

वाहनों द्वारा प्रदूषण

3. मोटर एवं अन्य वाहनों से निकला धुआँ, सड़क की धूल, भवन निर्माण का मलबा और हानिकारक रसायन, सूखी पत्तियों के जलने से निकला धुआँ, बेंजीन, भारी धातुएँ आदि।

आइए, अब एक नजर उन रोगों पर डाल लें जो वायु-प्रदूषण के कारण साधारणतया बच्चों, युवाओं और बृद्धजनों को रोगग्रस्त करते हैं-

1. बच्चों को होने वाले रोगों में हैं- फेफड़ों का कम विकसित होना, निमोनिया, ब्रांकाइटिस और दमा (अस्थमा)।
2. युवाओं को होने वाले रोगों में है- दमा, फेफड़े का कैंसर और फेफड़ों या फुसफुस द्वारा सांस लेने में अवरोध।
3. वृद्धों में दमा, श्वाँस नली के संक्रमण का बार-बार होना, हृदय रोग और लकवे का बढ़ता हुआ खतरा आदि।

चिकित्सा विज्ञान में हो रही प्रगति के बावजूद वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व में वायु-प्रदूषण द्वारा मरने वालों की संख्या 8 मिलियन प्रतिवर्ष तक पहुँच चुकी है। यदि समय रहते वायु-प्रदूषण को नियंत्रित करने के उचित उपाय न किए गए तो स्थिति कितनी भयावह और त्रासद हो सकती है, उसकी आज हम केवल कल्पना ही कर सकते हैं।

इस सन्दर्भ में यदि हम केवल दिल्ली की ही बात करें तो एक बड़ा कड़वा सच सामने आता है। वस्तुतः इस संबंध में उस समय कोई सार्थक कदम नहीं उठाए गए जब वायु-प्रदूषण की चपेट में आकर प्रारम्भिक दौर में श्वाँस रोगों और आँखों में जलन के रोगियों की संख्या वहाँ बढ़ने लगी थी। अब धीरे-धीरे लोगों को बात समझ में आ रही है जब बच्चे, युवा तथा वृद्धजन सभी इसकी चपेट में आ रहे हैं।

वायु-प्रदूषण की समस्या कोई ऐसी समस्या नहीं है जिसे प्रयास करके समाप्त न किया जा सके। विश्व के अनेक नगरों ने दिखा दिया है कि किस प्रकार वायु-प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है। यदि हम वायु-प्रदूषण के प्रति वास्तव में गम्भीर हैं तो हमें कुछ अलोकप्रिय कदम उठाने होंगे। ये कदम लगभग वैसे ही होंगे जैसे इंग्लैंड, सिंगापुर और चीन ने उठाये हैं। वास्तव में 'राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण' (नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल) की आज्ञा के अनुसार 15 वर्ष पुरानी मोटर गाड़ियों के सड़कों पर चलने पर प्रतिबंध की व्यवस्था है, किन्तु वाहन मालिक और परिवहन एजेंसियाँ इस प्रतिबंध को हटाने के लिए या लागू न करने देने के लिए अवरोध उत्पन्न कर रही हैं।

पहले इन तथ्यों की चर्चा करनी आवश्यक है जिनके आधार पर यूके, सिंगापुर और चीन ने वायु-प्रदूषण पर नियंत्रण पाने में सफलता प्राप्त की है। यूरोपियन यूनियन ने निर्दिष्ट वायु गुणवत्ता के मानकों की अवहेलना करने के लिए यूनाइटेड किंगडम के सम्मुख 300 मिलियन पाउण्ड की कड़ी दंड राशि की चेतावनी दी है। यदि वह यूरोपियन यूनियन के निर्देशों को न मानकर एक वर्ष तक वायु-प्रदूषण में मुख्य भूमिका वाले नाइट्रोजन के ऑक्साइडों की अवहेलना करता रहता है तो उसे आर्थिक दंड के साथ-साथ कानूनी कार्यवाहियों को भी झेलना पड़ेगा। अतः लंदन के नगर प्रमुख बोरिस जान्सन का विचार है कि वहाँ सप्ताह में एक दिन मोटर-गाड़ियों के आवागमन पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया जाए जैसा कि जकार्ता ने रविवार को अधिक भीड़ वाले क्षेत्रों में किया है।

इस दिशा में पहल करते हुए लंदन ने 2008 में एक कड़ा कदम उठाकर अधिकारियों, आम लोगों और व्यापारियों के विरोध के बावजूद एक निम्न उत्सर्जन क्षेत्र नीति (लो एमिशन जोन पॉलिसी) लागू कर दी। इस नीति के तहत उन कारों, बसों, लारियों और अन्य वाहनों को भारी दंड दिया गया, जिन्होंने निम्न उत्सर्जन मानक का पालन नहीं किया था। ग्रेटर लंदन की मोटर-गाड़ियों के परिवहन (ट्रांसपोर्ट) का प्रबंध करने वाली समिति 'ट्रांसपोर्ट फॉर लंदन' इस नीति के क्रियान्वयन पर अपनी सतर्क दृष्टि रखती है। वहाँ विशेष कैमरों के माध्यम से उन वाहनों के नम्बर प्लेट का छायाचित्र उतार लिया जाता है जो वायु में प्रदूषण फैलाते हैं।

यूके के अतिरिक्त जर्मनी में भी एक ऐसा सफल नियामक तंत्र है जिसके माध्यम से वे प्रदूषणकारी वाहनों की पहचान कर लेते हैं और उन्हें दंडित करते हैं।

सिंगापुर विश्व का सर्वप्रथम ऐसा नगर है जिसने 'इलेक्ट्रॉनिक रोड प्राइसिंग' की नीति लागू की है। यह कार्यक्रम सितम्बर 1998 में प्रभावी हुआ। इसके लिए प्रत्येक वाहन में एक 'स्मार्ट कार्ड' लगा दिया गया है। यदि वाहन ऐसे क्षेत्र में पहुँच जाता है, जहाँ अत्यधिक भीड़ होती है जिसके कारण वाहन की गति धीमी हो जाती है तो उस वाहन की पहचान हो जाती है। परिणामस्वरूप, उसे भीड़ में 'जैम' या अवरोध बढ़ाने का दोषी मान लिया जाता है और ऐसी अवस्था में वाहन में लगे 'स्मार्ट कार्ड' से स्वतः दण्ड स्वरूप एक राशि काट ली जाती है। वास्तविकता यह है कि सिंगापुर में एक कार रखना अत्यधिक खर्चीला है। इसके दो कारण हैं। एक तो कारों पर टैक्स बहुत ज्यादा है और पुनः कार का स्वामित्व प्राप्त करने के लिए लगभग उतनी ही राशि देनी पड़ती है जितना कार का प्रारम्भिक मूल्य होता है। देश में इस प्रकार की नीति अपनाकर सिंगापुर सरकार ने वायु-प्रदूषण पर नियंत्रण पाने में भारी सफलता प्राप्त की है।

पिछले कुछ वर्षों में जब चीन में वायु-प्रदूषण खतरनाक स्तर पर पहुँच गया तो चीन की सरकार ने भी इस संबंध में कुछ कठोर कदम उठाये हैं। चीन की 'सेंटर फॉर साइंस एण्ड एन्वायरमेंट' ने सन् 2012 में दो लाख चार हजार कारों के खरीद की ही अनुमति दी, जबकि सन् 2010 में आठ लाख कारों की खरीद हुई थी। इस प्रकार उठाए गए कठोर कदम अपरोक्ष रूप से वायु-प्रदूषण को रोकने में बहुत सहायक होते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लंदन, जर्मनी, सिंगापुर और चीन में वायु-प्रदूषण के संबंध में कुछ कठोर और अलोकप्रिय कदम उठाने से उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है। यदि विश्व के कुछ देश ऐसा कर सकते हैं तो हम भारत में भी इस दिशा में क्यों नहीं कदम बढ़ा सकते ?

कुछ भारतीय विशेषज्ञों का कहना है कि भारत (दिल्ली) में 'निम्न उत्सर्जन जोन' अंकित कर पाना संभव ही नहीं है क्योंकि लोग अधिक

टैक्स भी नहीं देना चाहते हैं और नियंत्रण संबंधी ऐसी हर नीति के विरुद्ध आन्दोलन करने को तैयार रहते हैं। फिर भी वे आशावादी हैं और मानते हैं कि एक शुरुआत तो की ही जा सकती है। यह तो निश्चित है कि वायु-प्रदूषण को कम करने का कोई सरल, सुविधाजनक और लोकप्रिय तरीका नहीं हो सकता। कुछ ऐसे कड़े नियम, कानून ही थोड़े बहुत सकारात्मक परिणाम दे सकते हैं। भारत में निम्न उत्सर्जन क्षेत्र या भीड़-भाड़ या जैम के लिए टैक्स वसूलना निश्चित रूप से आसान नहीं होगा। इसके लिए एक सुदृढ़ और सुव्यवस्थित जन परिवहन तंत्र की ही व्यवस्था पहली शर्त है। किन्तु इसकी शुरुआत के लिए गाड़ियों की पार्किंग हेतु अधिक शुल्क तो वसूला ही जा सकता है। 'अर्बन एमीशन इन्फो' के निदेशक शरत गुट्टीकुंडा का भी यही मत है कि कार्यान्वयन के प्रथम चरण के रूप में ऐसा करना ही उचित होगा।

सबसे आवश्यक है 15 वर्ष पुराने वाहनों का सड़कों पर चलने पर प्रतिबंध लगाना। वायु-प्रदूषण पर प्रतिबंध की दृष्टि से यह तरीका बहुत प्रभावी सिद्ध होगा। एक अनुमान के अनुसार इस कदम से वायु-प्रदूषण में 30 से 40 प्रतिशत की कमी की संभावना है। प्रदूषण पर नियंत्रण की दृष्टि से हमें व्यर्थ पदार्थ यथा कूड़े-कचरे को उन स्थानों पर जलाने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए जहाँ उन्हें रिहायशी क्षेत्रों में एकत्र करके जला दिया जाता है और प्रदूषित वायु वहाँ के निवासियों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाती है। उस स्थान विशेष में वायु-प्रदूषण कई गुना बढ़ जाता है क्योंकि कूड़े में पॉलीथीन समेत अनेक प्रकार के विषाक्त अपशिष्ट भी शामिल होते हैं। वायु-प्रदूषण पर रोक लगाने के लिए गुट्टीकुंड जी का यह भी सुझाव है कि दिल्ली में बसों की संख्या चौगुनी कर दी जानी चाहिए जिससे लोग निजी वाहनों (कारों) का कम से कम उपयोग करें। इससे सड़क पर वाहनों की संख्या में भी कमी आयेगी और भीड़-भाड़ की समस्या का भी एक सीमा तक समाधान हो जायेगा।

कोलम्बिया के नगरों में पेट्रोल की बिक्री पर 20 प्रतिशत सरचार्ज लगाने से परिवहन तंत्र में काफी सुधार आया है। किन्तु दिल्ली और भारत के अन्य बड़े नगरों में जहाँ पेट्रोल और डीजल के दामों को लेकर आये दिन हाय-तोबा मची रहती है वहाँ 20 प्रतिशत का सरचार्ज लागू करना आसान नहीं होगा।

सीएसई के 'शुद्ध वायु कार्यक्रम' की अध्यक्ष अनुमिता राय चौधरी का कहना है कि दिल्ली की जनता परिवहन तंत्र के चरम विस्फोट की प्रतीक्षा में लगातार वायु-प्रदूषण की मार नहीं झेल सकती। वाहनों के पार्किंग के मूल्य को बढ़ाकर लागू करने के लिए ऐसे कठोर कदम अब तुरन्त उठाने होंगे। दिल्ली भीड़-भाड़ भरे स्थानों के लिए वाहनों से भारी शुल्क वसूलने पर भी विचार का सकती है। तब ऐसे स्थानों में लोग जाने से बचने का प्रयास करेंगे। यदि दिल्ली की जनता वायु-प्रदूषण से मुक्ति पाने के प्रति गम्भीर है तो उन्हें गाड़ियों की पार्किंग मूल्य में वृद्धि को स्वीकार करना ही होगा।

वाहन के साइलेंसर से निकलता धुँआ

परिवहन तंत्र की अराजकता के अतिरिक्त वायु-प्रदूषण के विभिन्न कारणों में एक अन्य प्रमुख कारण है मौसम परिवर्तन जो इन दिनों सारे संसार की चिंता का विषय है। मौसम परिवर्तन के प्रभाव से फसलोत्पादन में तो कमी आती है और वायु-प्रदूषण में भी वृद्धि होती है। वर्तमान में संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन सर्वाधिक प्रदूषणकारी देश हैं। एक उबरता हुआ विकासशील देश होने के कारण सारी दुनिया की निगाहें आज भारत की ओर हैं और भारत से इसमें अग्रगामी भूमिका निभाने की अपेक्षा है। आशा की जानी चाहिए कि इस वर्ष (2015) पेरिस में मौसम परिवर्तन पर होने वाले विश्वव्यापी सम्मेलन में अन्य मुद्दों के साथ वायु-प्रदूषण पर भी न केवल चर्चा होगी वरन् आपसी तालमेल से वायु-प्रदूषण को कम करने के लिए सार्थक उपाय भी सामने आयेंगे। पिछले वर्ष (2014) के दिसम्बर माह में लीमा में हुई विभिन्न देशों की संगोष्ठी के परिणाम सकारात्मक हैं। भारत के पर्यावरण मंत्री प्रकाश जावेडकर ने भी मौसम परिवर्तन से संबंधित निर्णयों से भारत की संतुष्टि जतायी है।

संक्षेप में वायु-प्रदूषण पर नियंत्रण पाने का दूसरा अर्थ है उन सभी रोगों से मुक्ति जिनकी प्रारम्भ में ही चर्चा की जा चुकी है। श्वाँस नली, फेफड़ों, त्वचा और शिशुओं पर होने वाले दुष्प्रभावों तथा तरह-तरह की प्रत्यूर्जता से पीड़ित लोगों के हित में न केवल सरकार को गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए बल्कि स्वयं जनसामान्य को अपने छोटे-छोटे प्रयासों से प्रदूषण निवारण को एक जनजागृति का स्वरूप देने का प्रयास करना चाहिए। सरकार द्वारा सुरक्षा के उपायों का अक्षरशः पालन करवाना आज के युग की आवश्यकता है। 'वायु-प्रदूषण मुक्त भविष्य' अब केवल भारत ही नही पूरे विश्व का नारा होना चाहिए।

"समत्व की सिद्धि ही जीवन सिद्धि है।" "सबके साथ आत्मौपम्य निष्पक्ष व्यवहार" उसकी मांग है। "जीवमात्र से प्रेम" उसकी शर्त है। "प्राणिमात्र की निष्काम सेवा" उसका साधन और मानव का परम धर्म है।

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

परिवेशी वायु गुणवत्ता के लिए प्रेक्षित कलर कोडेड सूचकांक

प्रो0 शशि भूषण अग्रवाल एवं निवेदिता चौधरी*

भूमि और जल के अलावा, स्वच्छ हवा जीवन के निर्वाह के लिए मुख्य संसाधन है। तेजी से होते शहरीकरण और औद्योगिकरण के कारण हवा में विभिन्न तत्वों/यौगिकों के शामिल होने से शुद्ध वायु निरंतर प्रदूषित हो रही है। 'वायु (प्रदूषण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981, (1981 का 14)' के अनुसार वायु प्रदूषण को अधिनियमित किया गया तथा वायु प्रदूषण को 'वायु में किसी भी प्रदूषक की उपस्थिति' के रूप में परिभाषित किया गया है। वातावरण में उपस्थित 'वायु प्रदूषक' ठोस, तरल या गैसीय पदार्थ हो सकते हैं तथा इनकी सांद्रता मनुष्य, अन्य प्राणियों, पौधों या पर्यावरण के प्रति हानिकारक हो सकती है। मानव गतिविधियों के प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए परिवेशी वायु गुणवत्ता के मानक को एक नीति दिशानिर्देश के रूप में विकसित किया गया है जिससे वातावरण में प्रदूषक उत्सर्जन को नियंत्रित किया जा सके। अतः राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानक (National Ambient Air Quality Standards : NAAQS) के उद्देश्य हैं- जन सामान्य के स्वास्थ्य, संपत्ति तथा वनस्पतियों की सुरक्षा के लिए वायु की गुणवत्ता के स्तर को उत्तम बनाए रखना, प्रदूषक स्तर को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न प्राथमिकताओं को स्थापित करना, राष्ट्रीय स्तर पर हवा की गुणवत्ता का आंकलन करने के लिए एक समान मापदंड बनाना तथा वायु प्रदूषण की निगरानी के कार्यक्रमों का सही प्रकार से संचालन करना।

वायु प्रदूषण से निपटने के लिए प्रदूषक की पहचान, उत्सर्जन स्रोत और उसके पर्यावरण पर पड़ते प्रभावों की जाँच आवश्यक है। इसलिए केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने प्रदूषक की पहचान के साथ राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों को भारत के राजपत्र में अप्रैल, 1994 को अधिसूचित किया। संशोधित राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों में SO_2, NO_2, पार्टिकुलेट मैटर 10 माइक्रोन से छोटे (PM 10), ओजोन, सीसा, कार्बन मोनोऑक्साइड, अमोनिया, बैन्जीन, बैन्जोपायरीन (केवल विविक्त कण), आर्सेनिक और निकिल के समय आधारित औसत (वार्षिक और घंटे) को अधिसूचित किया। इन वायु प्रदूषकों को रिहायशी, औद्योगिक, ग्रामीण तथा पारिस्थिकी या संवेदनशील क्षेत्रों की परिवेशी वायु के हिसाब से निर्धारित किया गया है। वायु प्रदूषण के दैनिक स्तर की जानकारी जन साधारण, विशेषकर वायु प्रदूषण से पीड़ित नागरिकों में जागरूकता के लिए महत्वपूर्ण है। इसके अलावा वायु गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए स्थानीय नागरिकों के सहयोग तथा वायु प्रदूषण के बारे में उचित जानकारी होना विशेष महत्व है। इसलिए सामान्य जन में परिवेश की हवा की गुणवत्ता संबन्धित समस्याओं और शमन के प्रयासों की प्रगति के बारे में सही जानकारीयाँ उपलब्ध कराते रहना आवश्यक है।

तकनीकी प्रगति से परिवेशी वायु गुणवत्ता के बारे में वृहद आंकड़े इकट्ठे किये जा सकते हैं, जिनका प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में हवा की गुणवत्ता की जानकारी के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। हालाँकि विशाल आंकड़े से वायु गुणवत्ता की साफ तस्वीर (दूषित या स्वच्छ हवा) उचित जानकारी जनसामान्य को होनी कठिन है। हवा की गुणवत्ता का वर्णन उसमें उपस्थित सभी प्रदूषकों की सांद्रता तथा उसके स्वीकार्य स्तर (मानक) द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। इस जानकारी को एकत्रित करने के लिए नमूना (Sampling) स्टेशनों और प्रदूषण मानकों की संख्या (और उनके नमूनों की आवृत्तियों) तथा इसके विवरण वैज्ञानिक और तकनीकी समुदाय को भी भ्रमित कर सकती है। आमतौर पर सामान्य जन हवा की गुणवत्ता से संबंधित जटिल आंकड़ों के निष्कर्षों द्वारा संतुष्ट नहीं होते। इसीलिए सामान्य नागरिक न तो हवा की गुणवत्ता और न ही नियामक एजेंसियों द्वारा प्रदूषण उपशमन प्रयासों की सराहना करते हैं। शहरी वायु प्रदूषण के दैनिक स्तर के बारे में जागरूकता उन लोगों लिए बहुत महत्वपूर्ण है जो प्रदूषण की वजह से विभिन्न बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं। अतः वायु प्रदूषण के मुद्दे प्रभावी ढंग से संचार माध्यमों से बताये जाने चाहिए जिसके फलस्वरूप राष्ट्रीय वायु प्रदूषण की समस्याओं के बारे में स्थानीय जन के समर्थन के साथ-साथ वायु गुणवत्ता में भी सुधार लाया जा सके।

वायु गुणवत्ता सूचकांक (Air Quality Index : AQI) द्वारा वायु प्रदूषकों के भारित मूल्यों को बदल कर एक सरल मापदंड के रूप में लाया जा सकता है। कई देशों में वायु गुणवत्ता सूचकांक को व्यापक रूप से वायु गुणवत्ता संचार और निर्णय लेने के लिए प्रयोग किया जाता है। भारत में राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता मानकों और प्रदूषण की मात्रा के आधार पर वायु गुणवत्ता सूचकांक तैयार किया गया है। वायु गुणवत्ता सूचकांक का उद्देश्य प्रदूषक के प्रमुख अल्पकालिक प्रभाव (लगभग वास्तविक समय में) को दर्शाना है। आठ वायु प्रदूषकों के मानकों यथा कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2), सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), पर्टिकुलेट मैटर (<2.5 माइक्रोन कण आकार; PM2.5, <10 माइक्रोन कण आकार; PM10), ओजोन (O_3), सीसा, और निकिल (Ni) के प्रसार को परिवेशी वायु में वास्तविक समय के अंतर्गत गुणवत्ता सूचकांक में समिलित किया गया है। परिवेशी हवा में सीसा (pb) की सांद्रता को वास्तविक समय में न मापने के कारण गुणवत्ता सूचकांक में इसका योगदान अभी संभव नहीं हो सका है, हालाँकि, इस महत्वपूर्ण विषाक्त की गणना तथा स्थिति पर गंभीरता से विचार किया गया है। प्रस्तावित परिवेशी वायु गुणवत्ता सूचकांक को सुरुचिपूर्ण रंग योजना के साथ छह श्रेणियों में दिखाया गया है। (चित्र-1) a

---

* आचार्य[1]; शोध छात्रा[2], वनस्पति विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

ISSN 2231 - 2455

अच्छा (Good) (0-50)	संतोषजनक (Satisfactory) (51-100)	नियंत्रित (Moderately polluted) (101-200)	अनुपयुक्त (Poor) (201-300)	अति-अनुपयुक्त (Very –poor) (301-400)	गंभीर (Severe) (> 401)

भारतीय वायु गुणवत्ता सूचकांकः प्रस्तावित प्रणाली

वायु गुणवत्ता मानकों द्वारा वायु प्रदूषण नियंत्रण की बुनियादी नींव के लिए एक प्रभावी प्रणाली प्राप्त होती हैं। हवा की गुणवत्ता का स्तर नियामक गुणवत्ता मानक (Standards) पर निर्भर करता है और मानकों का विकास सार्वजनिक मानव स्वास्थ्य की रक्षा को ध्यान में रखकर किया जाता है जिससे हानिकारक वायु प्रदूषक का राष्ट्रीय/स्थानीय नियंत्रण हो सके। भारतीय राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता मानकों की एक नयी श्रेणी 12 मापदंडों के लिए बनायी गयी है जिसमें विभिन्न वायु प्रदूषक सम्मिलित हैं जैसे CO, NO_2, SO_2, पर्टिकुलेट मैटर (<2.5 माइक्रोन कण आकार; PM2.5, <10 माइक्रोन कण आकार; PM10, O_3, Pb, अमोनिया बेंजोपायरीन (BAP), बेंजीन (C_6H_6), आर्सेनिक (As) और Ni राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता मानकों में सम्मिलित आठ प्रदूषकों के मानकों का अल्पकालिक (1, 8 और 24 घंटे) और वार्षिक मानकों (CO और O_3 को छोड़कर) का विवरण तालिका-1 में दिखाया गया है।

तालिका 1: भारतीय राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता मानक (इकाई : $\mu g\ m^{-3}$)

प्रदूषक	SO_2	NO	$PM_{2.5}$	PM_{10}	O_3	CO($mg\ m^{-3}$)			Pb	NH_3
औसत समय (घंटे)	24	24	24	24	1	8	1	8	24	24
मानक	80	80	60	100	180	100	4	2	1	400

भारत में वायु गुणवत्ता की निगरानी के लिए नेटवर्क को ऑनलाइन और मैन्यूअल दोनों रूपों में वर्गीकृत किया गया है। प्रदूषक मानकों, माप की आवृत्ति और निगरानी के तरीके दोनों नेटवर्क में बिल्कुल अलग होते हैं, विशेष रूप से उनकी रिपोर्टिंग की प्रणाली। ऑनलाइन निगरानी नेटवर्क में वायु गुणवत्ता की निगरानी वाले मानिटरिंग स्टेशन स्वचालित होते हैं, जो निरंतर हर घंटे, मासिक या वार्षिक औसत डेटा रिकॉर्ड करते हैं। वर्तमान में भारत में 40 स्वतः निगरानी केन्द्र संचालित हैं जहाँ PM10, PM2.5, NO_2, SO_2, CO, O_3 आदि मापदंडों की लगातार निगरानी वास्तविक समय (ींित ूग्स) पर होती हैं। इन निगरानी केंद्रों से उपलब्ध आंकड़े सूचकांक की गणना के लिए सबसे उपयुक्त हैं। अधिक उपयोगी और प्रभावी डेटा सूचकांक बनाने के लिए, अधिक से अधिक ऑनलाइन निगरानी नेटवर्क स्थापित करने की विशेष आवश्यकता है। ज्यादातर शहरों में वायु गुणवत्ता सूचकांक की गणना के लिए आंकड़ों की सतत और आसान उपलब्धता हेतु ऑनलाइन निगरानी स्टेशन बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। मैन्यूअल स्टेशनों पर ज्यादातर अनिरंतर हवा की गुणवत्ता के डेटा संग्रहित होते हैं। इस प्रकार के स्टेशनों पर शीघ्र गुणवत्ता गणना का मापन संभव नहीं हो पाता है। भारत में 573 स्थानों पर मैन्युअल रूप से राष्ट्रीय वायु निगरानी कार्यक्रमों के तहत प्रसार किया जाता है। इन मैन्यूअल रूप से संचालित स्टेशनों पर केवल तीन मापदंड प्रदूषकों (PM10, PM2.5, SO_2, NO_2) मापने के लिए साधन उपलब्ध हैं, हालाँकि कुछ स्टेशनों पर वायु में स्थित सीसा को भी मापा जाता है। साथ ही यह सप्ताह में केवल दो बार ही मापन करते हैं। ऐसे मैनुअल नेटवर्क, 1-3 दिनों के अंतराल पर ही आंकड़े उपलब्ध कराते हैं और वायु गुणवत्ता सूचकांक के लिए बहुत उपयोगी नहीं हो पाते हैं। हालाँकि, कुछ प्रयासों से इन जानकारियों का उपयोग किया जा सकता है। जैसे पहले सप्ताहिक आधार पर गणना द्वारा शहरों या कस्बों के डेटा की व्याख्या कर उनकी रैंकिंग के लिए इसको इस्तेमाल किया जाता था जिसके फलस्वरूप वायु प्रदूषण नियंत्रण की प्राथमिकता तय करने की दिशा में कार्यवाही की जाती थी।

परिवेशी वायु गुणवत्ता की निगरानी के लिए विभिन्न उपकरण निगरानी केन्द्र, मोबाइल वैन एवं प्रदूषण स्तर का प्रदर्शन चित्र-2 में प्रस्तुत किया गया है।

परिवेशी वायु गुणवत्ता में सम्मिलित वायु प्रदूषकों का मानव स्वास्थ्य पर पड़ते प्रभाव निम्न हैं :

1. कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) वातावरण में सर्वव्यापी और एक महत्वपूर्ण प्रदूषक है जिसका उत्पादन ज्यादातर अधूरे दहन स्रोतों से होता है। CO की विषाक्तता और वातावरण में बड़े पैमाने पर उपस्थित होने के कारण यह परिवेशी वायु सूचकांक योजना में एक महत्वपूर्ण प्रदूषक के रूप में जानी जाती है। यह मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है क्योंकि यह तेजी से वायुकोशीय झिल्ली से अवशोषित होकर रक्त में हीमोग्लोबिन से मिलकर कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन बनाता है। यह (CO) ऑक्सीजन की तुलना में रक्त से 200-250 गुना तेजी से

वायु गुणवत्ता निगरानी उपकरण, केंद्र, निगरानी मोबाइल वैन एवं प्रदूषण स्तर का प्रदर्शन

प्रतिक्रिया करती है। एनीमिया के रोगियों में, CO उत्पादन की दर 2-8 गुना ज्यादा हो जाती है। प्रारंभिक लक्षण के रूप में चक्कर आना, सिरदर्द, शामिल हैं, हालाँकि लंबे समय तक उच्च सांद्रता में रहना कोमा या मौत का कारण बन सकता है। रक्त द्वारा उचित ऑक्सीजन परिवहन न होने से ऊत्तक में हाइपोक्सिया हो सकता है।

2. नाइट्रोजन डाईऑक्साइड (NO_2) का प्रमुख स्रोत दहन प्रक्रिया है तथा अधिक मात्रा में यह ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में मौजूद रहती है। हालाँकि, शहरी वातावरण में इसकी उच्च वृद्धि वाहनों की बढ़ती संख्या की वजह से हुई है। मानव श्वसन तंत्र में लगभग 70-90 प्रतिशत NO_2 साँस लेने पर अवशोषित हो जाती है जिससे फेफड़ों के वायुमार्ग में प्रतिरोध होने तथा आयतन कम होने से कार्य क्षमता में विशेष कमी हो जाती है। लंबे समय (3 वर्ष) तक कम सांद्रता (लगभग 0.1 पीपीएम) एक्सपोजर होने पर भी ब्रोंकाइटिस और फेफड़ों में हवा के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होने से स्वास्थ पर प्रतिकूल प्रभाव दिखता है।

3. ओजोन सामान्य अवस्था में भी मानव स्वास्थ्य पर अपना सीधा प्रभाव डाल सकती है। एक प्राथमिक ऑक्सीडेंट के रूप में, क्रोनिक ओजोन की मात्रा श्वसन समस्याओं और अकाल मृत्यु की बढ़ती दर सहित मानव स्वास्थ्य पर विभिन्न प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव के लिए जिम्मेदार है। ओजोन द्वारा फेफड़ों के रोगों से सबसे अधिक ग्रसित, बच्चे और बड़ी उम्र के वयस्क और मुख्य रूप से जो लोग दिन के समय में अधिक शारीरिक श्रम करते हैं वह गंभीर रूप से प्रभावित हो जाते हैं। वसंत और गर्मियों के महीनों के दौरान ओजोन स्तर और अस्थमा से संबंधित मौतों के बीच एक सीधा संबंध देखा गया है तथा ओजोन द्वारा दमा रोगियों के लिए मृत्यु का खतरा बढ़ सकता है। ओजोन एक्सपोजर स्थायी रूप से फेफड़ों के ऊत्तकों को नुकसान पहुँचा सकता है। ओजोन द्वारा फेफड़ों की सिकुड़ने तथा फैलने की क्षमता या लचकता समाप्त होने लगती है और उसमें कठोरता आने लगती है तथा स्वास्थ्य संबंधी संवेदनशीलता ओजोन की मात्रा की राशि पर निर्भर करती है। श्वसन नली की सतही कोशिकाएँ ओजोन के प्रभाव से आकर में मोटी तथा बेडौल हो जाती हैं तथा श्वसन नली सिकुड़ जाती है जिससे 'ब्रोंकाइटिस' और 'एम्फाईसिमा' जैसी बीमारीयाँ उत्पन्न होती है। ओजोन मिश्रित वायु के ग्रहण करने से कोशिका में माइटोकॉन्ड्रिया की संरचना में बदलाव के कारण फेफड़ों के घनफल में कमी और श्वास क्रिया की दर में वृद्धि के भी लक्षण पाये गये है। अधिक मात्रा की ओजोन फेफड़ों की प्रतिरोधक क्षमता को कम कर देती है।

परिवेशी वायु गुणवत्ता सूचकांक के लिए आठ प्रदूषक मापदंडों के ब्रेकिंग प्वाइंट के आधार पर रंग योजना के साथ प्रदूषक के प्रभावों को तालिका 2 तथा प्रदूषकों द्वारा स्वास्थ्य प्रभावों को सूचकांक में विभिन्न श्रेणियों के रूप में वर्गीकरण किया गया है (तालिका 3)।

तालिका 2: परिवेशी वायु गुणवत्ता सूचकांक में शामिल विभिन्न वायु प्रदूषकों के प्रस्तावित ब्रेकिंग प्वाइंटस और वर्गीकरण।

वायु गुणवत्ता सूचकांक (श्रेणी)	PM10 (24 घंटे)	PM2.5 (24 घंटे)	NO_2 (24 घंटे)	O_3 (8घंटे)	CO_2 (8घंटे)	SO_2 (24 घंटे)	NH_3 (24 घंटे)	Pb (24 घंटे)
अच्छा (0-50)	0-50	0-30	0-40	0-50	0-1.0	0-40	0-200	0-0.5
संतोषजनक (51-100)	51-100	31-60	41-80	51-100	1.1-2.0	41-80	201-400	0.5-1.0
नियंत्रित (101-200)	101-250	61-90	81-180	101-168	2.1-10	81-380	401-800	1.1-2.0
अनुपयुक्त (201-300)	251-350	91-120	181-280	169-208	10-17	381-800	801-1200	2.1-3.0
अति-अनुपयुक्त (301-400)	351-430	121-250	281-400	209-748	17-34	801-1600	1200-1800	3.1-3.5
गंभीर (401-500)	430+	250+	400+	748+	34+	1600+	1800+	3.5+

तालिका 3: परिवेशी वायु गुणवत्ता की श्रेणियों के आधार पर वायु प्रदूषक के स्वास्थ्य संबंधी प्रभाव

वायु गुणवत्ता सूचकांक	संबंधित स्वास्थ्य प्रभाव
अच्छा	लघु स्तर का विपरीत प्रभाव
संतोषजनक	संवेदनशील व्यक्तियों में श्वाँस लेने में मामूली कठिनाई
नियंत्रित	अस्थमा, हृदय संबंधी रोगों से ग्रसित व्यक्तियों, बच्चों एवं बुजुर्गों द्वारा श्वास लेने में कठिनाई
अनुपयुक्त	लम्बी अवधि तक सम्पर्क में रहने से श्वाँस लेने में असुविधा तथा हृदय संबंधी रोगों से ग्रसित व्यक्तियों में अधिक प्रभाव पड़ना
अति-अनुपयुक्त	लम्बी अवधि तक सम्पर्क में रहने से व्यक्तियों में श्वसन रोग में वृद्धि होना साथ ही संवेदनशील व्यक्तियों तथा हृदय रोग से पीड़ित लोगों में अधिक प्रभाव पड़ना
गंभीर	श्वसन रोग में वृद्धि की संभावना सामान्य व्यक्तियों में तथा हृदय और श्वाँस रोग से पीड़ित लोगों पर गंभीर प्रभाव। कम शारीरिक गतिविधि होने पर भी गंभीर प्रभाव पड़ना

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट से पता चलता है पिछले एक दशक में विश्व में वायु प्रदूषण के कारण होने वाली मौतों में लगभग चार गुना वृद्धि हुई है, चीन और भारत बुरी तरह से प्रभावित देशों के रूप में नामित किये गये हैं। अधिकांश विकसित देशों में कलर-कोडेड वायु गुणवत्ता सूचकांक बनाए गये हैं जिससे नागरिक निगरानी स्टेशन द्वारा जारी हवा की गुणवत्ता को देख सकें और उस पर आधारित सावधानियों के बारे में उन्हें फैसले लेने में मदद मिल सके। जैसे घर के बाहर की गतिविधियों को कम करना, बच्चों को घर में रखना, श्वाँस संबंधी रोगों से ग्रसित लोगों द्वारा विशेष सावधानी रखना और समय पर चिकित्सक से परामर्श करना।

भारत में परिवेशी वायु प्रदूषक के एक विशेष स्तर (मानक) का निर्धारण किया गया है जो जन सामान्य के लिए उपयुक्त चेतावनी के रूप ने उपलबध है। इसी प्रयास के क्रम में केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय ने 22 राज्यों की राजधानियों और एक लाख से अधिक की आबादी के साथ 44 अन्य शहरों की हवा की गुणवत्ता को मापने का प्रस्ताव किया है। राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता कार्यक्रम के अन्तर्गत भारत के विभिन्न शहरों के निगरानी केन्द्रों को चित्र:3 में दर्शाया गया है।

हाल की वायु गुणवत्ता से पता चलता है कि दिल्ली विश्व में सबसे अधिक प्रदूषित शहरों में से एक है। साथ ही विकास के लिए तत्पर देश के अन्य शहरों व उनकी बिगड़ती हवा की गुणवत्ता पर गहरी चिंता उत्पन्न हुई है। वर्तमान समय में इसको भारत के 10 शहरों (दिल्ली, आगरा, कानपुर, लखनऊ, वाराणसी, फरीदाबाद, अहमदाबाद, चेन्नई, बेंगलूर और हैदराबाद) के लिए शुरू किया गया है। यह सूचकांक हवा की गुणवत्ता के बारे में एक सरल और आसानी से समझ आने वाले प्रारूप हैं जो जनता को सूचित करने के लिए बनाया गया है। इस सूचकांक से 'एक संख्या, एक रंग और एक विवरण' से वायु गुणवत्ता को आसानी से समझा जा सकता है। साथ ही प्रत्येक शहरों में 6-7 सतत निगरानी स्टेशनों के साथ विवरण प्रदर्शन बोर्डों से सूचकांक की जानकारी सूचित की जाएगी। एक विज्ञप्ति में बताया गया है कि परिवेशी वायु गुणवत्ता सूचकांक जन जागरूकता और उनकी भागीदारी को बढ़ाने के लिए तथा प्रदूषण कम करने के लिए कदम उठाने हेतु शहरों के बीच एक प्रतिस्पर्धी माहौल पैदा

करने के रूप में तथा शहरी क्षेत्रों में हवा की गुणवत्ता में उचित सुधार के लिए एक बड़ा कदम साबित होगा।

परंपरागत रूप से, हवा की गुणवत्ता स्थिति को विस्तृत आंकड़ों द्वारा समझा जाता था, परन्तु वायु गुणवत्ता सूचकांक से प्रदूषक स्तर को अब सामान्य जन आसानी से समझ सकते हैं। धुँध (smog) चेतावनी प्रणाली लागू करने से भारत भी अमेरिका, चीन, मेक्सिको और फ्रांस जैसे देशों की श्रेणी में शामिल हो गया है। इन देशों में न केवल धुँध अलर्ट जारी होती है, बल्कि इसके साथ ही प्रदूषक के स्तर को नीचे लाने के लिए प्रदूषण आपात उपायों को लागू किया जाता है। हालाँकि, परिवेशी वायु गुणवत्ता सूचकांक पहली बार भारत में दैनिक हवा की गुणवत्ता के बारे में लोगों को सूचित करने का एक सरल साधन है। इसके साथ ही और अधिक शहरों और निगरानी स्टेशनों के डेटा ऑनलाइन किए जाने चाहिए तथा अगला कदम नीति निर्माताओं द्वारा वास्तव में इन डेटा को देखकर दैनिक आधार पर स्वास्थ्य संबंधी आपात स्थिति से जोड़कर इसका सामना करने के लिए सक्षम होना चाहिए। स्थानीय क्षेत्रों में प्रदूषक के स्तर को देखकर प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों को शहर की सीमा के बाहर करना होगा तथा बेहतर सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था बनाकर निजी वाहनों की संख्या को रोकने जैसे कठोर उपाय किए जा सकते हैं।

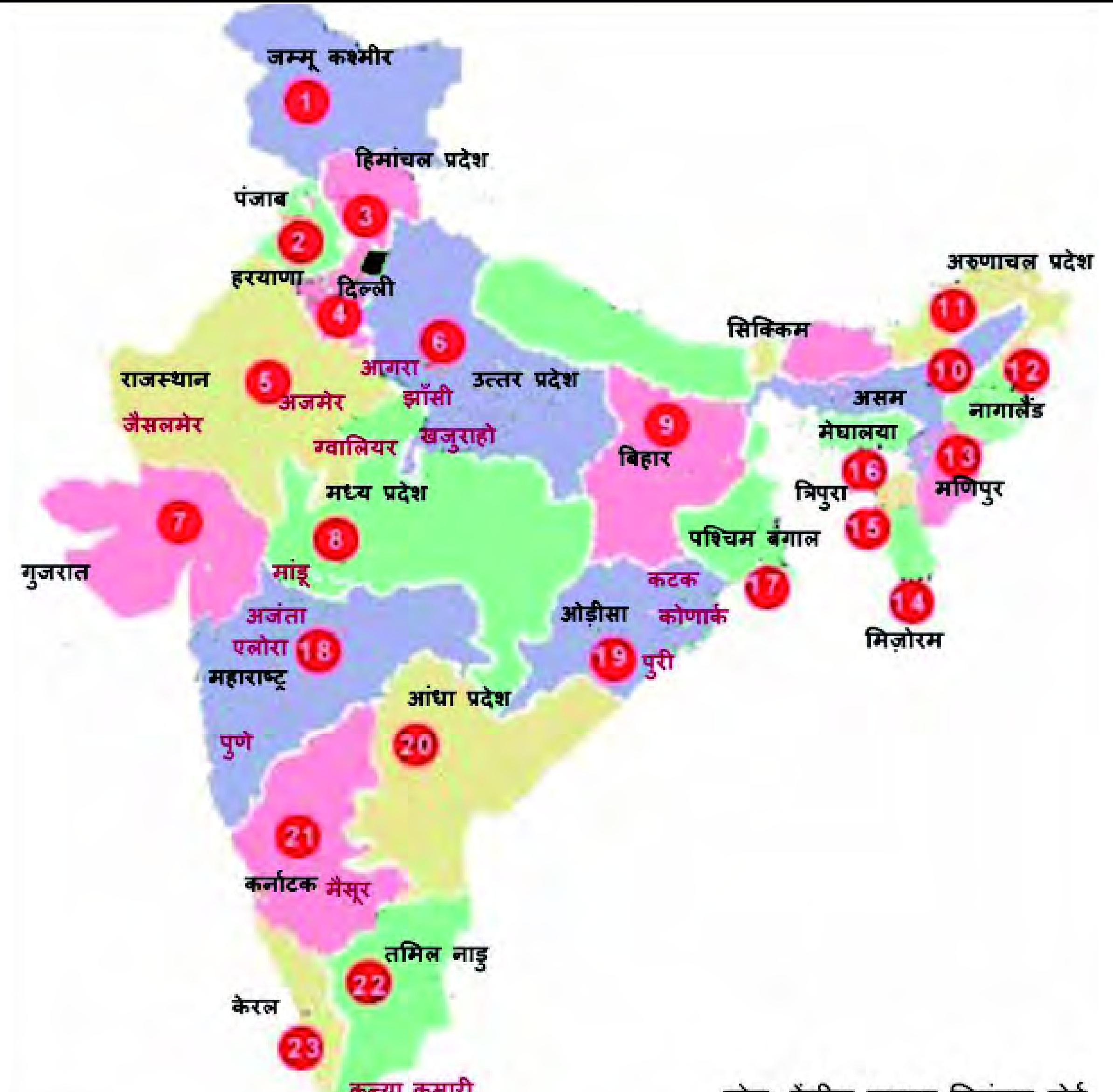

स्रोत: केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

भारत के विभिन्न शहरों मे वायु गुणवत्ता निगरानी केंद्र

ISSN 2231 - 2455

भारतीय राकेटों के पर्याय कलाम

शुकदेव प्रसाद*

बीसवीं सदी में मानवीय मेधा के चरमोत्कर्ष अल्बर्ट आइंस्टाइन निरीश्वरवादी थे। उनका कहना था कि 'मुझे ईश्वर में कोई आस्था नहीं है लेकिन उसके बनाए हुए नियमों (Cosmic laws) में पूर्ण आस्था है।' एक अन्य अवसर पर आइंस्टाइन ने कहा कि 'पथ तो पूर्व निर्धारित हैं। हमारी भूमिका क्या है? बस इतनी ही कि हमें उस पर से गुजर जाना है।' तो क्या हम नियति की डोर से बंधी हुई कठपुतलियाँ हैं? गोसाईं जी ने तो आइंस्टाइन से शतियों पूर्व ही लिख दिया था - 'सबहिं नचावत राम गोसाई।' तो क्या यह नियति की डोर ही थी जिसने कलाम को शून्य से शिखर तक पहुँचा दिया? कदाचित ऐसा ही!

नाइक अपाचे राकेट

कम से कम कलाम साहब तो ऐसा ही मानते थे। उनके जीवन की दिशा नियति ने पूर्व निर्धारित कर दी थी और उन पगडंडियों की प्रतीति उनके बाल्यकाल में ही करा दी थी। इतना ही नहीं, नियति से मिलन (Tryst with destiny) का संदेश भी नियति ने उन्हें दे दिया था। इस दुनिया से महाप्रयाण का आभास उन्हें हो चुका था जिसे उन्होंने अपनी आखिरी किताब में लिपिबद्ध भी कर दिया था, जिसकी चर्चा हम इस आलेख के अंत में करेंगे।

बाल मन की ऊँची उड़ानें

भारत के पहले राकेट एसएलवी-3 के जनक और प्रक्षेपास्त्र पितामह डॉ0 ए पी जे अब्दुल कलाम (अवुल पकीर जैनुल आब्दीन अब्दुल कलाम) का जन्म 15 अक्टूबर 1931 को रामेश्वरम्, तमिलनाडु में एक साधारण से परिवार में हुआ था। आजीविका का कोई ठोस आधार न था। उनके पिता जैनुल आब्दीन रामेश्वरम् के मछुआरों को अपनी नावें किराये पर देते थे और इस प्रकार जो कुछ राशि अर्जित होती थी, उसी से बालक के कलाम की शिक्षा-दीक्षा सम्पन्न हुई जो आगे चलकर भारतीय राकेटों का जनक और देश के रक्षा कार्यक्रम का पितामह बन गया।

विद्यार्थी ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

डॉ0 कलाम इतने महान रक्षा वैज्ञानिक कैसे बने, कदाचित इसके पीछे उनके बाल्यकाल की एक छोटी सी घटना प्रेरणा बन गई। कलाम के चाचा रामेश्वरम् में एक अखबार विक्रेता थे। रेलवे स्टेशन से रोज प्रायः पचास अखबारों का बंडल एकत्र करते थे। एक बार उन्हें किसी काम से बाहर जाना पड़ गया। अतः उन्होंने अखबार बाँटने की जिम्मेदारी बालक कलाम को सौंप दी। यह महज संयोग की बात है कि उस समय रामेश्वरम् स्टेशन से गुजरने वाली एक्सप्रेस गाड़ी को रेलवे अधिकारियों ने वहाँ रोकना बंद कर दिया। अतः अखबारों का बंडल चलती ट्रेन से रोज स्टेशन पर फेंक दिया जाता। बालक कलाम इसे एकत्र कर लोगों के घरों तक पहुँचा दिया करता था।

एक दिन बंडल फट गया और अखबार बिखर गया। फैले हुए अखबारों को इकट्ठा करते समय बालक कलाम की नजर अखबार में छपे एक लेख पर जाकर ठहर गयी। उस लेख में दूसरे महायुद्ध में ब्रिटेन द्वारा प्रयुक्त एक युद्धक विमान के बारे में चर्चा की गयी थी। बालक कलाम ने उस लेख को कई बार पढ़ा और तभी उसने दृढ़ संकल्प किया कि वह आगे चलकर एक इंजिनीयर बनेगा और अपने देश के लिये भी ऐसे आयुध बनायेगा। बाल्यकाल की एक छोटी सी घटना ने तत्क्षण एक महान प्रतिभाशाली वैज्ञानिक बनने की शक्ति एवं सामर्थ्य दे दी बालक को। कदाचित नियति को यही मंजूर था। इस घटना ने बालक कलाम के जीवन की दिशा को ही परिवर्तित कर दिया, फलतः देश को एक महान रक्षा वैज्ञानिक मिला जिसकी प्रतिभा के आगे दुनिया दंग है।

कलाम ने उड़ाया था पहला राकेट

21 नवंबर, 1963 की शाम को थुंबा, केरल की सेंट मैरी मैग्डालेन चर्च से भारत के पहले राकेट 'नाइक अपाचे' का प्रक्षेपण किया गया। यह राकेट हमें अमेरिका ने दिया था। इसी प्रक्षेपण के साथ भारतीय राकेट विज्ञान का उद्भव होता है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रमों के जनक डॉ0 विक्रम अंबालाल साराभाई ने ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को 6 महीने के विशेष प्रशिक्षण के लिए 'नासा' भेजने का प्रबंध किया था। कलाम के सामने ही यह राकेट निर्मित हुआ था।

तब हमारे पास राकेट प्रक्षेपण के लिए कोई केंद्र नहीं था। अतः मजबूरी में उक्त चर्च की दीवार के सहारे 'नाइक अपाचे' को दागा गया। यह अपने आप में रोमांचक किंतु मनोरंजक प्रकरण था जिसकी चर्चा कुछ इस प्रकार डॉ0 कलाम ने अपनी आत्मकथा 'Wings of Fire' में की है- 'राकेट को ले जाने के लिए उपकरण के नाम पर हमारे पास एक ट्रक और

*सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार विजेता, 135/27-सी, छोटा बघाड़ा (एनी बेसेंट स्कूल के पीछे), इलाहाबाद - 211 002.

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

हाथ से चलाने वाली हाइड्रोलिक क्रेन थी। जोड़कर तैयार किए गए इस पूर्ण राकेट को चर्च से प्रक्षेपण स्थल तक ट्रक से ले जाया गया। जब राकेट को क्रेन से उठाया गया और लांचर पर रखा जाने लगा, तभी इसमें झुकाव आना शुरू हो गया। क्रेन की हाइड्रोलिक प्रणाली में रिसाव आने से यह गड़बड़ी उत्पन्न हो रही थी। तब राकेट को हम लोगों ने ही हाथों और कंधों पर उठा लिया ओर लांचर पर स्थापित कर दिया। इस राकेट प्रक्षेपण और इसकी सुरक्षा प्रणाली का प्रभारी मैं ही था। इस राकेट को छोड़े जाने में मेरे दो साथियों डी० ईश्वरदास और अर्वामुदन ने बहुत ही महत्वपूर्ण और सक्रिय भूमिका निभाई। राकेट का प्रक्षेपण बहुत ही आसानी से तथा बिना किसी कठिनाई के हो गया। हमें उड़ान संबंधी आँकड़े बहुत ही बेहतर मिले और हम काम पूरा करके गर्व से ऊँचा सिर लिए लौटे।'

रोहिणी-75

पृथ्वी के निचले वायुमंडल का अध्ययन करने के लिए छोड़े जाने वाले छोटे-छोटे राकेटों को परिज्ञापी राकेट (Sounding Rocket) कहते हैं। अमेरिका द्वारा प्रदत्त 'नाइक अपाचे' भी इसी कोटि का राकेट था।

फिर अमेरिका ने हमें एक और साउंडिंग राकेट दिया जिसका नाम हमने Rh-70 (रोहिणी-70) रख दिया जिसका अर्थ यह है कि इसका व्यास 70 मिमी. था। इसके बाद हमने अपना स्वदेशी राकेट बना लिया जिसे 'रोहिणी-75' (Rh-75) नाम से अभिहित किया गया। इसका व्यास 75 मिमी. था।

20 नवंबर, 1967 को भारत ने थुंबा से 'रोहिणी-75' का सफल प्रक्षेपण किया, तब अमेरिका ने ही इसे खिलौना कहकर मजाक उड़ाया था जिसने हमें ऐसे दो खिलौने दिए थे। पर जब 'रोहिणी-75' ने आशाजनक परिणाम प्रदर्शित किए तो एक स्वर से स्वीकारा गया कि मात्र आकार ही सब कुछ नहीं है। प्रश्न तो यह है कि तकनीकी रूप से दक्षता प्राप्त कर ली

राकेट के अग्र भाग की ढुलाई

डॉ0 विक्रम अंबालाल साराभाई द्वारा 1964 में फ्रांस से किए गए एक समझौते के अनुसार भारत ने 'सेन्तोर' नामक दो खंडों वाले राकेट बनाने का मार्ग प्रशस्त कर लिया। अब तो विभिन्न राकेटों, उनसे सम्बद्ध उपकरणों के साथ 10 से अधिक राकेट प्रणालियाँ विकसित की जा चुकी हैं। जिनमें Rh-75, Rh-100, Rh-125, Rh-300, Rh-560, मेनका-1, मेनका-2 आदि बहुखंडीय राकेट शामिल हैं। परिज्ञापी राकेटों की शृंखला का आखिरी राकेट Rh-560 था और इसी के साथ परिज्ञापी राकेटों की शृंखला समाप्त घोषित कर दी गई।

एस एल वी-3 की उड़ान और संशय की वह घड़ी

परिज्ञापी राकेटों की विकास यात्रा के बाद भारत ने ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के निर्देशन में भारत के पहले राकेट एसएलवी-3 (Satellite Launching Vehicle) के निर्माण की प्रक्रिया आरंभ की। इसके लिए हमने 'रोहिणी' शृंखला के उपग्रहों का निर्माण किया जिनका उद्देश्य ही था इस बात की जाँच करना कि हमारा एसएलवी-3 राकेट 38-40 किग्रा. वजनी उपग्रहों को पृथ्वी की 400-500 किमी. की निचली कक्षा में स्थापित कर सकता है या नहीं?

इसका प्रथम परीक्षण 10 अगस्त 1979 को किया गया। यह एसएलवी-3 की प्रथम प्रायोगिक उड़ान (First Experimental Flight) थी। राकेट उड़ा तो जरूर पर चार चरणीय राकेट के दूसरे खंड की नियंत्रण प्रणाली में खराबी आ जाने से (चौथे खंड के सक्रिय होने से पूर्व ही) आसमान में जाने की बजाय बंगाल की खाड़ी में जा समाया।

इस विफलता से अब्दुल कलाम (एसएलवी-3 के परियोजना निदेशक) बुरी तरह टूट चुके थे और उन्हें लगा कि इस विफलता की जिम्मेदारी सिर्फ उन्हीं के कंधों पर है लेकिन प्रो0 ब्रह्म प्रकाश ने उन्हें संभाला, दिलासा दिलाया और इस प्रकार अब्दुल कलाम अवसाद से मुक्त हुए। बकौल कलाम- 'पहले चरण ने पूर्ण सफलता से अपना काम किया। हम एसलएलवी-3 को उड़ता हुए देखने की उम्मीदें लिए हुए थे लेकिन अचानक एक गड़बड़ी आ गई और हमारी उम्मीदों को धक्का लगा। राकेट का दूसरा चरण नियंत्रण से बाहर हो गया, 317 सेकंड के बाद ही उड़ान बंद हो गई और चौथे चरण सहित पूरा यान श्रीहरिकोटा से 560 किमी. दूर समुद्र में जा समाया।'

इस घटना से हम सबको गहरा धक्का लगा। मुझे नाराजगी और निराशा दोनों हुई। आपको 'इसका क्या कारण लगता है?' किसी ने ब्लॉक हाउस में मुझसे यह पूछा। मैंने इसका जवाब ढूँढ़ने की कोशिश की लेकिन मैं काफी थका हुआ था। अतः मैने निरर्थक समझते हुए इसका कारण ढूढ़ने की कोशिश छोड़ दी। प्रक्षेपण जल्दी सुबह हुआ था। पूरी रात उल्टी गिनती चली थी। पिछले एक हफ्ते से मुश्किल से ही थोड़ा सो पाया था। मानसिक और शारीरिक रूप से थका हुआ मैं अपने कमरे में गया और बिस्तर पर कटे पेड़ सा गिरा।

मेरे कंधे पर हाथ रखकर किसी ने मुझे जगाया। दोपहर खत्म हो चुकी थी और शाम होने जा रही थी। मैंने देखा, डॉ0 ब्रह्म प्रकाश मेरे पास बैठे हुए हैं। 'खाने का क्या हो रहा है?' उन्होंने पूछा। उनका यह स्नेह व चिंता मुझे गहराई तक छू गई। मुझे बाद में पता चला कि इससे पहले भी दो बार डा0 ब्रह्म प्रकाश मेरे कमरे में आए थे लेकिन मुझे सोता देखकर लौट गए थे। वह पूरे समय यह प्रतीक्षा करते रहे कि मैं उठ जाऊँ और फिर उनके साथ दोपहर का भोजन करूँ। मैं उदास तो था, लेकिन अकेलापन नहीं लग रहा था। डॉ0 ब्रह्म प्रकाश के साथ ने मेरे भीतर एक नया विश्वास जगाया। खाना खाते वक्त उन्होंने बहुत ही कम बातचीत की और सावधानीपूर्वक एसएलवी-3 जिक्र से बचते हुए बहुत ही शालीनता से मुझे दिलासा दी। और इस प्रकार प्रो0 ब्रह्म प्रकाश जैसे तपोनिष्ठ विज्ञानी ने तरुण कलाम को संजीवनी शक्ति दी, फलस्वरूप उन्हें भारतीय राकेटों के जनक होने का श्रेय मिला।

इसके बाद एसएलवी-3 की दूसरी उड़ान 18 जुलाई, 1980 को आयोजित की गई जिसमें इसे 'रोहिणी-आरएस-1' नामक उपग्रह को 400-500 किमी. की ऊँचाई वाली पृथ्वी की निचली कक्षा में स्थापित करना था। राकेट ने ऐसा किया भी लेकिन उसने उपग्रह को वांछित कक्षा से कहीं अधिक ऊँचाई पर स्थापित कर दिया, फलतः उसका जीवन काल 100 दिनों से बढ़कर एक वर्ष हो गया। यह एक तकनीकी त्रुटि थी जिसका निराकरण जरूरी था। लेकिन एसएलवी-3 की अगली उड़ान में भी हम उसे नियंत्रित नहीं कर सके।

एसएलवी-डी3 की तीसरी उड़ान (पहली विकासात्मक उड़ान) और भी दुर्भाग्यपूर्ण रही। 31 मई, 1981 को राकेट ने 'रोहिणी-आरएस-डी1' नामक उपग्रह को लेकर उड़ान भरी। पूर्व घोषणा के अनुसार इसे अंतरिक्ष में 300 दिनों तक रहना था पर राकेट उसे वांछित कक्षा में पहुँचा ही नहीं सका, फलस्वरूप, यह सप्ताह भर में गिर कर विनष्ट हो गया।

17 अप्रैल, 1983 को एसएलवी-3 की चौथी और आखिरी उड़ान (दूसरी विकासात्मक उड़ान) आयोजित की गई जिसमें इसने 'रोहिणी-आरएस-डी2' नामक उपग्रह की सफल स्थापना की। इसी के साथ भारत अंतरिक्ष क्लब का छठाँ सदस्य राष्ट्र बन गया। इसका तात्पर्य यह है कि जो राष्ट्र अपने ही राकेटों से अपने उपग्रहों का सफल प्रक्षेपण कर लेते हैं, उन्हें 'स्पेस क्लब' में शामिल कर लिया जाता है।

एक निर्णायक मोड़

इस छोटी सी सफलता ने भारतीय विज्ञान में एक निर्णायक मोड़ लिया। एसएलवी-3 राकेट से 'रोहिणी-आरएस-डी2' की सफल स्थापना से भारतीय विज्ञान में दो समांतर धाराएँ पनपीं।

इसी सफल प्रक्षेपण के साथ छोटे राकेटों का एक युग समाप्त हो गया और भारत शनैः-शनैः बड़े और शक्तिशाली राकेटों के विकास की ओर उन्मुख होता चला गया और साथ ही भारत के प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम की आधारशिला निर्मित हो गई जिसकी चर्चा आगे की गई है।

SLV-3 की सफलता के बाद हमने SLV, PSLV और GSLV जैसे राकेट बनाए। इनमें से SLV-3 और ASLV जैसी राकेट शृंखलाएँ समाप्त कर दी गई हैं। हमारा ध्रुवीय राकेट (Polar Satellite Launching Vehicle-PSLV) अभी भी अपनी उड़ाने भर रहा है और उसने कई कीर्तिमान स्थापित किए हैं।

ध्रुवीय राकेट की अब तक 30 उड़ानें आयोजित हो चुकी हैं। इसकी पहली और एकमात्र उड़ान (PSLV-D1;20 सितंबर, 1993) विफल हुई थी जिसके साथ उपग्रह IRS-1E भी जलकर विनष्ट हो गया था। इसके बाद ध्रुवीय राकेट ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। इसकी 25वीं और लगातार 24वीं सफल उड़ान 5 नवंबर, 2013 (मिशन PSLV-C25) को आयोजित हुई जिसमें इसने भारत के मंगल यान (Mars Orbiter Mission) को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया। इस 'इसरो' की बहुत बड़ी उपलब्धि है जिससे विश्व मंच पर भारत का गौरववर्धन हुआ है।

इसके पूर्व ध्रुवीय राकेट ने 28 अप्रैल, 2008 की उड़ान (PSLV-C9) में एक साथ 10 उपग्रहों (8 विदेशी) का सफल प्रक्षेपण किया। अंतरिक्ष विज्ञान के इतिहास में यह एक रिकार्ड है।

ध्रुवीय राकेट ने 22 अक्टूबर, 2008 को (मिशन PSLV-C11) भारत के चंद्र मिशन 'चंद्रयान-1' की चंद्रमा की कक्षा में सफल स्थापना की।

10 जुलाई, 2015 को ध्रुवीय राकेट (PSLV-C28) ने एक साथ 45 ब्रिटिश उपग्रहों का सफल प्रमोचन किया। यह अब तक की सबसे भारी व्यावसायिक उड़ान थी जिसमें पाँचों उपग्रहों का भार 1440 किग्रा0 था।

26 मई, 1999 (PSLV-C2) से लेकर 30 जून, 2014 तक (PSLVC23) ध्रुवीय राकेट ने 19 विदेशी राष्ट्रों के 40 उपग्रहों का प्रमोचन किया। इस ताजी उड़ान में प्रमोचित 5 ब्रिटिश उपग्रहों को लेकर इनकी संख्या 45 हो गई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्ष 1994 से लेकर 2015 तक की अवधि में PSLV की 29 सफल उड़ानों से 45 विदेशी उपग्रहों समेत कुल 77 उपग्रहों की सफल स्थापना की गई है।

प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम के पुरोधा

तिरूचिरापल्ली के सेंट जोसेफ कालेज से विज्ञान में स्नातक करने के बाद उन्होंने आई.आई.टी., मद्रास से वैमानिक अभियांत्रिकी (Aeronautical Engineering) में विशेषज्ञता अर्जित की। तत्पश्चात 1958 से 'रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन' (Defence Research and Development Organization - DRDO) में रक्षा वैज्ञानिक के रूप में कार्य करने लगे। 1963 में इन्हें 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' (ISRO) में स्थांतरित कर दिया गया। 1963 से 1980 तक वह 'इसरो' से सम्बद्ध रहे, जहाँ परियोजना निदेशक के रूप में उन्होंने प्रथम भारतीय राकेट 'एसएलवी-3' को अंजाम दिया।

1982 में वह रक्षा अनुसंधान और विकास प्रयोगशाला के निदेशक के रूप में हैदराबाद चले गये और इस तरह उन्हें रक्षा अनुसंधान और

विकास संगठन में पुनः सम्मिलित कर लिया गया और जब जुलाई 1983 में 'समेकित निर्देशित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम' (IGMDP) का गठन हुआ तो निःसंदेह डॉ0 कलाम को इसका अगुआ बनाया गया।

मिसाइलों के निर्माण के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने जुलाई 1983 में एक परियोजना की आधारशिला रखी थी, जिसका नाम था - 'समेकित निर्देशित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम' और इस योजना की शुरुआत के लिए उन्होंने 380 करोड़ रुपये की धनराशि स्वीकृत की। प्रायः 6 वर्षों की लघु अवधि में ही कलाम और उनके सहयोगियों ने 5 प्रक्षेपास्त्रों - पृथ्वी, अग्नि, नाग, आकाश और त्रिशूल का सफल परीक्षण और विकास समपन्न करके दिखा दिया। इनमें से तीन प्रक्षेपास्त्रों पृथ्वी, अग्नि और आकाश की सैन्य तैनाती भी हो चुकी है।

आस्थावादी थे कलाम

आइंस्टाइन तो अनास्थावादी थे लेकिन कलाम को ईश्वर की सार्वभौमिकता में पूर्ण आस्था थी। कलाम ने इसकी स्वीकारोक्ति भी की है- मेरी कहानी जैनुअल आब्दीन के बेटे की कहानी है, जो रामेश्वरम् की मसजिद वाली गली में सौ साल से ज्यादा तक रहे और वहीं अपना शरीर छोड़ा। यह किशोर की कहानी है, जिसने अपने भाई की मदद के लिए अखबार बेचे। यह कहानी शिव सुब्रह्मण्य अय्यर एवं अयादुरै सोलोमन के शिष्य की कहानी है। यह उस छात्र की कहानी है जिसे पनदलाई जैसे शिक्षकों ने पढ़ाया। यह उस इंजीनियर की कहानी है जिसे एम.जी.के. मेनन ने उठाया और प्रो. साराभाई जैसी हस्ती ने तैयार किया, और एक ऐसे कार्यदल नेता की कहानी, जिसे बड़ी संख्या में विलक्षण व समर्पित वैज्ञानिक का समर्थन मिलता रहा। यह छोटी सी एक कहानी मेरे जीवन के साथ ही खत्म हो जाएगी। मेरे पास न धन, न संपत्ति, न मैंने कुछ इकट्ठा किया, कुछ नहीं बनाया है, जो ऐतिहासिक हो, शानदार हो, आलीशान हो। पास में कुछ नहीं रखा है- कोई परिवार नहीं, बेटा नहीं, बेटा-बेटी नहीं।

मैं नहीं चाहता कि मैं दूसरों के लिए कोई उदाहरण बनूँ। लेकिन मुझे विश्वास है कि कुछ लोग मेरी इस कहानी से प्रेरणा जरूर ले सकते हैं और जीवन में संतुलन लाकर वह संतोष प्राप्त कर सकते हैं, जो सिर्फ आत्मा के जीवन में ही पाया जा सकता है। मेरे परदादा अबुल, मेरे दादा पकीर और मेरे पिता जैनुल आब्दीन की पीढ़ी अब्दुल कलाम के साथ ही खत्म होती है, लेकिन उस सार्वभौम ईश्वर की कृपा इस पुण्यभूमि पर कभी खत्म नहीं होगी, क्योंकि वह तो शाश्वत है।जीवन में ही पाया जा सकता है। मेरे परदादा अबुल, मेरे दादा पकीर और मेरे पिता जैनुल आब्दीन की पीढ़ी अब्दुल कलाम के साथ ही खत्म होती है, लेकिन उस सार्वभौम ईश्वर की कृपा इस पुण्यभूमि पर कभी खत्म नहीं होगी, क्योंकि वह तो शाश्वत है। नियति से मिलन का संदेश जैसा कि मैंने इस आलेख के आरंभ में ही लिख दिया था कि डॉ0 कलाम की ईश्वर में गहन आस्था थी। उन्हें इस दुनिया से जाने का संदेश भी नियति ने दे दिया था।

कलाम ने अपनी अंतिम पुस्तक "Transcendence : My Spiritual Experiments with Pramukh Swamiji" (29 जून, 2015 को प्रकाशित) में लिखा कि 'अब स्वामी जी ने मुझे दैव समकालिक कक्षा (God synchronous orbit) में पहुँचा दिया है। अब मुझे कुछ नहीं करना है। जो लिखना था, वह सब लिखा जा चुका है (Whatever has to be written has been written) और इस तरह नियति की डोर ने उन्हें इस धरती से महाप्रयाण की इंगिति कर दी थी।

83 वर्षीय कलाम 27 अगस्त 2015 को इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, शिलांग के विद्यार्थियों को संबोधित कर ही रहे थे कि अचानक उनकी आवाज चली गई। उन्हें हृदयाघात हो गया और अंततः डॉ. कलाम कालातीत हो गए। लेकिन नहीं, हम जब भी भारतीय राकेटों और प्रक्षेपास्त्रों पर पुनश्चर्चा करेंगे तो डॉ. कलाम की हमें याद आयेगी। डॉ. कलाम की चर्चा के बिना भारतीय राकेट विज्ञान और प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम की चर्चा अधूरी रहेगी। विज्ञान ऋषि, भारत के पूर्व राष्ट्रपति और 'भारत रत्न' समादृत डॉ. कलाम को हमारी विनम्र श्रद्धांजलियाँ!

सबका अभिवादन

जीएसएलवी-डी6 की सफल उड़ान अंतरिक्ष में आत्मनिर्भरता

किसी भी अंतरिक्ष अनुसंधानकर्ता देश का सपना होता है कि वह 36,000 किमी. की ऊँचाई वाली भू-स्थिर/भू-समकालिक (जीएसओ) कक्षा में उपग्रह को स्थापित कर सकने की क्षमता प्राप्त कर ले। भारतीय रॉकेट जीएसएलवी 'मार्क-II की 27 अगस्त, 2015 की सफल उड़ान (मिशन जीएसएलवी-डी6) से यह उपलब्धि अर्जित करके भारत भी उन पाँच राष्ट्रोंअमेरिका, रूस, फ्रांस, चीन और जापान के विशिष्ट क्लब में शामिल हो चुका है जो जीएसओ (जियो स्टेशनरी आर्बिट) में उपग्रह स्थापित करने में सक्षम हैं।

उड़ान की तैयारी

ढाई-तीन हजार किग्रा. या इससे भी वजनी उपग्रहों की स्थापना के लिए प्रयुक्त रॉकेटों के ऊपरी चरण में क्रायोजेनिक इंजन संलग्न किया जाता है और भारत ने भी इसमें महारत हासिल कर ली है। इसरो के वैज्ञानिकों की प्रायः दो दशकों की तपोनिष्ठा के उपरांत भारत को यह उपलब्धि हासिल हुई है। सद्यः उड़ान स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन संलग्न जीएसएलवी-मार्क-घ्घ की लगातार दूसरी सफल उड़ान है। इसकी भार वाहन क्षमता 2-5 टन है।

इस सफलता की भी एक कहानी है। सन् 1991 में ही इसरो ने रूसी अंतरिक्ष संगठन ग्लाव कास्मॉस (अब रास कास्मॉस) से क्रायोजेनिक इंजन और उसके तकनीकी ज्ञान (टेक्निकल नो हाऊ) के हस्तांतरण का समझौता किया था। तब रूसी महासंघ विघटन के कगार पर था और अमेरिकी दबाव में उसने न तो क्रायोजेनिक इंजन दिया और न ही उसका तकनीकी ज्ञान। अमेरिका का तर्क था कि क्रायोजेनिक इंजनों का इस्तेमाल भारत प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी में कर सकता है जो नितांत अवैज्ञानिक अवधारणा थी। जीएसएलवी राकेट के सबसे ऊपरी चरण (तीसरे) में अत्यंत निम्न तापीय क्रायोजेनिक प्रयुक्त किए जाते हैं जिनमें ईंधन के रूप में द्रव हाइड्रोजन (-253 डिग्री. सेल्सियस) और आक्सीकारी के रूप में द्रव आक्सीजन (-183 डिग्री. सेल्सियस) प्रयुक्त किए जाते हैं। ऐसे निम्न तापीय इंजन तो प्रक्षेपास्त्रों में प्रयुक्त ही नहीं किए जा सकते हैं। चूँकि अनुबंध पत्र पर हस्ताक्षर हो चुके थे, अतः इंजनों की आपूर्ति तो करनी ही थी। तत्कालीन रूसी राष्ट्रपति बोरिस यल्तसिन ने बीच का एक रास्ता निकाला। उन्होंने क्रायोजेनिक इंजन का तकनीकी ज्ञान तो देने से मना कर दिया लेकिन 6 इंजनों के साथ एक और अतिरिक्त इंजन की आपूर्ति कर दी जिसमें से हम 6 इंजनों का इस्तेमाल कर चुके हैं। इनमें से मात्र तीन उड़ानें ही सफल रही हैं। ये उड़ानें जीएसएलवी 'मार्क-I' श्रेणी की थीं जिनकी भार वहन क्षमता 1.8 टन है।

बहरहाल, जब रूस ने ऐसी बाधा उत्पन्न की तो उसी समय भारत सरकार ने महेन्द्र गिरि, तमिलनाडु में द्रव प्रणोदन प्रणाली केंद्र (एलपीएससी) की स्थापना की जहाँ पर स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन के विकास की प्रक्रिया आरंभ हुई और अब प्रायः 20 वर्षों के बाद भारत को इसमें कामयाबी हासिल हुई है जो बहुत बड़ी उपलब्धि है।

अच्छी-खासी तैयारी के साथ जीएसएलवी की छठीं उड़ान में पहली बार स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन का इस्तेमाल किया गया। 15 अप्रैल, 2010 को जीएसएलवी-डी3 ने सायं 4.27 बजे श्रीहरिकोटा से उड़ान भरी। प्रक्षेपण के 293 सेकंड तक (दूसरे खंड के प्रज्वलन तक) रॉकेट की दिशा और पथ एकदम ठीक था लेकिन इसी के बाद यान पथभ्रष्ट हो गया। अपने पथ से विचलित होते ही रॉकेट 2000 किग्रा. वजनी उपग्रह 'जीसैट-4' के साथ बंगाल की खाड़ी में जा समाया और हमारी आशाओं पर तुषारापात हो गया।

खासी मशक्कत के बाद तकनीकी बाधा पार कर ली गई। स्वदेशी क्रायोजेनिक संलग्न जीएसएलवी की अगली उड़ान कामयाब रही। इसरो के लिए जीएसएलवी यान की तकनीकी परिपक्वता सबसे बड़ी चुनौती थी और उसका यही आसन्न संकट भी था। खुशी की बात है कि अब इसरो ने वह बाधा पार कर ली है।

स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन संलग्न राकेट की अगली उड़ान (जीएसएलवी-डी-5) की आयोजना हमने पहले 19 अगस्त, 2013 को थी लेकिन लिफ्ट ऑफ के 75 मिनट पूर्व ज्ञात हुआ कि इसके दूसरे चरण के प्रणोद टैंक से द्रव ईंधन का रिसाव होने लगा जो रॉकेट के प्रथम चरण और उससे संलग्न चारों बूस्टरों को गीला कर चुका था, फलस्वरूप उड़ान स्थगित कर दी गई।

जीएसएलवी-डी6 का प्रमोचन

विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि तकनीकी बाधा रॉकेट के दूसरे चरण के प्रणोद टैंक को लेकर उत्पन्न हुई थी जो एल्युमिनियम की मिश्राधातु 'एफ्ना 7020' निर्मित थी जिसमें ऐन वक्त पर रिसाव आरंभ हो गया और द्रव ईंधन यान पर बहने लगा। फिर इसरो के वैज्ञानिकों ने एल्युमिनियम की दूसरी मिश्र धातु '2219' प्रयुक्त की और गतिरोध समाप्त हो गया। इस बार रॉकेट के पहले और दूसरे चरणों को बदल दिया गया और पहले चरण के साथ संलग्न बूस्टरों की मरम्मत की गई क्योंकि वे गीले हो चुके थे। इनमें इस बार नए इलेक्ट्रानिक कलपुर्जे लगाए गए और लीजिए 'इसरो' ने खासी मशक्कत के बाद छू लिया बुलंदियों का एक नया आसामान।

सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र, श्रीहरिकोटा से जीएसएलवी-डी5 ने 5 जनवरी, 2014 को सायं 4.18 बजे उड़ान (आठवीं) भरी। लिफ्ट आफ

के 5 मिनट बाद स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन में प्रज्वलन आरंभ हुआ और इसने 720 सेकंड तक प्रज्वलित रहकर 1982 किग्रा. वजनी भारत के संचार उपग्रह 'जीसैट-14' को 36,000 किमी. की ऊँचाई वाली भू-स्थिर कक्षा में सफलतापूर्वक स्थापित कर दिया। इसरो के इंजीनियरों की मेहनत रंग लायी और इस प्रकार इसरो की चुनौतियों और आशंकाओं पर विराम लग गया।

जीएसएलवी की ताजी नौवीं उड़ान (मिशन जीएसएलीव-डी6) 27 अगस्त, 2015 को श्रीहरिकोटा से संपन्न हुई। राकेट ने सायं 4.52 बजे उड़ान भरी और लिफ्ट ऑफ के 17 मिनट बाद इस पर सवार 2117 किग्रा. वजनी हमारे नवीनतम संचार उपग्रह 'जीसैट-6' को भूस्थिर अंतरण कक्षा में स्थापित कर दिया। शीघ्र ही इसका कक्षोन्नयन कर इसे भू-स्थिर कक्षा (36,000 किमी.) में पहुँचा दिया जायेगा। उपग्रह की कार्यकारी अवधि 9 वर्ष आंकलित की गई है। 'जीसैट-6' इसरो द्वारा निर्मित 25वाँ संचार उपग्रह है और 'जीसैट' शृंखला में 12वाँ उपग्रह है।

जीएसएलवी मार्क-छ्ह की लगातार दूसरी सफल उड़ान ने सिद्ध कर दिया है अब भारत ने भी क्रायोजेनिक तकनीक में दक्षता अर्जित कर ली है। अब हम अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हैं। हमारा अंतरिक्ष बजट भी काफी कम हो गया है। जितनी प्रक्षेपण राशि हम फ्रेंच राकेट एरियन के लिए देते थे वह राशि अब घटकर मात्र एक तिहाई रह गई है।

इस सफल उड़ान ने उस अमेरिका का भी दर्प दमन कर दिया है जिसने भारत-रूसी 'क्रायो डील' को खारिज करा देने में कोई कोर कसर न छोड़ी थी। यह उपक्रम उसी चुनौती का माकूल जवाब भी है। लेकिन वक्त का मिजाज तो देखिए, वही अमेरिका अब हमारा सहभागी बनने जा रहा है। 'निसार' (नासा इसरो सार मिशन) नासा और इसरो का संयुक्त मिशन है जो 2020-21 तक वजूद में आयेगा। इस मिशन में जीएसएलवी मार्क-II राकेट प्रयुक्त किए जायेंगे जिससे वैश्विक पर्यावरणीय परिवर्तनों और आसन्न खतरों का अध्ययन संभव होगा।

अन्तरिक्ष में जीएसएलवी-डी6

> "हम दोनों हिन्दू और मुसलमान साथ-साथ और प्रेम से रहें और सोलह आने राष्ट्रवादी बनने का उपाय करें, जिससे देश अपने पुराने वैभवयुक्त स्थान को प्राप्त कर सके।"
>
> –महामना पं. मदन मोहन मालवीय

ISSN 2231 - 2455

रोचक है हमारा सौरमंडल

प्रो0 कृष्ण कुमार मिश्र*

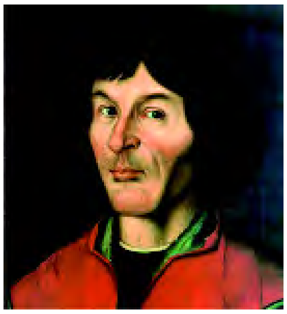

निकोलस कोपर्निकस

आकाश तथा खगोलीय पिंड आदि काल से मानव सभ्यता के लिए कौतूहल का विषय रहे हैं। पहले के जमाने में ऐसा विश्वास किया जाता था कि आसमान धरती का छत है। लोगों का यह भी यकीन था कि आकाश पहाड़ों पर टिका हुआ है। कई लोगों का यह भी मानना था कि आकाश में कोई छेद है

जिससे स्वर्गलोक का प्रकाश नीचे आता है। लोगों की यह धारणा थी कि पृथ्वी चपटी है, तथा सूरज, चाँद और तारे इसके चारों ओर घूमते हैं। इस तरह के विचार तथा मत तकरीबन हर प्राचीन सभ्यता में मिलते हैं। लेकिन सोलहवीं सदी में पोलैंड के एक पादरी निकोलस कोपर्निकस ने इन विचारों का विरोध किया। उन्होंने बताया कि पृथ्वी और अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं 'सूर्य के इर्द-गिर्द परिक्रमा करने के साथ ही धरती अपनी धुरी पर भी घूमती है। चंद्रमा धरती का उपग्रह है जो इसके चारों ओर घूमता है। कोपर्निकस ने विचारों पर आधारित एक पुस्तक लिखी। बाद में महान खगोलविज्ञानी कार्ल ब्रूनो और गैलीलियों ने कोपर्निकस की कही हुई बातों को सही ठहराया।

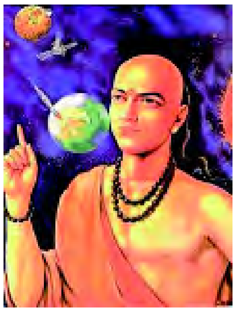

आर्यभट

भारत के प्राचीन विद्वान आर्यभट ने पाँचवीं शताब्दी में ही यह बता दिया था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। खगोलीय पिंडों के बारे में प्राचीन विद्वानों ने पता कर लिया था कि आकाश में सूरज, चाँद और सितारों के अलावा सौरमंडल के ग्रह भी हैं। उन्होंने सौरमंडल के पाँच प्रमुख ग्रहों- मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि की पहचान भी कर ली थी। सूर्य हमारे खगोलमंडल का मुख्य तारा है। इस समय सूर्य के 8 ग्रह हैं। पहले

ग्रहों की कुल संख्या 9 थी। लेकिन कुछ वर्ष पहले अंतर्राष्ट्रीय खगोल संगठन ने प्लूटो का दरजा घटाकर उसे सिर्फ छुद्र ग्रह का स्थान दिया। इससे ग्रहों की संख्या कम होकर 8 रह गयी है। सूरज सहित 8 ग्रहों, छुद्र गहों तथा उपग्रहों के समूचे परिवार को सौरमंडल या सौरपरिवार कहा जाता है। सूर्य आग के धधकते गोले की तरह है। यह गर्म गैसों से बना है। सूरज में सबसे अधिक हाइड्रोजन गैस और पाँचवा हिस्सा हीलियम गैस है। इसकी सबसे बाहरी परत प्रकाश की परत है जो हमें चमकती हुई दिखाई देती है। इस परत का तापमान 6000 डिग्री सेल्सियस है। सूरज की तुलना एक विशाल परमाणु भट्टी से की जा सकती है। सूरज के अंदर का तापमान लगभग दस लाख डिग्री सेल्सियस होता है। इतने अधिक तापमान पर हाइड्रोजन के परमाणु परस्पर नाभिकीय संलयन से हीलियम में बदलने लगते हैं। इस क्रिया में बहुत अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है। सूरज से उठने वाले चुंबकीय तूफानों का असर हमारी पृथ्वी पर पड़ता है। सूरज के केंद्र में तापमान डेढ़ करोड़ डिग्री सेल्सियस होता है तथा हर सेकेण्ड 42.5 लाख टन हाइड्रोजन हीलियम में बदल रही है। खगोल विज्ञानियों का मानना है कि हमारा सूरज करीब 5 अरब वर्षों से चमक रहा है और आगे भी लगभग 8-9 अरब वर्षों तक चमकता रहेगा।

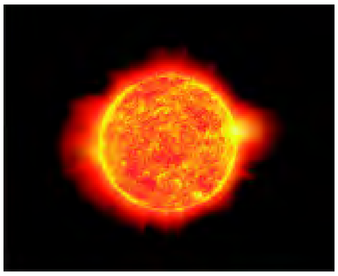

सूर्य

सूर्य के सबसे नजदीक का ग्रह है बुध। इसे सुबह-सुबह सूर्योदय के पहले पूरब दिशा में देखा जा सकता है। इसीलिए इसे अक्सर भोर का तारा भी कहा जाता है। शाम को सूर्यास्त के ठीक बाद पश्चिम के आकाश में भी बुध ग्रह को देखा जा सकता है। तब यह सांध्य तारा भी बन जाता है। वैसे बुध कोई तारा नहीं बल्कि एक ग्रह है। लेकिन चूँकि उसे भोर और संध्या काल में देखा जाता है इसलिए इंसान ने उसे तारा मान लिया है। वैसे आम आदमी के लिए तो बुध सुबह के आकाश में टिमटिमाने वाला भोर का तारा ही है। सूरज के सबसे नजदीक होने के कारण बुध का दिन का तापमान 470 डिग्री सेल्सियस तक हो जाता है। सूरज से बुध ग्रह की दूरी करीब 5 करोड़ 79 लाख किमी. है। बुध की सतह पर दूसरी ओर घना अंधेरा रहता है और बहुत ठंड पड़ती है। बुध के अंधेरे वाले भाग का तापमान शून्य से भी 170 डिग्री सेल्सियस नीचे तक चला जाता है।

बुध ग्रह

बुध ग्रह का व्यास 4878 किमी. है। बुध की धरती ठोस तथा बहुत रूखी-सूखी है। इसकी सतह पर काली चट्टानों की धूल और रेत बिखरी हुई है। उल्का पिंडों के टकराने के कारण मैदानी सतह पर बड़े-बड़े गड्ढे बन गए हैं। बुध एक छोटा ग्रह है इसलिए वह गैसों

*होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, वी.एन. पुरव मार्ग, मानखुर्द, मुंबई-400 088.

को अपने चारों ओर गुरुत्वाकर्षण से बाँधकर नहीं रख सका। इसलिए वहाँ वायुमंडल नहीं है जिसके कारण वहाँ किसी भी प्रकार का जीव नहीं है। वहाँ न हवा है और न पानी। बुध ग्रह 88 दिनों में सूरज का एक चक्कर लगाता है। यह अपनी धुरी पर बहुत धीरे-धीरे घूमता है।

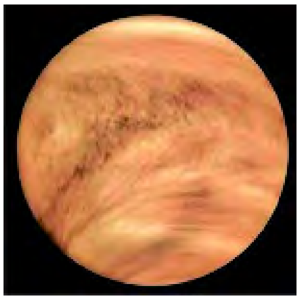

शुक्र ग्रह

शुक्र ग्रह सूर्य का दूसरा नजदीकी ग्रह है। यह सूर्य से 10 करोड़ 82 लाख किमी. दूरी है। शुक्र ग्रह चमकदार होता है क्योंकि वह गैस के बादलों से घिरा है। ये बादल सूरज की ज्यादातर रोशनी वापस लौटा देते हैं। इसलिए वे चमकदार दिखाई देते हैं। शुक्र को प्रायः पृथ्वी का जुड़वाँ ग्रह भी कहते हैं क्योंकि यह आकार में करीब पृथ्वी के बराबर ही है। इसका व्यास 12,104 किमी. है जबकि हमारी पृथ्वी का व्यास 12,756 किमी. है। यह सूर्य की परिक्रमा 225 दिनों में पूरी करता है। शुक्र अपनीधुरी पर भी घूमा है। लेकिन यह अपनी धुरी पर उल्टी दिशा में घूमता है और 243 दिनों में एक चक्कर पूरा करता है। शुक्र ग्रह पर वायुमंडल भी है। लेकिन यहाँ के वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस सबसे ज्यादा है। करीब 96 प्रतिशत तो कार्बन डाइऑक्साइड गैस ही है और 3.5 प्रतिशत नाइट्रोजन गैस है। वायुमंडल में आक्सीजन बहुत नाममात्र ही है। शुक्र ग्रह पर आज भी ज्वालामुखी धधक रहे हैं। वहाँ ऊँचे-ऊँचे पहाड़ मौजूद हैं। शुक्र ग्रह का पर्वत धरती के माउंट एवरेस्ट से भी ऊँचा है तथा उसकी ऊँचाई 9.5 किमी. है। शुक्र की धरती पर लंबी-चौड़ी दरारों का भी पता लगा है। शुक्र ग्रह पर परिस्थितियाँ जीवन के प्रतिकूल हैं अतः वहाँ किसी जीव के पाए जाने की संभावना नहीं है।

हमारा अपना ग्रह पृथ्वी है। यह सूरज से आगे बढ़ते हुए तीसरा ग्रह है। वैसे पृथ्वी भी गोल है लेकिन ध्रुवों पर थोड़ी चपटी है। सौरमंडल का यही एक मात्र ग्रह है जहाँ जीवन है। प्राणी, पेड़-पौधे, सूक्ष्मजीव, रंग-बिरंगे फूल, हरे-भरे वन, चिड़िया, तितलियाँ, मछलियाँ और असंख्य प्रकार के जीवधारी हमारे इस ग्रह के निवासी हैं।

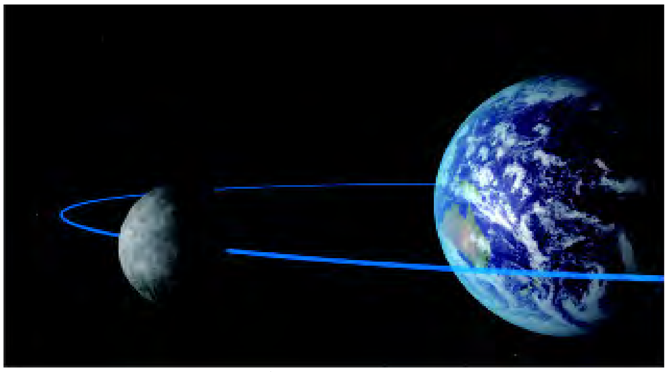

पृथ्वी और उसकी कक्षा में चन्द्रमा

पृथ्वी का एक उपग्रह भी है- चाँद। सूरज से पृथ्वी की दूरी 14 करोड़ 88 लाख किलोमीटर है। दूसरे ग्रहों की तरह यह भी सूरज के चारों ओर चक्कर लगाती है। सूर्य की एक परिक्रमा करने में पृथ्वी को 365 दिन, 5 घंटे 56 मिनट लगता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर 23.5 अंश झुकी हुई है। अपनी धुरी पर यह करीब 24 घंटे में एक चक्कर लगाती है। पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण दिन और रात होते हैं। पृथ्वी गोल है इसलिए इसके आधे हिस्से में ही सूर्य का प्रकाश पड़ता है। बाकी आधे हिस्से में अंधेरा रहता है। जिस भाग में सूर्य की रोशनी पड़ती है वहाँ पर दिन होता है और जिस भाग में नहीं पड़ती वहाँ रात होती है। चूँकि हमारी पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है, इसलिए यहाँ सूर्य पूरब में उगता तथा पश्चिम में अस्त होता दिखाई देता है। पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर घूमने के कारण धरती पर मौसम बदलते हैं।

पृथ्वी के धरातल का करीब दो-तिहाई हिस्सा पानी से ढ़का है। पृथ्वी पर हवा होने के कारण ही जीवन संभव हुआ है। हवा में करीब 78 प्रतिशत नाइट्रोजन और 21 प्रतिशत ऑक्सीजन गैस होती है। बाकी गैसें मिलाकर केवल 1 प्रतिशत होती हैं। पृथ्वी से ऊपर आकाश में धीरे-धीरे हवा कम होने लगती है और तापमान भी कम होने लगता है। हमारे ग्रह के जिन हिस्सों में जीवन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं, वह ‘जैवमंडल’ कहलाता है। धरती पर जल, थल तथा नभ, तीनों में जीवन संभव है इसीलिए ये सभी जैवमंडल हैं।

चंद्रमा हमारी पृथ्वी का एक प्राकृतिक उपग्रह है। यह पृथ्वी से 3 लाख 84 हजार किलोमीटर दूर है। चंद्रमा लगभग गेंद की तरह गोल है। उसके गोले का व्यास करीब 3,476 किलोमीटर है। इंसान 21 जुलाई 1969 को चाँद पर उतर चुका है। वहाँ की धरती पथरीली तथा सूखी है जिसमें गहरे खड्डे हैं। चंद्रमा जितने समय में पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है करीब उतने ही समय में अपनी धुरी पर भी एक बार घूमता है। इस कारण हमें चंद्रमा का एक ही भाग दिखाई देता है। चन्द्रमा का गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण की तुलना में छह गुना कम है। इसलिए चंद्रमा का कोई वायुमंडल नहीं है। पृथ्वी पर ज्वार-भाटा का कारण चाँद और सूरज दोनों हैं। लेकिन चूँकि चाँद पृथ्वी के नजदीक है, इसलिए समुद्र पर चंद्रमा का खिंचाव अधिक होता है। जैसे पृथ्वी चाँद को अपनी ओर खींचती है वैसे ही चाँद भी पृथ्वी को अपनी ओर खींचता है। इस खिंचाव से समुद्र का पानी चाँद की ओर खिंच जाता है। तब ‘ज्वार’ आता है। पृथ्वी के घूमने के कारण जब दूसरे हिस्से में सागर का पानी चाँद की ओर खिंचता है तो समुद्र में पानी के उतरने से ‘भाटा’ आता है।

मंगल ग्रह

मंगल ग्रह लाल रंग का दिखायी देता है। प्राचीनकाल में रोम के निवासी इसे ‘युद्ध का देवता’ मानते थे। इसलिए उन्होंने इसका नाम ‘मार्स’ रख दिया। मंगल ग्रह आदि काल से मानव के लिए कौतूहल का विषय रहा है। आज हम मंगल के बारे में काफी कुछ जान चुके हैं। वहाँ पर मानवनिर्मित यान उतर चुके हैं। वहाँ की धरती तथा वायुमंडल के बारे में हमें काफी जानकारी मिल चुकी है। मंगल की धरती

ISSN 2231 - 2455

लाल-गेरुये रंग की तथा रेतीली है। वहाँ की जमीन एकदम वीरान है जिसमें बड़े-बड़े गड्ढे तथा दरारें हैं। मंगल ग्रह के दो चाँद हैं- फोबोस और डेमोस। मंगल ग्रह पर ऋतुएँ भी होती हैं। वहाँ वसंत, ग्रीष्म, शरद और शीत ऋतुएँ होती हैं। यह हमारी पृथ्वी से छोटा है। इसके गोले का व्यास पृथ्वी से करीब आधा यानी करीब 6,800 किलोमीटर है। यहाँ का सबसे बड़ा ज्वालामुखी पर्वत 'ओलिंपस मोंस' 27 किलोमीटर ऊँचा है। यानी, एवरेस्ट पर्वत से तिगुना ऊँचा है 'ओलिंपस मोंस'। मंगल ग्रह पर धूल भरी आँधियाँ चलती रहती हैं। भारत ने भी मंगलयान नामक एक मिशन मंगल ग्रह पर भेजा हैं जो पिछले सौ दिन से मंगल की कक्षा में परिक्रमा कर रहा है। भारत दुनिया का चौथा तथा एशिया का पहला देश है जिसने मंगल पर कोई मिशन सफलतापूर्वक भेजा है। मंगलयान ने हमें वहाँ के धरातल तथा वायुमंडल के बारे में बेहद उपयोगी जानकारियाँ दी हैं। मंगल को लेकर वैज्ञानिक बहुत उत्साहित हैं। उनका मानना है कि आज से करीब 5-6 करोड़ वर्ष पहले मंगल के धरातल पर पानी था। लेकिन किन्हीं कारणों से बाद में वह जलराशि वहाँ से गायब हो गयी। अब तक भेजे गये यानों से कुछ ऐसे संकेत मिले हैं जिससे लगता है कि मंगल पर कभी जीवन रहा होगा। वैज्ञानिकों का मानना है कि मंगल ग्रह को इंसान के रहने लायक बनाया जा सकता है। लेकिन इस काम में कई वर्ष लगेंगे। वैज्ञानिक मंगल पर मानव बस्तियाँ बसाने की योजना पर काम कर रहे हैं।

बृहस्पति सौरमंडल का सबसे बड़ा ग्रह है। यह हमारी पृथ्वी से 64 करोड़ किलोमीटर दूर है। बृहस्पति इतना बड़ा है कि उसमें पृथ्वी के समान 1300 ग्रह समा सकते हैं। बृहस्पति ग्रह का व्यास 1 लाख 42 हजार किलोमीर है। यह सूर्य की एक परिक्रमा 11 वर्ष 9 माह में पूरा करता है। अपनी धुरी पर यह बहुत तेज घूमता है तथा 19 घंटे 55 मिनट में एक चक्कर लगा लेता है। यहाँ दिन-रात मिलाकर एक दिन का समय करीब 10 घंटे का होता है। बृहस्पति बाहर से तो ठंडा है पर भीतर से बहुत गर्म है। उसे सूरज से जितनी गर्मी मिलती है उससे अधिक गर्मी वह बाहर फेंकता है। इसका मतलब यह है कि बृहस्पति के भीतर ऊर्जा पैदा होती है। बृहस्पति के सतह का तापमान तो शून्य से 130 डिग्री नीचे रहता है लेकिन उसके केन्द्र का तापमान 30,000 डिग्री सेल्सियस तक माना गया है। बृहस्पति के भीतर भारी दबाव के कारण द्रव हाइड्रोजन ठोस रूप में बदल गई है। उसी के कारण गर्मी पैदा होती है। अब तक बृहस्पति के कुल 67 उपग्रहों का पता लग चुका हैं। सन् 1610 में गैलीलियो ने अपनी दूरबीन से बृहस्पति के 4 उपग्रहों- आयो, यूरोपा, गनीमिडे और कैलिस्टो को देखा था।

बृहस्पति ग्रह

शनि हमारे सौरमंडल के ग्रहों में बृहस्पति के बाद सबसे चमकदार ग्रह है। यह हल्के पीले रंग का दिखाई देता है। बेबीलोन के लोगों ने इसे 6500 वर्ष पहले ही देख लिया था। रोम के निवासी इसे सैटर्न देवता मानते थे। इसी तरह हमारे देश में भी यह शनि देवता मान लिए गए। यह आँखों से दिखाई देने वाला सौरमंडल का सबसे दूरस्थ ग्रह है। यह पृथ्वी से करीब 1 अरब 19 करोड़ किलोमीटर दूर है। इसका व्यास 1 लाख 20 हजार किलोमीटर है। यह बहुत खूबसूरत ग्रह है। शनि के चारों ओर सुंदर वलय हैं। शनि करीब साढ़े 29 वर्षों में सूर्य की एक परिक्रमा पूरा करता है। लेकिन अपनी धुरी पर यह बड़ी ही तेजी से घूमता है तथा 10 घंटे 40 मिनट में एक चक्कर लगा लेता है।

शनि ग्रह

अब तक शनि के 62 उपग्रहों का पता चला है। उसका सबसे बड़ा उपग्रह टाइटन है। वह बुध ग्रह से भी बड़ा है और मंगल ग्रह से बस थोड़ा ही छोटा है। शनि ग्रह से वह करीब 12 लाख किलोमीटर दूर है। टाइटन का व्यास 5,150 किलोमीटर है और वह लगभग 16 दिनों में शनि का एक चक्कर लगाता है। सौरमंडल का यह अकेला उपग्रह है जिस पर घना वायुमंडल है। इसके वायुमंडल में अधिकांश तो नाइट्रोजन है लेकिन कुछ मात्रा में मीथेन और साइनाइड भी हैं। टाइटन की सतह का तापमान शून्य से 200 डिग्री सेल्सियस कम है। वैज्ञानिकों का मानना है कि यहाँ जीवन को जन्म देने वाले तत्व मौजूद हैं और इसलिए इस पर गहराई से अध्ययन करने की जरूरत है।

यूरेनस हमारे सौरमंडल का सातवाँ ग्रह है। इसकी खोज विलियम हर्शल ने 1781 में की थी। यूरेनस सूर्य से करीब 2 अरब 87 करोड़ किलोमीटर दूर है। पहले-पहल जब हर्शेल ने इसे अपनी दूरबीन से देखा तो उन्हें लगा कि यह कोई तारा या फिर धूमकेतु है। लेकिन फिर बाद में यह पाया गया कि यह एक नया ग्रह है। यूरेनस नीले-हरे गोले की तरह दिखाई देता है। इसका व्यास 51,118 किलोमीटर है। यूरेनस हमारे सौरमंडल का तीसरा बड़ा ग्रह है। इसका द्रव्यमान पृथ्वी से 14.5 गुना ज्यादा है। यह 84 वर्षों में सूर्य का एक चक्कर लगा पाता है। अपनी धुरी पर यह करीब 17 घंटे में एक चक्कर लगाता है। यह अपनी धुरी पर इतना झुका हुआ है कि लेटा हुआ लगता है। सबसे खास बात यह है कि यह अन्य ग्रहों की तुलना में उल्टा घूमता है। यूरेनस मुख्यरूप से हाइड्रोजन और हीलियम गैसों से बना है। इसके वायुमंडल में मीथेन गैस का भी पता लगा है। वायुमंडल की गैसों का भीतर की ओर इतना दबाव है कि हाइड्रोजन वहाँ द्रव रूप में मौजूद है। भारी दबाव के कारण बृहस्पति और शनि की तरह यूरेनस के भीतर भी ऊर्जा बनती है। यूरेनस का तापमान शून्य से 215 से 220 अंश तक नीचे होता है इसलिए यहाँ बहुत ठंड पड़ती है। अब तक यूरेनस के 27 उपग्रहों का भी पता लगा है।

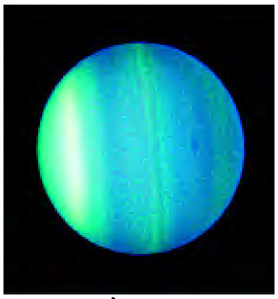

यूरेनस ग्रह

नेप्च्यून सूर्य का आठवाँ ग्रह है जो सबसे दूर है। यह सूर्य से करीब साढ़े चार अरब किलोमीटर दूर है। इसलिए यह ग्रह भी बहुत ठंडा है। इसके सतह का तापमान शून्य से 220 डिग्री कम होता है। सूर्य का एक चक्कर लगाने में इसे 165 वर्ष लग जाते हैं। इसके गोले का व्यास वायुमंडल सहित करीब 49,500 किलोमीटर है। हमारी पृथ्वी की तरह यहाँ भी चुंबकीय क्षेत्र होता है। इसके वायुमंडल की परत करीब 3000 किलोमीटर मोटी है। उसमें मीथेन गैस काफी मात्रा में है। इसके 14 उपग्रह भी हैं जिनमें मुख्य है 'ट्राइटन'। यह मीथेन की बर्फ से पूरी तरह ढ़ंका हुआ है। उस पर नाइट्रोजन की विशाल झीलें और सागर हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ट्राइटन का भीतरी हिस्सा चट्टानों का बना है।

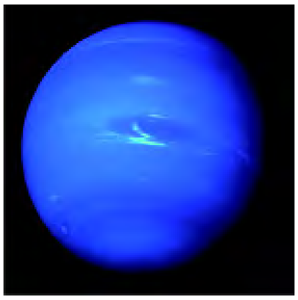
नेप्च्यून ग्रह

प्लूटो हमारे सौरमंडल का छुद्र ग्रह है। इसकी खोज 1930 में हुई थी। रोमन पौराणिक कथा के अनुसार मृत्यु के देवता को प्लूटो कहा जाता है। इसलिए इसका नाम प्लूटो रख दिया गया। यह हमारे चाँद से भी छोटा है। वैज्ञानिकों का अनुमान है। कि प्लूटो के गोले का व्यास करीब 2200 किलोमीटर है। प्लूटो सूर्य की एक परिक्रमा 248 वर्षों में कर पाता है। प्लूटो के अब तक 5 चंद्रमाओं का पता लगा है। इसके एक उपग्रह का नाम शेरॉन है। शेरॉन का व्यास 1,172 किलोमीटर है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि शेरॉन शायद पानी की बर्फ से ढ़ंका हुआ है। नासा द्वारा भेजे गये यान "न्यू होराइजन" ने जुलाई 2015 में प्लूटो के करीब से लिए गए चित्र भेजे हैं जिनसे उसके बारे में जानकारी मिली है।

प्लूटो

इन सभी ग्रहों और उपग्रहों के अलावा सौरमंडल में क्षुद्र ग्रह और धूमकेतु भी होते हैं। क्षुद्र ग्रह सूरज की बौनी संताने हैं। विशाल ग्रहों की तुलना में ये चट्टानों और धातुओं से बने होते हैं। इनका आकार कुछ मीटर से लेकर कई किलोमीटर तक हो सकता है। मंगल और बृहस्पति के बीच हजारों क्षुद्र ग्रहों की एक विशाल पट्टी है। उसीमें ये सूरज के चारों ओर घूम रहे हैं। अब तक ऐसे कई हजार क्षुद्र गहों का पता लग चुका है।

अंतरिक्ष में अनेक धूमकेतु भी होते हैं। इन्हें 'पुच्छलतारा' भी कहते हैं। ये सौरमंडल में प्रवेश करते हैं और सूरज का चक्कर लगाकर वापस लौट जाते हैं। सच पूछा जाए तो धूमकेतु अंतरिक्ष के यात्री हैं। लेकिन सौरमंडल की सैर करते-करते उनकी पूँछ बन जाती है। ये आकाश में विचरण करने वाली धूल तथा गैसों की बर्फीली गेदें हैं। असल में धूमकेतु का पहले केवल सिर होता है जो बर्फ की गेंद के रूप में सौरमंडल में प्रवेश करता है। फिर सूर्य की गर्मी से जमी हुई गैसें और बर्फ पिघलती है जिससे पूँछ बन जाती है जिनकी लंबाई कुछ किलोमीटर से लेकर लाखों किलोमीटर तक हो सकती है। हैली धूमकेतु हर 76 वर्ष बाद लौटकर सौरमंडल में आता है तथा पृथ्वी से दिखायी देता है। सन् 1986 में इसे आखिरी बार देखा गया था। ऐसे कई धूमकेतु अंतरिक्ष में सैर कर रहे हैं। इस तरह हम देखते हैं कि हमारा सौरमंडल बेहद खूबसूरत तथा रोचक है जिसमें अनेक तरह के खगोलीय पिंड हैं।

रोज कॉफी पीना हृदय रोग में फायदेमंद

अगर आप हर रोज तीन से पाँच कप कॉफी पीते हैं, तो इससे हृदय रोग से मरने का खतरा 21 प्रतिशत तक कम हो जाता है। यह बात एक नए अध्ययन में पायी गई है। पुर्तगाल के फैकल्डेड डी मेडिसिन डा यूनीवर्सिडेड डी लिस्बोआ के प्रोफेसर डाक्टर एंटेनियो वाज कारनीरो ने कहा, ऐसी बातों की पहचान करना जरूरी है जो हृदय रोग से मरने की संभावना कम करते हैं। थोड़ी मात्रा में कॉफी पीने से यह लाभ हासिल किया जा सकता है।

ISSN 2231 - 2455

अनावृष्टि का समाधान है कृत्रिम वर्षा

डॉ0 दिव्या पाण्डेय[1], मयंक पाण्डेय[2] एवं प्रो0 मधूलिका अग्रवाल[3]*

प्राचीनकाल से ही मनुष्य मौसम, खासतौर पर वर्षा को अपनी इच्छानुसार नियंत्रित करने का स्वप्न देखता रहा है। संभवतः सभी संस्कृतियों में वर्षा के आवह्न और अत्यधिक वर्षा को रोकने की प्रार्थना में अनेक कृत्य प्रचलित रहे हैं। भारतीय संस्कृति में इंद्रदेव जो कि वर्षा के देव हैं, सभी देवताओं में सर्वोच्च माने गये हैं। मूल अमरीकी जातियों के वर्षा नृत्य (rain dance), चीन में मौसम के मालिक ड्रेगनों की अर्चना, एजटेक सभ्यता में शिशुओं की बलि इत्यादि ऐसे कुछ उदाहरण हैं जो स्पष्ट करते हैं कि मौसम और उस पर नियंत्रण की इच्छा मानव जाति के लिए बेहद महत्वपूर्ण रहे हैं।

वर्षा चूँकि सीधे तौर पर जल की उपलब्धता और कृषि को प्रभावित करती है, इसीलिए यह मानव जाति को प्रभावित करने वाले प्रमुखतम कारणों में से एक है। 1801 से 2002 के बीच अकेले भारतवर्ष में 42 बार सूखे के कारण जन-धन की भारी हानि हुई है। आजादी के बाद 1979 के सूखे ने कृषि पैदावार को 20 प्रतिशत घटा दिया जबकि 1987 में पड़े सूखे से 28.5 लाख लोग प्रभावित हुए।

महाराष्ट्र में बारिश के कमी के कारण कपास उगाने वाले किसानों को भारी नुकसान हुआ। एक आँकड़े के अनुसार 2015 में 671 किसानों ने क्षुब्ध होकर आत्महत्या कर ली। इन सब कारणों से मौसम विज्ञानी वर्षा निर्माण के कारकों को समझने पर खास ध्यान देने लगे और प्राकृतिक वर्षा के विकल्प के रूप में कृत्रिम वर्षा पर विशेष खोज में जुट गये। मौसम के बारे में वैज्ञानिक जानकारी बढ़ने के साथ ईश्वर को प्रसन्न करने के बजाय मौसम को अपने हिसाब से बदलने की आकांक्षा मनुष्य के लिए प्राकृतिक है। वर्तमान में कृत्रिम तरीके से वर्षा करवाना अथवा रोकने के लिए तकनीक विकसित हो चुकी हैं और उनका प्रयोग भी आरंभ हो चुका है। इसका प्रयोग सबसे पहले अमेरिका में हुआ जो तेजी से विश्व के दूसरे हिस्सों में फैल गया। भारत में इसका प्रयोग हो रहा है और सूखाग्रस्त इलाकों के लिए यह तकनीक उत्साहवर्द्धक प्रतीत होती है। ऐसा बादलों के बीजीकरण या मेघबीजीकरण के कारण संभव हो सका है। यह एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें उपयुक्त पदार्थ को बादल के भीतर फैलाकर बादलों में नाभिकों या केंद्रिकों (nuclei) को उत्पन्न किया जाता है। इन केंद्रिकों के ऊपर लघु जलसीकारों (water droplets) तथा हिमकणों (ice crystals) के एकत्रित होने से उनके आकार में वृद्धि होती है और पानी की बूँदें तथा हिम गोलियों का निर्माण होता है जिससे वर्षा प्रारम्भ हो जाती है। इसके विपरीत बीजीकरण के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले पदार्थ की मात्रा और प्रकृति में बदलाव कर वर्षा/हिमपात अथवा ओलावृष्टि को रोका भी जा सकता है।

मेघबीजीकरण का प्रारम्भ

हालाँकि मेघबीजीकरण की सिद्धान्त एकदम सीधा सा प्रतीत होता है, इस प्रक्रिया के वर्तमान रूप का इतिहास काफी दिलचस्प है। इस प्रक्रिया को सर्वप्रथम विंसेट शेफर (1906-1993) द्वारा जुलाई 1946 में प्रस्तावित किया गया। बाद में नोबल पुरस्कार विजेता इर्विंग लेंगुइमीर के साथ मिलकर उन्होंने अत्यधिक ठंडे (super cooled) बादलों पर शोध किए। उन्होंने टेलकम पाउडर, नमक, मिट्टी, धूल के कण और विविध पदार्थों के प्रयोग पर शोध किए। उसी समय वैज्ञानिक बेरनाद वोन्नेवेत ने सिल्वर आयोडाइड AgI का प्रयोग कर मेघबीजीकरण का नया तरीका ईजाद कर लिया था। शेफर का तरीका बादलों के ऊष्मा बजट में बदलाव पर केन्द्रित था जबकि वोन्नेगट का क्रिस्टल संरचना में बदलाव पर।

13 नवम्बर 1946 को शेफर ने प्राकृतिक बादलों के बीजीकरण का पहला प्रयास किया। वह छः पाउंड ड्राइ आइस के प्रयोगकर पश्चिमी मेस्साचुसेट्स में स्थित माउंट ग्रेयलोक्क पर हिमपात करने में सफल रहे थे। इसके बाद कई प्रयोग जारी रहे। शुरुआत के अधिकतर प्रयोगों में AgI के मात्र छिड़काव का असर देखा जाता था लेकिन समय के साथ बादलों और मौसम विज्ञान की जानकारी में वृद्धि के कारण छिड़काव के सही समय, स्थान, मात्रा और सफलता/असफलता की आशंका की गणना भी की जाने लगी जिससे इस तकनीक को सस्ता और अधिक प्रभावी बनाया जा सके। 1950 के दशक में सूखे से पीड़ित इलाकों में इस प्रक्रिया का जमकर प्रयोग किया जाने लगा था। उस समय सफलता का प्रतिशत काफी कम था परन्तु यह तकनीक विवादों के घेरे में आ गयी क्योंकि इसका प्राकृतिक मौसम के ऊपर क्या प्रभाव हो सकता था, इसके बारे में जानकारी नगण्य थी। अतः इससे जुड़े शोध अत्यन्त वांछनीय थे। वर्तमान में भी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं हो पायी है, हालाँकि मेघबीजीकरण का प्रयोग कई देशों में वृहद स्तर पर किया जा रहा है।

प्रकिया

बीजीकरण के लिए सामान्यतः सिल्वर आयोडाइड (AgI) पोटैशियम आयोडाइड (KI), ड्राइ आइस और तरल प्रोपेन जो की गैस में फैलता है, दूसरे हयग्रोस्कोपिक रसायन जैसे साधारण नमक का प्रयोग किया जाता है। इनमें AgI का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता है। आण्विक स्तर पर AgI की सरंचना बर्फ की संरचना के बहुत समान होती है।

*[1]रिसर्च एसोशिएट (सीएसआईआर), [3]आचार्या व विभागाध्यक्ष, वनस्पति विज्ञान विभाग एवं [2]छात्र (एम.एससी.), भूविज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

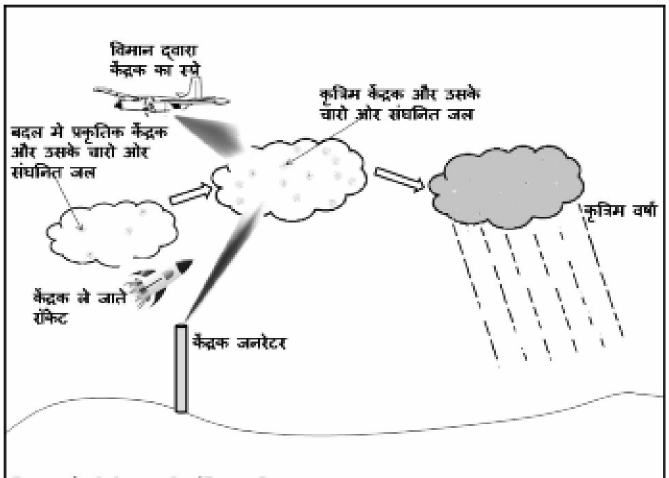

चित्र 1: मेघबीजीकरण की संक्षिप्त प्रक्रिया

संभवतः इसीलिए बर्फ इससे बॉन्ड करना चाहता है। इन पदार्थों को विमानों, विशिष्ट जनरेटरों या रॉकेट लाँचरों कि सहायता से बादलों के बीच पहुँचाया और फैलाया जाता है (चित्र 1)।

सही पदार्थ का चयन बादल के प्रकार, ऊँचाई, तापमान और अन्य वायुमंडलीय स्थितियों पर निर्भर करता है। बीजीकरण का प्रयोग दो तरीकों से किया जाता है :

1. **ग्लेशिओजेनिक बीजीकरण :** अत्यधिक ठंडे बादलों में (-7-20^{0}C) जोकि सामान्यतः अधिक ऊँचाई पर होते हैं, जल की बूँदें केंद्रिकों के ऊपर जमने लगती हैं जो तत्पश्चात भारी होने पर आकाश से गिर पड़ती हैं और मार्ग में पिघल कर वर्षा/हिमकणों का रूप ले लेती हैं। इस प्रकार के बादलों में यदि केंद्रिकों की कमी हो तो उनका बीजीकरण किया जाता है। इस प्रक्रिया को स्टेटिक बीजीकरण भी कहा जाता है। मुख्य ग्लेशिओजेनिक केंद्रक AgI और ड्राई आइस है।
2. **हाईग्रोस्कोपिक बीजीकरण :** अपेक्षाकृत गरम बादल जिन्हें कुमुलोनिम्बस कहा जाता है और जो कि कम ऊँचाई पर बनते हैं, उनमें हाईग्रोस्कोपिक केंद्रक डाले जाते हैं जिसके लिए सोडियम, लिथियम या पोटैशियम के लवणों का प्रयोग किया जाता है। ऐसे बादलों में बड़े केन्द्रक जलवाष्प को संघनित और एकत्रित करने में मदद करते हैं। इस प्रक्रिया को डाइनैमिक बीजीकरण भी कहा जाता है।

समुचित प्रयोग एवं आशंकाएँ

शुष्क इलाकों में पानी की आपूर्ति के लिए बारिश या बर्फबारी बढ़ाई जा सकती है। साथ ही बारिश या हिमपात को किसी जगह पर होने से रोका या उसका स्थाना बदला जा सकता है। ऐसा कुछ परिस्थितियों में लाभप्रद हो सकता है। मेघबीजीकरण की प्रक्रिया मात्र वर्षा करने तक ही सीमित नहीं रह गयी है अपितु वैज्ञानिक इस तकनीक से बादलों में अन्य ऐसे बदलाव कर सकते हैं जिनसे अन्य एच्छिक प्रभाव उत्पन्न किए जा सकें। येल विश्वविद्यालय के जलवायु वैज्ञानिक तृद स्टोरेमो के अनुसार साइर्स बादल जो के 5-15 km की ऊँचाई पर पाया जाता है और जिसके बारे में वैज्ञानिक अच्छी तरह से जानते हैं, उसे इस तकनीक के प्रयोग से महीन या अधिक सफेद बनाया जा सकता है जिससे की बादल के कारण होने वाले ऊष्मण को नियंत्रित किया जा सके। इससे स्थानीय मौसम को बदलने में सफलता मिलेगी। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार बादलों के रंग को हल्का कर उन्हें सूर्य की रोशनी को परिवर्तित करने के प्रयोग में लाया जा सकता है जिससे कि ग्लोबल वार्मिंग को कुछ हद तक कम किया जा सके (मोर्टन, 2009)।

हालाँकि वैज्ञानिक ये भी मानते हैं कि इसके दुष्परिणामों के बारे में अभी जानकारी बेहद कम है और वृहद स्तर पर इसका प्रयोग घातक हो सकता है। इसमें प्रयोग होने वाले पदार्थ जैसे के AgI, अपने वातावरण में अनपेक्षित परिणाम उत्पन्न कर सकते हैं (बॉल, 2013)। AgI का लगातार संपर्क मनुष्यों और अन्य जीवों के लिए घातक हो सकता है। यदि मेघबीजीकरण की प्रक्रिया योजना के अनुरूप न हो पाये या फिर किसी भी अन्य कारण से किसी भी अवयव में बदलाव हो जाऐ तो, पूरी प्रक्रिया बेकार हो जाती है जो की आर्थिक रूप से हानिकारक होता है। कुछ वैज्ञानिक अस्थिर पर्यावरणों में AgI की जगह BiI_3 को बेहतर मानते हैं क्योंकि ये पदार्थ बर्फ के बनने में मदद करता है। मेरीलैंड विश्वविद्यालय, यूएसए के वैज्ञानिक झंकिंग ली आशंका व्यक्त करते हैं कि यदि सही स्थिति न हों तो बीजीकरण से वर्षा होने के बजाय बादल की प्राकृतिक वर्षा क्षमता घट सकती है। वायु प्रदूषण के कारण उत्पन्न ऐरोसोल्स के ऐसे प्रभाव पहले से ही देखे जा रहे हैं।

कुछ प्रमुख उदाहरण

वर्तमान में अनेक देश किसी रूप में मेघबीजीकरण के प्रयोग कर रहे हैं और कुछ कंपनियाँ भी खासतौर पर इस क्षेत्र में अपनी सेवाएँ दे रही हैं। ऑस्ट्रेलिया, ईरान, चीन और यूएसए इनमें अग्रणी हैं। कैलिफोर्निया में 3 मिलियन यूएस डॉलर के खर्च पर प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत अधिक वर्षा उत्पन्न की जाती है जोकि 370-490 मिलियन क्यूबिक मीटर के बराबर है। अन्य देश जहाँ पर ये तकनीक ताजी से प्रयोग में लायी जा रही है मे थाईलैंड, इन्डोनेशिया, मलेशिया एवं सिंगापुर प्रमुख हैं। उनके अलावा मेघबीजीकरण के कुछ महत्वपूर्ण एतिहासिक उदाहरण भी हैंः

1. **वियतनाम युद्ध में प्रयोगः** मार्च 1967 से जुलाई 1972 के बीच वियतनाम युद्ध के दौरान अमेरिकी सेना ने AgI का प्रयोग हो-चि-मिन्ह पथ में अत्यधिक वर्षा कर बाढ़ लाने के लिए किया जो की अमेरिका के लिए अत्यधिक विवादास्पद एवं शर्मनाक बन गया।
2. **रैपिड सिटि में बादल का फटनाः** 1972 में बादल फटने के कारण 200 से अधिक लोगों की मृत्यु हो गयी। इसके कारण बादल फटने से पहले किये गये मेघबीजीकरण को माना गया, हालाँकि दोनों के बीच में मजबूत संबंध नहीं मिले।
3. **व्योममिंग (यूएसए) के पर्वतों पर से हिमपात में वृद्धिः** लगातार छह वर्षों तक शोध की दृष्टि से Agl का छिड़काव किया जाता रहा और 2014 में उसके विस्तृत निरीक्षण पर

पाया गया कि कृत्रिम तरीके से वर्षा अथवा हिमपात में 5-15 प्रतिशत हुई (वित्जे, 2014)। इस शोध में 14 मिलियन यूएस डॉलर से ज्यादा का खर्च हुआ। इस दीर्घकालिक परीक्षण के बाद वैज्ञानिक काफी उत्साहित हैं और मेघबीजीकरण को सफल बता रहे हैं। इस कार्य में वैदर मॉडिफिकेशन इंकोर्पोरेशन ऑफ फार्गो, उत्तरी डकोटा नामक कंपनी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस तकनीक को कंपनियाँ मुनाफे का एक महत्वपूर्ण जरिया मान रही हैं। इस दौरान 118 बार बीजीकरण किया गया जिससे कई बार AgI छिड़काव के बाद पवन के साथ दूसरे स्थान पर पहुँच जाती थी। साथ ही कभी-कभी प्राकृतिक कारणों से होने वाले हिमपात को कृत्रिम रूप से कराये गए हिमपात से अलग कर पाना मुश्किल होता था। लेकिन ऐसे कई प्रयोगों से मेघबीजीकरण से संबंधित कई चुनौतियों को समझने और उनके समाधान में मदद मिली है।

4. **प्रोजेक्ट स्टोर्मफ्यूरीः** 1960 में अमेरिकी मिलिट्री ने अटलांटिक बेसिन में हर्रिकेनों को नियंत्रित करने के लिए इस प्रक्रिया के प्रयोग किया। कुछ हेरिकेनो कि प्रवृत्ति में बदलाव अवश्य देखे गए लेकिन इस शोध को उसके संभवतः अप्रत्याशित परिणामों कि आशंका में रोक दिया गया।
5. **चीन में वर्षा करना और ओलावृष्टि को रोकनाः** चीन विश्व के सबसे बड़े मौसम नियंत्रण कार्यक्रमों में से कुछ के लिए जाना जाता है। इन कार्यक्रमों पर सालाना 60-100 मिलियन यूएस डॉलर का खर्च होता है और तकरीबन 32,000 कर्मी खासतौर पर मेघबीजीकरण के लिए बनाए गए 35 विमानों, 5000 रॉकेट लॉन्चर्स और अन्य मशीनों का संचालन करते हैं। चाइना मेट्योरोलोजिकल एसोशिएशन के अनुसार 1999 से 2006 के बीच 250 मिलियन टन वर्षा कृत्रिम तरीके से कराई गयी। चीन में कृषि की सुरक्षा के लिए ओलावृष्टि को भी इसी तकनीक से रोका जाता है।

बीजिंग ओलिंपिक्स में वर्षा नियंत्रण

2008 के बीजिंग ओलिंपिक्स के लिए चीन सभी कुछ अपने नियंत्रण में करना चाहता था। खेलों की घोषणा के साथ ही बीजिंग मेट्योरोलोजिकल ब्यूरो ने खेलों के दौरान मौसम का अंदाजा लगाना शुरू कर दिया था। ओलिंपिक्स के उद्घाटन समारोह में वर्षा की सशक्त आशंका थीं इसलिए 21 अलग-अलग जगहों से वर्षा वाले बादलों के बीच रॉकेट लॉन्चर्स की मदद से AgI फैलाया गया जिसकी वजह से बादलों को बीजिंग पहुँचने से पहले ही बाओडिंग सिटि पर बरसाया जा सका।

भारत में प्रयोग

1951 में टाटा कंपनी ने पश्चिमी घाटों पर मेघबीजीकरण के कुछ प्रयोग किए। उसके बाद सीएसआईआर, नई दिल्ली ने रेन एंड क्लाउड फिजिक्स रिसर्च यूनिट के गठन का प्रस्ताव दिया जो बाद में पुणे स्थित इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रपिकल मीटोयोरॉलजि का हिस्सा बन गया। 1957 से अब तक ये संस्थान देश के विभिन्न हिस्सों में मेघबीकरण से संबंधित प्रयोग करता रहा है। 1983-87 और 1993-04 के दौरान तमिलनाडू में सूखे से कुछ हद तक बचने के लिए इस प्रक्रिया का प्रयोग किया। बाद में 2003-04 में कर्नाटक और महाराष्ट्र में भी इसका प्रयोग किया गया। आज भारत में कई कम्पनियाँ अपनी सेवाएँ देना चाहती हैं क्योंकि हमारे यहाँ सिंचाई की समुचित सुविधा न होने के कारण कृषि का बड़ा हिस्सा मॉनसून पर आश्रित है। वर्तमान सरकारें भी सूखा प्रभावित क्षेत्रों में इसका प्रयोग करना चाहती हैं।

मेघबीजीकरण की सफलता शत-प्रतिशत नहीं है फिर भी तुरन्त राहत के लिए इसका प्रयोग कुछ जगहों पर उपयुक्त माना जाता है। हालाँकि यह सर्वोत्तम विकल्प नहीं है क्योंकि अंततः वर्षा मॉनसून पर ही निर्भर करती है। सतत् फायदे के लिए कृषि एवं जल प्रबंधन सर्वोपरि हैं क्योंकि फसल की उपज मात्र वर्षा पर ही नहीं अपितु अन्य अनेक कारणों पर निर्भर करती हैं और सूखा हमारे देश में आम है। इसके अलावा विस्तृततौर पर इस तकनीक का प्रयोग भविष्य में बादलों के स्वामित्व को लेकर विवाद उत्पन्न कर सकता है क्योंकि किसी स्थान के जगह कही और वर्षा कराना एक प्रकार का जल आवंटन माना जा सकता है।अतः अन्य सभी तकनीकों की तरह इस तकनीक का प्रयोग भी बेहद सोच समझकर और दूर-दृष्टि के साथ करना होगा।

चित्र 2 : अ) हैदराबाद के बेगमपट हवाई अड्डे पर मेघबीजीकरण के लिए तैयार विमान। ब) विमान द्वारा AgI का स्प्रे। स) बादलों के रंग को हल्का करने के लिए टर्बाइन वाले जहाज का प्रारुप। द) चीन में मेघबीजीकरण के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक रॉकेट लॉन्चर

श्रद्धांजलि

मिसाइलमैन डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के कुछ अनछुए पहलू

डॉ. दया शंकर त्रिपाठी

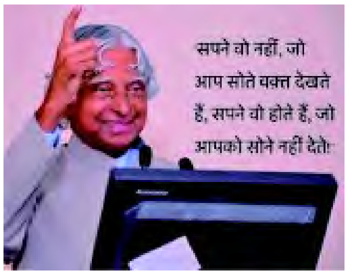

एक राष्ट्र को आगे बढ़ने और विकास के लिए आर्थिक खुशहाली तथा मजबूत सुरक्षा दोनों की जरूरत होती है। हमारा 'रक्षा के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता मिशन 1995-2005' सशस्त्र सेनाओं को प्रतियोगी हथियार प्रणाली उपलब्ध करायेगा। 'टेक्नोलॉजी विजन-2020' योजना में राष्ट्र के आर्थिक विकास और खुशहाली के लिए ठोस योजनाएँ रखी जायेंगी। इन दोनों योजनाओं में हमारे राष्ट्र के सपने हैं। ऐसे स्वप्नद्रष्टा भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम का 83 वर्ष की अवस्था में 27 जुलाई, 2015, सोमवार को निधन हो गया। इस समाचार से सारा राष्ट्र स्तब्ध रह गया। डॉ0 कलाम भारतीय प्रबंधन संस्थान, शिलांग में 'लिवेबल प्लेनेट अर्थ' पर व्याख्यान दे रहे थे। उसी वक्त वे एकाएक गिर पड़े और अस्पताल ले जाते वक्त रास्ते में उनका निधन हो गया। मिसाइलमैन के नाम से प्रसिद्ध डॉ0 कलाम ने उसी दिन सोमवार को पूर्वान्ह 11:30 बजे आखिरी बार ट्वीट किया था कि "शिलांग जा रहा हूँ, लिवेबल प्लेनेट अर्थ पर आइआइएम में एक कार्यक्रम में भाग लेने"।

भारत की मिसाइल टेक्नोलॉजी में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा और वे पोलर सेटेलाइट लाँच व्हीकल (पीएसएलवी) के प्रणेता माने जाते हैं। उनके अतिविशिष्ट योगदान के लिए सन् 1997 में उन्हें भारतरत्न से अलंकृत किया गया। डॉ0 कलाम के निधन की सूचना पर भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी ने ट्विटर पर अपने शोक संदेश में लिखा कि भारत एक महान् वैज्ञानिक, अद्भुत राष्ट्रपति और एक प्रेरणादायक व्यक्ति की मृत्यु पर शोक प्रकट करता है। आरबीआइ के गवर्नर रघुराम राजन ने श्रद्धांजलि देते हुए ट्वीट किया कि महान लोगों के महान सपने हमेशा आगे पहुँचाते हैं। पूरा विश्व डॉ0 कलाम के निधन पर शोक व्यक्त करता रहा।

डॉ0 कलाम पर जारी डाक टिकट

भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी ने गत 15 अक्टूबर, 2015 को डीआरडीओ में आयोजित एक समारोह में पूर्व राष्ट्रपति स्व0 डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम के 84वीं जयन्ती पर उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए घोषणा की कि रामेश्वरम् में उनके जन्म स्थान पर एक स्मारक और रामेश्वरम् को आदर्श शहर बनाया जायेगा। उन्होंने कहा कि कलाम जी का स्मारक भावी पीढ़ियों को प्रेरित करने का काम करेगा। इस अवसर पर प्रधानमंत्री ने डीआरडीओ भवन में डॉ0 कलाम की प्रतिमा का अनावरण किया। उन्होंने 'ए सेलिब्रेशन ऑफ डॉ0 कलाम्स लाइफ' नामक छायाचित्र प्रदर्शनी का भी उद्घाटन किया। डॉ0 कलाम की स्मृति में प्रधानमंत्री ने एक डाक टिकट भी जारी किया। दूसरी तरफ पूर्व राष्ट्रपति के गृह राज्य तमिलनाडु में उनकी जयन्ती को 'युवा पुनरुत्थान दिवस' के रूप में मनाया गया। राज्यपाल माननीय के.रोसैया ने एक कार्यक्रम में 'एपीजे अब्दुल कलाम स्टूडेन्ट फेडरेशन ऑफ इंण्डिया' नाम के संगठन की नींव भी रखी।

डॉ. कलाम की प्रतिमा का अनावरण करते प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी

डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम का पूरा नाम डॉ0 अवुल पकीर जैनुल्लाब्दीन अब्दुल कलाम था। वे एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक और कुशल अभियन्ता थे। उनका जन्म 15 अक्टूबर, 1931 को रामेश्वरम (तमिलनाडु) के मस्जिद मार्ग स्थित मकान में हुआ था। उनके पिता का नाम जैनुल्लाब्दीन था। इनका राष्ट्रपति के रूप में कार्यकाल 25 जुलाई, 2002 से 25 जुलाई, 2007 तक रहा। मिसाइलमैन के नाम से प्रसिद्ध डॉ0 कलाम एक गैर-राजनीतिक व्यक्ति थे। विज्ञान की दुनिया में अद्भुत और स्वदेशी तकनीकों का प्रदर्शन तथा अन्तरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में विशेष व सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन ने उन्हें जनप्रिय बनाने के साथ ही राष्ट्रपति पद तक

* उपसम्पादक, हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

पहुँचा दिया। वे आजीवन अविवाहित रहे। अद्भुत प्रतिभा के धनी डॉ0 कलाम का व्यक्तित्व अत्यन्त ही अनुकरणीय है। वे सभी धर्म, जाति एवं सम्प्रदायों का सम्मान करते थे। वे एक ऐसे भारतीय नागरिक थे जो वर्तमान पीढ़ी के लिए एक महान आदर्श बन गये हैं। अनेक छात्र-छात्राएँ डॉ0 कलाम को अपना आदर्श मानकर विकास की ऊँचाईयों को छूना चाहते हैं। डॉ0 कलाम को प्रकृति से गहरा लगाव था। विज्ञान की दुनिया से यात्रा प्रारम्भ कर देश का प्रथम नागरिक बनना एक महान व्यक्ति की जीवंत आत्मकथा है।

किशोरावस्था में अब्दुल कलाम का जीवन बड़ा ही संघर्षमय बीता था और उस संघर्ष ने उन्हें भारतीय मिसाइलों का प्रणेता बना दिया। उनका जन्म स्थान रामेश्वरम् का प्राकृतिक सौन्दर्य समुद्र की निकटता के कारण बहुत ही रमणीय रहा। इनके पिता जैनुल्लाब्दीन न तो ज्यादा पढ़े-लिखे थे और न ही ज्यादा धनवान थे। वे एक साधारण नाविक थे और नियमों के बड़े सख्त थे। इनके पिता मछुआरों को नाव किराये पर देकर परिवार का भरण-पोषण किया करते थे। डॉ0 कलाम प्रारम्भ से ही शिक्षकों का बहुत सम्मान करते और शिक्षकों का व्यवहार भी उनके प्रति बड़ा ही स्नेहपूर्ण व आत्मीय था। अब्दुल कलाम को अपनी आरम्भिक शिक्षा जारी रखने के लिए अखबार वितरित करने का कार्य करना पड़ा था।

अब्दुल कलाम का परिवार संयुक्त था जिसमें वे स्वयं पाँच भाई और पाँच बहन थे। इनकी दादी और माँ द्वारा ही पूरे परिवार की देख-भाल की जाती थी। इनके घर में खुशिया और मुश्किलें दोनों ही थी। कलाम के जीवन पर उनके पिता का बहुत गहरा प्रभाव था। उनके पिता का लगन और उनके दिये संस्कार अब्दुल कलाम के जीवन में बहुत काम आये। डॉ0 कलाम के पिता चारो वक्त की नमाज अदा करते थे और जीवन में एक सच्चे इंसान का आचरण रखते थे।

डॉ0 कलाम का घर

एक बार की बात है जब अब्दुल कलाम अपने भाई-बहनों के साथ खाना खा रहे थे। इनके क्षेत्र में मुख्य फसल धान थी, इसलिए खाने में अधिकांशतः चावल ही दिया जाता था, रोटियाँ कम मिलती थीं। परन्तु एक दिन इनकी माँ ने इनको ज्यादा रोटियाँ दे दीं, तो इनके भाई ने इन्हें अलग ले जाकर कहा 'जानते हो, माँ के लिए एक भी रोटी नहीं बची है और उन्होंने तुम्हे ज्यादा रोटियाँ दे दी हैं।' यह सुनते ही वे काफी भावुक हो उठे और दौड़कर अपनी माँ से लिपट कर रोने लगे।

परिवार में सबसे छोटा होने के कारण कलाम को सबसे अधिक प्यार मिलता था। उन दिनों कलाम कक्षा पाँच में पढ़ते थे। तब घरों में बिजली नहीं होती थी और केरोसिन तेल से दीये जलाये जाते थे। केरोसिन अधिक दिनों तक चलाने के लिए दीये जलाने का समय रात्रि 07 से 09 बजे तक निर्धारित रहता था। परन्तु वे अपनी माँ के अतिरिक्त प्रिय होने के कारण पढ़ाई करने हेतु रात के 11 बजे तक दीये का उपयोग कर लेते थे। अब्दुल कलाम के जीवन में उनकी माँ का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा। वे प्रेम, दया और करुणा की साक्षात मूर्ति थीं। वे पाँचों वक्त का नमाज अदा करती थीं और 92 वर्ष की उम्र तक जीवित रहीं।

सन् 1964 में 33 वर्ष की अवस्था में डॉ0 कलाम ने जल की भयानक विनाशलीला देखी जिससे उन्हें जल की शक्ति का वास्तविक अनुमान लगा। वहाँ आए चक्रवाती तूफान ने पम्बन पुल और यात्रियों से भरी एक रेलगाड़ी के साथ-साथ उनका पुस्तैनी गाँव धनुषकोड़ी को भी बहा दिया। जब वह मात्र 19 वर्ष के थे तब उन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका को भी अनुभव किया।

अब्दुल कलाम छात्र जीवन में जब 8-9 वर्ष के थे तभी से सुबह 4 बजे भोर में उठ जाते थे और स्नान करने के बाद गणित के अध्यापक स्वामीयर के पास गणित पढ़ने चले जाते थे। जो विद्यार्थी स्नान करके नहीं आता था उसे स्वामीयर जी नहीं पढ़ाते थे। स्वामीयर एक विशेष प्रकार के अध्यापक थे और पाँच विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष निःशुल्क ट्यूशन पढ़ाते थे। इनकी माँ चाहती थीं कि वे पढ़-लिखकर बड़े इंसान बनें। इसलिए इन्हें प्रातः उठाकर स्नान करातीं और नाश्ता करवाकर ट्यूशन पढ़ने भेज देती थीं। अब्दुल कलाम ट्यूशन पढ़कर साढ़े पाँच बजे घर वापस आ जाते थे। उसके बाद पिता के साथ नमाज पढ़ते, कुरान शरीफ का अध्ययन करने अरेशिक स्कूल (मदरसा) चले जाते। इसके पश्चात् रामेश्वरम् के रेलवे स्टेशन और बस अड्डे जाकर अन्य शहरों से आये समाचार-पत्र का बण्डल एकत्र करते। इस कार्य के लिए उन्हें प्रतिदिन तीन किलोमीटर जाना पड़ता था। उन दिनों धनुषकोड़ी रेलवे स्टेशन से मेल ट्रेनें गुजरती तो थीं, लेकिन वहाँ उनका ठहराव नहीं था। इसलिए चलती ट्रेन से ही अखबार के बंडल रेलवे स्टेशन पर फेक दिये जाते थे। अखबार लेने के बाद कलाम रामेश्वरम् शहर में वितरित करते और प्रतिदिन प्रातः आठ बजे तक घर वापस आ जाते थे। शाम को स्कूल से लौटने के बाद वे पुनः रामेश्वरम् जाकर ग्राहकों से बकाया पैसा वसूल करते थे। इस प्रकार वे किशोरावस्था में पढ़ाई के साथ-साथ धनार्जन भी करते थे।

अध्यापकों के संबंध में कलाम साहब काफी भाग्यशाली थे। उन्हें शिक्षण के दौरान सदैव एक-दो अध्यापक ऐसे मिल जाते जो योग्य थे और उनकी कृपा दृष्टि बनी रहती थी। यह समय 1936 से 1957 के मध्य का था। ऐसे में उन्हें अनुभव हुआ कि वह अपने अध्यापकों के कारण ही आगे बढ़ रहे हैं। अध्यापक की प्रतिष्ठा और सार्थकता के बारे में डॉ0 कलाम काफी सजग रहते थे। अपने शिक्षक के बारे में डॉ0 कलाम ने काफी कुछ लिखा है।

शिक्षक द्वारा तारीफ करने पर मिली मिठाई

डॉ0 कलाम लिखते हैं- मुझे याद है कि पाँच वर्ष कि अवस्था में रामेश्वरम् के पंचायत प्राथमिक स्कूल में मेरा दीक्षा-संस्कार हुआ था। यह

सन् 1936 का वर्ष था। तब मेरे एक शिक्षक मुत्थु अय्यर मेरा विशेष ध्यान रखते थे। मैं कक्षा में अपने कार्य में बहुत अच्छा था इसलिए वह मुझसे बहुत प्रभावित थे। एक दिन वे मेरे घर आए और मेरे पिता से कहा कि मैं पढ़ाई में बहुत अच्छा हूँ। यह सुनकर घर के सभी लोग बहुत खुश हुए और मुझे मेरी पसंद की मिठाई बाजार से मँगवाकर खिलाई गई, बड़ा मजा आया।

तीन पेज रोज लिखने का निर्देश

एक विशिष्ट घटना जिसे मैं कभी भूल नहीं सकता, वह थी कक्षा में 'प्रथम स्थान' प्राप्त करने की। एक बार मैं स्कूल नहीं जा सका तो मुत्थु जी मेरे घर आए और उन्होंने पिताजी से पूछा कि कोई समस्या तो नहीं है और मैं आज स्कूल क्यों नहीं आया ? साथ ही उन्होंने यह भी पूछा कि क्या वह कोई सहायता कर सकते हैं ? उस दिन मुझे ज्वर हो गया था। तब मुत्थु जी ने मेरी हस्तलिपि के बारे में मेरे पिताजी से चर्चा की जो काफी खराब थी। उन्होंने मुझे प्रतिदिन तीन पृष्ठ अभ्यास करने का निर्देश दिया। उन्होंने मेरे पिताजी से भी कहा कि मैं प्रतिदिन यह अभ्यास करूँ। मैंने यह अभ्यास नियमित रूप से किया। पिता जी ने मुत्थु जी के कार्यों को देखते हुए कहा था कि वह एक अच्छे व्यक्ति ही नहीं बल्कि हमारे परिवार के अच्छे मित्र और शुभचिंतक भी हैं।

सुब्रह्मण्यम जी की प्रेरणा

अब्दुल कलाम के 'एयरोस्पेस टेक्नोलॉजी' में आने के पीछे पाँचवीं कक्षा के अध्यापक 'श्री शिवा सुब्रह्मण्यम अय्यर' की प्रेरणा काम कर रही थी। वह स्कूल के अच्छे शिक्षकों में से एक थे। उन्होंने ही कक्षा में बताया था कि पक्षी कैसे उड़ते हैं? उस समय मैं यह समझ नहीं पाया था। तब उन्होंने अन्य छात्रों से भी पूछा तो उन्होंने भी इंकार ही किया। अगले दिन अय्यर जी हमें समुद्र के किनारे ले गए। उस प्राकृतिक दृश्य में कई प्रकार के पक्षी थे, जो सागर के किनारे उतरते थे और उड़ जाते थे। फिर उन्होंने समुद्री पक्षियों को दिखलाया, जो 10-20 के झुण्ड में उड़ रहे थे। उन्होंने पक्षियों के उड़ने की प्रत्येक क्रिया को समझाया। हमने भी बड़ी बारीकी से पक्षियों के शरीर की बनावट और उनके उड़ने का तरीका देखा। इस प्रकार हमने व्यावहारिक प्रयोग के माध्यम से यह सीखा कि पक्षी किस प्रकार उड़ पाने में सफल होते हैं। हमारे यह अध्यापक महान थे। वे चाहते तो हमें मौखिक रूप से समझाकर ही अपना कर्तव्य पूरा कर लेते, परन्तु उन्होंने हमें व्यावहारिक उदाहरण के माध्यम से ज्ञान कराया। मेरे लिए यह मात्र पक्षी की उड़ान भर की बात नहीं थी। वह उड़ान तो मुझमें समा ही गई थी। उस दिन के बाद मैंने सोच लिया था कि मेरी शिक्षा उड़ान से संबंधित होगी। परन्तु, उस समय मैं यह नहीं समझ पाया था कि मैं 'उड़ान विज्ञान' की दिशा में अग्रसर होने वाला हूँ।

एयरोनाटिकल इंजीनियरिंग का चुनाव

एक दिन कलाम साहब ने अपने अध्यापक 'श्री शिवा सुब्रह्मण्यम अय्यर' से पूछा कि कृपया मुझे बताएँ कि मेरी आगे की उन्नति उड़ान से संबंधित कैसे हो सकती है? तब उन्होंने जवाब दिया कि मैं पहले आठवीं कक्षा उत्तीर्ण करूँ, फिर हाई स्कूल। तत्पश्चात कॉलेज में मुझे उड़ान से संबंधित शिक्षा का अवसर प्राप्त हो सकता है। यदि मैं ऐसा करता हूँ तो उड़ान विज्ञान के साथ जुड़ सकता हूँ। इन सब बातों ने मुझे जीवन के लिए एक मंजिल और उद्देश्य भी तय कर दिया। जब मैं कॉलेज गया तो मैंने भौतिक विज्ञान विषय चुना। जब मैं अभियांत्रिकी की शिक्षा के लिए 'मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी' में गया तो मैंने एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग का चुनाव किया। इस प्रकार मेरी जिन्दगी एक 'रॉकेट इंजीनियर', 'एयरोस्पेस इंजीनियर' और 'तकनीकी कर्मी' की ओर उन्मुख हुई। वह एक घटना जिसे मेरे अध्यापक ने मुझे प्रत्यक्ष उदाहरण से समझाया था, मेरे जीवन की महत्वपूर्ण बिन्दु बन गई और मैं अपने लक्ष्य का चुनाव करने में सफल भी रहा।

डॉ0 कलाम अपने गणित के अध्यापक 'प्रोफेसर दोदात्री आयंगर' के विषय में लिखते हैं कि विज्ञान के छात्र के रूप में मुझे 'सेंट जोसेफ कॉलेज' में देवता के समान एक व्यक्ति को प्रतिसुबह देखने का अवसर मिलता था, जो विद्यार्थियों को गणित पढ़ाया करते थे। बाद में मुझे उनसे गणित पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने मेरी प्रतिभा को बहुत हद तक निखारा था। सन् 1952 में इन्होंने एक अद्वितीय व्याख्यान दिया, जो भारत के प्राचीन गणितज्ञों एवं खगोलविज्ञों के संबंध में था। जिसमें उन्होंने आर्यभट्ट, श्रीनिवास रामानुजन, ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्य के बारे में बताया था। इसके अलावा अब्दुल कलाम की प्रतिभा निखारने में एम.आई.टी. के 'प्रोफेसर श्रीनिवासन' (जो डायरेक्टर भी थे) का भी काफी योगदान रहा। इनके विषय में अब्दुल कलाम ने कहा था- शिक्षक को एक प्रशिक्षक भी होना चाहिए- प्रोफेसर श्रीनिवासन की भाँति।

प्रसन्न मुद्रा में डॉ0 कलाम

कार्य क्षेत्र

सन् 1992 में डॉ0 अब्दुल कलाम 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' आये। उन्हें प्रोजेक्ट डायरेक्टर के रूप में भारत का पहला स्वदेशी उपग्रह (एसएलवी तृतीय) प्रक्षेपास्त्र बनाने का श्रेय हासिल हुआ। जुलाई 1980 में इन्होंने रोहिणी को पृथ्वी की कक्षा के निकट स्थापित किया था। इस प्रकार भारत भी 'अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष क्लब' का सदस्य बन गया। 'इसरो लाँच व्हीकल प्रोग्राम' को गति प्रदान करने का श्रेय भी इन्हें जाता है। डॉक्टर कलाम ने स्वदेशी लक्ष्य भेदी (गाइडेड मिसाइल्स) को डिजाइन किया तथा 'अग्नि' एवं 'पृथ्वी' जैसी मिसाइलों को स्वदेशी तकनीक से बनाया। डॉक्टर कलाम 1992 से दिसम्बर 1999 तक रक्षा मंत्री के 'विज्ञान सलाहकार' तथा 'सुरक्षा शोध और विकास विभाग' के सचिव थे। उन्होंने 'स्ट्रेटेजिक मिसाइल्स सिस्टम' का उपयोग आग्नेयास्त्रों के रूप में किया। इसी प्रकार पोखरण में दूसरी बार न्यूक्लियर विस्फोट भी परमाणु ऊर्जा के साथ मिलाकर किया। इस तरह भारत ने परमाणु हथियार के निर्माण की क्षमता प्राप्त करने में सफलता हासिल की। डॉक्टर कलाम ने भारत के विकास स्तर को सन् 2020 तक विज्ञान के क्षेत्र में अत्याधुनिक करने के लिए एक विशिष्ट सोच प्रदान की। वे भारत सरकार के 'मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार' भी रहे।

ISSN 2231 - 2455

उड़ान भरने की तैयारी

एसएलवी-3 परियोजना की जिम्मेदारी

डॉ0 कलाम के जीवन का एक बड़ा अवसर तब आया जब उन्हें भारत के सैटेलाइट लाँच वेहिकल (एसएलवी) परियोजना का प्रमुख बनाया गया। उनके लिए यह सम्मान की बात और चुनौती भी थी। इसका मुख्य उद्देश्य एक भरोसेमंद प्रमोचन यान विकसित करना था जो 40 किलोग्राम के एक उपग्रह को पृथ्वी से 400 किलोमीटर की ऊँचाई वाली कक्षा में स्थापित कर सके। यह एक बड़ी परियोजना थी जिसमें दो सौ पचास उप-भाग और चालीस बड़ी उपप्रणालियाँ शामिल थीं। उनका टीम के साथ सतत् लगन व कठिन परिश्रम के बाद 18 जुलाई, 1980 को सुबह आठ बजकर तीन मिनट पर श्रीहरिकोटा रॉकेट प्रक्षेपण केंद्र से एलएलवी-3 ने सफल उड़ान भरी। इस कार्य ने डॉ0 कलाम को राष्ट्र स्तर पर पहचान प्रदान दी। इस उपलब्धि के लिए डॉ0 कलाम को 26 जनवरी, 1981 को भारत सरकार द्वारा 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया।

इंटीग्रटेड गाइडेड मिसाइल डेवलपमेंट कार्यक्रम (आईजीएमडीपी) का प्रस्ताव

इंटीग्रटेड गाइडेड मिसाइल

फरवरी 1982 में डॉ0 अब्दुल कलाम को डीआरडीएल का निदेशक नियुक्त किया गया। उसी समय अन्ना विश्वविद्यालय, मद्रास ने इन्हें 'डॉक्टर ऑफ साइंस' की मानद उपाधि से सम्मानित किया। एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग में डिग्री हासिल करने के करीब बीस साल बाद यह मानद उपाधि डॉ0 अब्दुल कलाम को प्राप्त हुई। डॉ0 कलाम ने रक्षामंत्री के तत्कालीन वैज्ञानिक सलाहकार डॉ0 वी.एस. अरुणाचलम् के मार्गदर्शन में इंटीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डेवलपमेंट प्रोग्राम (आईजीएमडीपी) का प्रस्ताव तैयार किया। स्वदेशी मिसाइलों के विकास के लिए एक स्पष्ट और समयबद्ध मिसाइल कार्यक्रम तैयार करने के उद्देश्य से डॉ0 अब्दुल कलाम की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई गई।

मिसाइल कार्यक्रम के प्रणेता

इस परियोजना के प्रथम चरण में एक कम ऊँचाई पर तुरन्त मार कर सकने वाली 'टैक्टिकल कोर वेहिकल मिसाइल' और जमीन से जमीन पर मध्यम दूरी तक मार सकने वाली मिसाइल के विकास एवं उत्पादन पर जोर था। दूसरे चरण में जमीन से हवा में मार कर सकने वाली मिसाइल, तीसरी पीढ़ी की टैंकभेदी गाइडेड मिसाइल और डॉ0 अब्दुल कलाम के सपने रि-एंट्री एक्सपेरिमेंट लाँच वेहिकल (रेक्स) का प्रस्ताव रखा गया। जमीन से जमीन पर मार करने वाली मिसाइल प्रणाली को 'पृथ्वी' और टैक्टिकल कोर वेहिकल मिसाइल को 'त्रिशूल' नाम दिया गया। जमीन से हवा में मार करने वाली रक्षा प्रणाली को 'आकाश' और टैंकरोधी मिसाइल परियोजना को 'नाग' नाम दिया गया। डॉ0 अब्दुल कलाम ने अपने मन में सँजोए रेक्स के बहुप्रतीक्षित सपने को 'अग्नि' नाम दिया।

टैंकरोधी मिसाइल 'नाग'

27 जुलाई, 1983 को आईजीएमडीपी की औपचारिक रूप से शुरुआत की गई। मिसाइल कार्यक्रम के अंतर्गत पहली मिसाइल का प्रक्षेपण 16 सितंबर, 1985 को किया गया। इस दिन श्रीहरिकोटा स्थित परीक्षण रेंज से 'त्रिशूल' को छोड़ा गया। यह एक तेज प्रतिक्रिया प्रणाली है जिसे नीची उड़ान भरने वाले विमानों, हेलीकॉप्टरों तथा विमानभेदी मिसाइलों के खिलाफ इस्तेमाल किया जा सकता है। 25 फरवरी, 1988 को दिन में 11 बजकर 23 मिनट पर 'पृथ्वी' का प्रमोचन किया गया। यह देश में रॉकेट विज्ञान के इतिहास में एक युगांतकारी घटना थी। यह 150 किलोमीटर तक 1000 किलोग्राम पारंपरिक विस्फोटक सामग्री ले जाने की क्षमता वाली जमीन से जमीन पर मार करने वाली मिसाइल है। 22 मई, 1989 को 'अग्नि' का प्रक्षेपण किया गया। यह लंबी दूरी के फ्लाइट वेहिकल के लिए एक तकनीकी

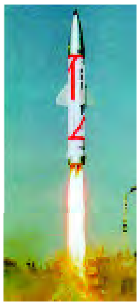

पृथ्वी मिसाइल

आकाश मिसाइल

सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल 'ब्रह्मोस'

प्रदर्शन था। इसके साथ ही 'आकाश' पचास किलोमीटर की अधिकतम अंतर्रोधी रेंजवाली मध्यम दूरी की वायु-रक्षा प्रणाली है। उसी प्रकार 'नाग' टैंक भेदी मिसाइल है, जिसमें 'दागो और भूल जाओ' तथा ऊपर से आक्रमण करने की क्षमताएँ हैं। डॉ0 अब्दुल कलाम की पहल पर भारत द्वारा एक रूसी कंपनी के सहयोग से सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल बनाने पर काम शुरू हुआ। फरवरी 1998 में भारत और रूस के बीच समझौते के अनुसार भारत में ब्रह्मोस प्राइवेट लिमिटेड की स्थापना की गई। 'ब्रह्मोस' एक सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल है जो धरती, समुद्र तथा हवा कहीं भी दागी जा सकती है। यह पूरी दुनिया में अपने तरह की एक खास मिसाइल है जिसमें अनेक खूबियाँ हैं। वर्ष 1990 के गणतंत्र दिवस के अवसर पर राष्ट्र ने अपने मिसाइल कार्यक्रम की सफलता पर खुशी मनाई। डॉ0 अब्दुल कलाम और डॉ0 अरुणाचलम् को भारत सरकार द्वारा 'पद्म विभूषण' से सम्मानित किया गया।

डॉ0 कलाम की पुस्तकें

डॉक्टर कलाम ने अपने शोध एवं अनुभवों को कुछ पुस्तकों के माध्यम से हम सभी तक पहुँचाया है, वे हैं-

1. विंग्स ऑफ फायर
2. इण्डिया 2020 - ए विजन फॉर द न्यू मिलेनियम
3. माई जर्नी
4. इग्नाटिक माइंड्स- अनलीशिंग द पॉवर विदिन इंडिया।
5. महाशक्ति भारत
6. हमारे पथ प्रदर्शक
7. हम होंगे कामयाब
8. अदम्य साहस
9. छुआ आसमान

डॉ0 कलाम की लिखी कुछ पुस्तकें

10. भारत की आवाज
11. टर्निंग प्वॉइंट्स

इन पुस्तकों का अनुवाद अनेक भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में हो चुका है। इन्होंने अपनी जीवनी 'विंग्स ऑफ फायर' भारतीय युवाओं को मार्गदर्शन हेतु लिखी है। इनकी दूसरी पुस्तक 'गाइडिंग सोल्स-डायलॉग्स ऑफ द पर्पज ऑफ लाइफ' आत्मिक विचारों पर आधारित है।

श्रेष्ठ इंसानों और विलक्षण प्रतिभा के लोगों की कमी नहीं

डॉ0 कलाम अपनी पुस्तक अग्नि की उड़ान में लिखते हैं कि भारत के पहले उपग्रह प्रक्षेपण यान 'एसएलवी-3' और 'अग्नि' के कार्यक्रम से मेरे गहरे जुड़ाव हैं और संयोगवश इसी जुड़ाव ने एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय घटना यानी मई 1998 में किये गये पोखरण परमाणु परीक्षण में मेरी भागीदारी बनाई। तीन वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों- अंतरिक्ष, रक्षा शोध एवं परमाणु ऊर्जा में मुझे कार्य करने का महान अवसर मिला। इन प्रतिष्ठानों में काम करते हुए मैंने पाया कि श्रेष्ठ इंसान और विलक्षण प्रतिभा के लोगों की कमी नहीं है। ..... आगे लिखते हैं कि ये लोग महान स्वप्नद्रष्टा भी थे और अंततः इनके सपने बड़ी उपलब्धियों के रूप में साकार हुए हैं। मुझे लगता है कि अगर हम इन सभी वैज्ञानिक संस्थानों की तकनीकी क्षमता का मिलकर इस्तेमाल करें तो निश्चित रूप से हम विकसित राष्ट्रों की तकनीकी उपलब्धियों से इसकी तुलना कर सकेंगे। मुझे राष्ट्र की महान स्वप्नदर्शी हस्तियों जैसे प्रो0 विक्रम साराभाई, प्रो0 सतीश धवन और डॉ0 ब्रह्मप्रकाश के सानिध्य में काम करने का मौका मिला, जिन्होंने मेरे जीवन को समृद्ध बनाया।

राष्ट्रवादी सोच

डॉक्टर अब्दुल कलाम राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे परन्तु उनकी राष्ट्रवादी सोच ने उन्हें राष्ट्रपति के पद तक पहुँचाया। डॉ0 कलाम ने अपनी पुस्तक 'इण्डिया 2020' में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। वे भारत को अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में विश्व का शीर्ष राष्ट्र बनते देखना चाहते थे और इसके लिए उनके पास एक कार्य योजना भी थी। वे परमाणु हथियारों के क्षेत्र में भारत को सुपर पॉवर बनाना चाहते थे। वह विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी तकनीकी विकास चाहते थे। डॉक्टर कलाम का कहना है कि सॉफ्टवेयर का क्षेत्र सभी वर्जनाओं से मुक्त होना चाहिए ताकि अधिकाधिक

राष्ट्रवादी डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम

लोग इसकी उपयोगिता से लाभान्वित हो सकें। ऐसे में सूचना तकनीक का विकास तीव्र गति से हो सकेगा। डॉ0 कलाम के विचार शांति और हथियारों को लेकर विवादास्पद हैं। इस संबंध में उन्होंने कहा था - ''2000 वर्षों के इतिहास में भारत पर 600 वर्षों तक अन्य लोगों ने शासन किया है। यदि आप विकास चाहते हैं तो देश में शांति की स्थिति होनी आवश्यक है और शांति की स्थापना शक्ति से होती है।''

भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति का दायित्व

डॉक्टर अब्दुल कलाम भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति निर्वाचित हुए थे। उन्हें भारतीय जनता पार्टी समर्थित एनडीए घटक दलों ने अपना उम्मीदवार बनाया था जिसका वामदलों के अलावा समस्त दलों ने समर्थन किया। 18 जुलाई, 2002 को डॉक्टर कलाम को नब्बे प्रतिशत बहुमत द्वारा 'भारत का राष्ट्रपति' चुना गया और उन्हें 25 जुलाई, 2002 को संसद भवन के अशोक कक्ष में भारत के राष्ट्रपति पद की शपथ दिलाई गयी। उनका कार्यकाल 25 जुलाई, 2007 को पूरा हुआ। डॉ0 कलाम एक ऐसे राष्ट्रपति थे जिनके पास राष्ट्रपति भवन में प्रवेश करते समय मात्र दो बैग थे और जब कार्यकाल पूरा हुआ तब बाहर आते समय भी दो बैग ही थे।

भारत के राष्ट्रपति डॉ0 एपीजे अब्दुल कलाम (25 जुलाई, 2002-25 जुलाई, 2007)

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

किसी भी सरल व महान व्यक्तित्व के बारे में एक छोटे से लेख में समेटना काफी कठिन कार्य है। अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्तित्व के धनी डॉ0 अब्दुल कलाम के बारे में कुछ भी कहना आसान नहीं। वेशभूषा, बोलचाल के लहजे, अच्छे-खासे सरकारी आवास को छोड़कर हॉस्टल का सादगीपूर्ण जीवन, ये बातें उनके संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को आकर्षित करती हैं। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, देश के विकास और युवा मस्तिष्कों को प्रेरित करने में अपनी रुचि के साथ-साथ वे पर्यावरण के प्रति

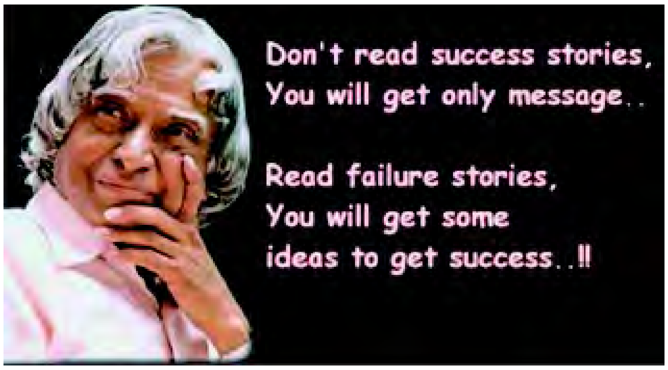

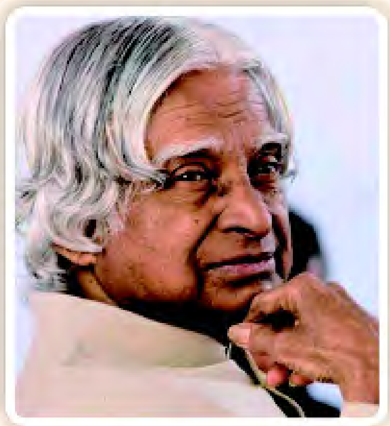

नौकरी करने वालों को डॉ0 कलाम की नसीहत-

आप अपने कार्य से प्यार करें, लेकिन अपनी कम्पनी को नहीं। क्योंकि आपको नहीं मालूम कि आपकी कम्पनी कब आपको प्यार करना छोड़ देगी।

समय से कार्यालय छोड़ें

1. कार्य एक कभी भी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है। यह कभी भी पूरी नहीं होती।
2. जैसे क्लाइन्ट का कार्य महत्वपूर्ण है वैसे ही आपका परिवार भी महत्वपूर्ण है।
3. जब कभी आप जीवन में निराश होंगे तब न तो आपके बॉस और न ही आपके क्लाइन्ट आपकी सहायता के लिए हाथ बढ़ायेंगे, जबकि आपका परिवार और आपके मित्रगण ऐसा करेंगे।
4. जीवन केवल कार्य, कार्यालय और क्लाइन्ट मात्र नहीं है। इनके अतिरिक्त भी है। आपको सामाजिकता, मनोरंजन, आराम एवं अभ्यास के लिए भी समय चाहिए। जीवन को निरर्थक न बनाइये।
5. जो व्यक्ति कार्यालय में देर तक रुकता है वह कठिन परिश्रम करने वाला व्यक्ति नहीं है। बल्कि वह एक मूर्ख की भाँति है जिसे निर्धारित समय में कार्य प्रबंधन का तरीका नहीं आता। वह अपने कार्य में अयोग्य और असमर्थ है।
6. आपने जीवन में यंत्र/मशीन बनने के लिए कठिन अध्ययन और कड़ा संघर्ष नहीं किया है।
7. यदि आपका बॉस आपसे देर तक कार्य करने का दबाव देता है तो उसका जीवन भी असफल और अर्थहीन है। अतः यह उसे भी अग्रेसित करें।

समय से कार्यालय छोड़ना=	विलम्ब से कार्यालय छोड़ना =
• सक्षम	• अयोग्य और असमर्थ
• अच्छा सामाजिक जीवन	• असामाजिक जीवन
• गुणयुक्त पारिवारिक जीवन	• गुणहीन पारिवारिक जीवन

भी विशेष लगाव रखते थे। उनकी साहित्य में भी रुचि थी, कविता लिखते थे, वीणा बजाते थे तथा अध्यात्म से बहुत गहरे जुड़े हुए थे। डॉ0 कलाम में अपने कार्य के प्रति जबर्दस्त दीवानगी थी। उनके लिए कोई भी समय काम का समय होता है। वह अपना अधिकांश समय कार्यालय में बिताते और देर शाम तक विभिन्न कार्यक्रमों में प्रतिभागिता करते थे। डॉ0 कलाम खान-पान में पूर्ण शाकाहारी थे। वे मदिरापान से परहेज रखते थे। उनका निजी जीवन अनुकरणीय है। डॉ0 कलाम की याददाश्त बहुत तेज थी और वे घटनाओं तथा वार्तालापों को याद रखते थे।

पुस्तकों की रायल्टी का अधिकांश हिस्सा स्वयंसेवी संस्थानों को

उनके द्वारा लिखी गयी पुस्तकें बहुत लोकप्रिय हैं। वे अपनी किताबों की रॉयल्टी का अधिकांश हिस्सा मदद के रूप में स्वयंसेवी संस्थाओं को दे देते थे। मदर टेरेसा द्वारा स्थापित 'सिस्टर्स ऑफ चैरिटी' उनमें से एक है। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए उन्हें अनेक पुरस्कार मिले। इनमें से कुछ पुरस्कारों के साथ नकद राशियाँ भी मिली थीं। वह इन पुरस्कार राशियों को परोपकार के कार्यों के लिए अलग रखते। जब-जब देश में प्राकृतिक आपदाएँ आई, तब-तब डॉ0 कलाम की मानवीयता एवं करुणा निखरकर सामने आई। जब वे रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन में कार्यरत थे तो उन्होंने हर राष्ट्रीय आपदा में विभाग की ओर से बढ़-चढ़कर राहत कोष में मदद की थी।

डॉ0 कलाम को सम्मान और पुरस्कार

डॉ0 कलाम को अनेक सम्मान और पुरस्कार मिले थे, जिनमें मुख्य हैं-

- इंस्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स का नेशनल डिजाइन अवार्ड
- एरोनॉटिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया का डॉ0 बिरेन रॉय स्पेस अवार्ड
- एस्ट्रोनॉटिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया का आर्यभट्ट पुरस्कार
- विज्ञान के लिए जी.एम. मोदी पुरस्कार
- राष्ट्रीय एकता के लिए इंदिरा गाँधी पुरस्कार
- वे भारत के एक ऐसे विशिष्ट वैज्ञानिक थे, जिन्हें 30 विश्वविद्यालयों और संस्थानों से डॉक्टरेट की मानद उपाधियाँ प्राप्त हो चुकी हैं।
- इन्हें भारत के नागरिक सम्मान के रूप में 1981 में पद्म विभूषण, 1997 में भारत रत्न सम्मान प्राप्त हो चुके हैं।

डॉ0 कलाम की विशेषताएँ

- डॉक्टर अब्दुल कलाम ऐसे तीसरे राष्ट्रपति रहे जिन्हें 'भारत रत्न' का सम्मान राष्ट्रपति बनने से पूर्व ही प्राप्त हो चुका था, अन्य दो राष्ट्रपति डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन और डॉ0 जाकिर हुसैन हैं।
- वे प्रथम वैज्ञानिक थे जो राष्ट्रपति बने थे और प्रथम राष्ट्रपति भी जो अविवाहित रहे।

अंतिम समय

अंतिम समय में डॉ0 कलाम काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी; भारतीय प्रबंधन संस्थान, शिलांग; भारतीय प्रबंधन संस्थान, अहमदाबाद तथा भारतीय प्रबंधन संस्थान, इंदौर में विजिटिंग प्रोफेसर रहे। साथ ही भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, तिरुवनंतपुरम् में कुलाधिपति तथा अन्ना विश्वविद्यालय चेन्नई में एयरो इंजीनियरिंग के प्रोफेसर पद पर नियुक्त रहे।

स्तन कैंसर हो तो न करें धूम्रपान

स्तन कैंसर से पीड़ित महिलाओं की धूम्रपान करने से मौत जल्दी हो सकती है। नए अध्ययन में यह बात सामने आयी है। अध्ययन की सह लेखक यूको मिनामी के अनुसार 1997 से 2007 के दौरान 848 मरीजों पर अध्ययन किया गया। उन्होंने इन मरीजों से एक्टिव और पैसिव धूम्रपान स्तर को लेकर प्रश्नावली भरवाई। शोधकर्ताओं ने 2010 तक इन मरीजों पर परीक्षण किया। पाया कि ऐसी युवा महिलाएँ जो धूम्रपान करती थीं, उनमें स्तन कैंसर से मौत होने की आशंका 3.4 गुणा बढ़गई।

ISSN 2231 - 2455

नोबल के नौ नवरत्न

विष्णुप्रसाद चुतुर्वेदी*

औषध या कार्यिकी

1. डॉक्टर जॉन ओकीफ

जॉन ओकीफ का जन्म न्यूयार्क शहर में 18 नवम्बर 1939 को हुआ। इनके माता-पिता आयरलैण्ड से आकर अमेरिका के न्यूयार्क शहर में बस गये थे। ओकीफ ने प्रारम्भिक शिक्षा रेजिस हाई स्कूल मन्हटन से प्राप्त की। सीटी कॉलेज न्यूयार्क से स्नातक होने के बाद अधिस्नातक उपाधि मेकग्रिल विश्वविद्यालय मॉन्ट्रियल से 1967 में प्राप्त की। रोनाल्ड मेलजेक के निर्देशन में डोनाल्ड हेब्ब मनोविज्ञान विभाग से 1967 में पी.एचडी. की। अध्ययन पूरा कर ओकीफ यूनिवसिर्वटी कॉलेज लंदन आ गए फिर निरन्तर वहीं रहे। सन् 1987 में इन्हें प्रोफेसर पद मिल गया।

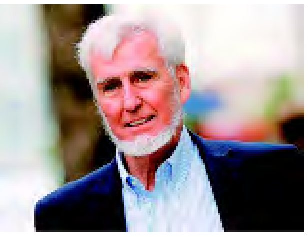

डॉक्टर जॉन ओ'कीफ

जॉन ओकीफ को अमेरिका व ब्रिटेन दोनों देशों की नागरिकता प्राप्त है। अपने शिष्य दोस्त्रोवस्की के साथ मिलकर ओकीफ ने हिप्पोकैम्पस न्यूरोन्स पर पर्यावरण कारकों के प्रभाव का व्यवस्थित अध्ययन किया। इस अध्ययन के दौरान ही ओकीफ ने स्थान कोशिकाओं की खोज की। इसके बाद अनेक खोजें करने का श्रेय ओकीफ को जाता है। अनेक अनुसंधान पत्र व पुस्तकों के लेखक ओकीफ को रॉयल सोसायटी सहित अनेकों वैज्ञानिक संस्थानों की सदस्यता प्राप्त है। उन्हें ब्रिटिश न्यूरोसाइंस एसोसिएशन अवार्ड, फेडरेशन ऑफ यूरोपियन न्यूरोसाइंस सोसायटीज अवार्ड आदि अनेकों पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। 2014 का कार्यिकी का आधा नोबेल पुरस्कार जॉन ओकीफ को दिया गया है।

2. व 3. मोजर दम्पति

एडवर्ड मोजर का जन्म 27 अप्रैल 1962 को अलेसुन्ड नार्वे में हुआ। इनके माता-पिता जर्मनी से सन् 1950 में नार्वे आए थे। नार्वे में एक दो स्थानों पर रहने के बाद अलेसुन्ड में स्थायी हो गए थे। स्नातक, अधिस्नातक व पी.एचडी. नार्वे में ही करने के बाद एडवर्ड मोजर उच्च अध्ययन हेतु लंदन गए। एडवर्ड मोजर ने गणित व सांख्यिकी का भी अध्ययन किया।

एडवर्ड मोजर और मै-ब्रिट

मै-ब्रिट का जन्म 4 जनवरी, 1963 को नार्वे में हुआ। मै-ब्रिट का लालन पाल नार्वे के दूरस्त पश्चिमी भाग में हुआ। 1990 दशक के प्रारम्भ में मै-ब्रिट ने ओस्लो विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। ब्रिट ने वहाँ गणित, मनोविज्ञान, तन्त्रिकीय-जीवविज्ञान आदि कई विषयों का अध्ययन किया। यही पर ब्रिट की मुलाकात एडवर्ड से हुई जो विवाह तक पहुँच गई। 1985 में विवाह करने के बाद दोनों ने मस्तिष्क व्यवहार व सम्बन्ध विषय में अनुसंधान करने का तय किया। ब्रिट 1990 में स्नातक बनी तथा एडवर्ड वहीं प्रयोगशाला में कार्य करते रहे। मै-ब्रिट व एडवर्ड मोजर कावली इंस्टीट्यूट आफ साइंस एण्ड टेक्नोलोजी के संस्थापक डायरेक्टर हैं। वर्तमान में मोजर दम्पति मैक्स प्लांक तंत्रिकी-जीवविज्ञान संस्थान म्यूनिक में अनुसंधान कर रहे हैं। नोबेल समिति के सदस्य ने जब पुरस्कृत होने की सूचना हेतु मोजर दम्पति से सम्पर्क करने का प्रयास किया तब एडवर्ड मोजर म्यूनिक की ओर हवाई यात्रा पर थे अतः पहले समाचार मै-ब्रिट तक पहुँचा।

भौतिकी

4. इसामू आकासाकी

इसामू आकासाकी का जन्म 30 जनवरी, 1929 को कागोशीमा जापान में हुआ। आकासाकी ने क्योटो विश्वविद्यालय से 1952 में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद नागोया विश्वविद्यालय से इलेक्ट्रोनिक्स में इंजिनियरिंग की। आकासाकी ने 1960 से ही गेलियम नाइट्राइड आधारित नीला लेड पर कार्य प्रारम्भ कर दिया था। मत्सुशिता अनुसंधान संस्थान टोकियो में कार्य करते हुए आकासाकी गेलियम नाइट्राइड क्रिस्टल तथा लेड व्यवस्था में निरन्तर सुधार करते गए। पर्याप्त सफलता नहीं मिलने पर सन् 1981 में आकासाकी ने गेलियम नाइट्राइड बनाने के लिए एक नई विधि 'मेटेलोर्गेनिक वेपर फेज एपीटैक्सी' का उपयोग किया। सन् 1985 में इनके समूह को उच्च स्तर के गेलियम नाइट्राइड क्रिस्टल बनाने में सफलता मिली। 1989 में इन्हें प्रथम गेलियम नाइट्राइड पी-

इसामू आकासाकी

*पूर्व प्रधानाचार्य, 2 तिलक नगर, पाली- 306 406 (राजस्थान).

एन जंक्शन बनाने में सफलता प्राप्त हुई। 1990 में आकासाकी ने कमरे के तापक्रम पर गेलियम नाइट्राइड उद्दीपित उत्सर्जन प्राप्त किया। सन् 2000 में अर्द्ध ध्रुवी गेलियम नाइट्राइड क्रिस्टल के अस्तित्व को प्रमाणित किया जिससे विश्वव्यापी उपयोग हेतु क्रिस्टल बनाना सम्भव हुआ।

आकासाकी के आविष्कारों से प्राप्त पेटेन्टो की रायल्टी से नागोया विश्वविद्यालय को बहुत धन प्राप्त हुआ। इस धन से नागोया विश्वविद्यालय में आकासाकी संस्थान बनाया गया है जो अनेक प्रकार की गतिविधियों का केन्द्र बना रहता है। इस संस्थान में एक लेड गैलेरी है जिसमें नीला लेड के विकास को प्रदर्शित किया गया है। संस्थान में छठी मंजिल पर प्रोफेसर आकासाकी का कार्यालय है।

प्रोफेसर आकासाकी को 1989 में जापान एसोसिएशन फॉर क्रिस्टल ग्रोथ से सम्मानित किया गया। इसके बाद निरन्तर सम्मानित होने का सिलसिला चलता रहा और परिणति 2014 के नोबल पुरस्कार में हुई। सन् 1999 में प्रोफेसर आकासाकी को इलेक्ट्रिकल व इलेक्ट्रोनिक्स इंजीनियर संस्थान का फेलो चुना गया।

5. हिरोषी अमानो

हिरोषी अमानो का जन्म 11 सितम्बर, 1960 को हामामात्सु में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा पूरी करने के बाद अमानो नागोया विश्वविद्यालय में आ गए तथा 1963 से 1992 के मध्य स्नातक से लेकर इंजीनियरिंग में डॉक्ट्रेट तक की उपाधियाँ प्राप्त की। नागोया विश्वविद्यालय में अनुसंधान सहायक के रूप में कार्य प्रारम्भ करने के कुछ समय बाद ही अमानो सहायक प्रोफेसर बन कर मेइजो विश्वविद्यालय में चले गए। सन् 1998 में वहीं पर संयुक्त प्रोफेसर तथा 2010 में नागोया विश्वविद्यालय के इंजीनियरिंग स्नातक स्कूल में चले गए, जहाँ वर्तमान में प्रोफेसर हैं।

हिरोषी अमानो

हिरोषी अमानो स्नातक होने से पूर्व ही प्रोफेसर इसामू आकासाकी के अनुसंधान समूह से जुड गए थे। उस समय से ही अमानो नाइट्राइड अर्द्धचालकों की वृद्धि करने व गुणों के अध्ययन से सम्बंधित उपकरणों के विकास में लगे रहे हैं। सन् 1985 में अमानो ने अपने समूह के लिए नीलम पर नाइट्राइड अर्द्धचालक फिल्म के विकास हेतु, न्यून तापक्रम पर जमने वाली बफर पर्त का विकास किया। इसी से अर्द्धचालक आधारित प्रकाश उत्सर्जन व लेसर डायोड का विकास संभव हुआ। 1989 में नीले लेड के बनाने में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही।

6. शुजी नाकामुरा

शुजी नाकामुरा के व्यक्तित्व व पृष्ठ भूमि को देखकर कुछ दिन पूर्व तक कोई यह आशा नहीं कर सकता था ये कभी जापान के नायक भी बन सकते हैं। एक छोटी सी केमिकल कम्पनी के कर्मचारी ने अपनी निराशा को जीत में बदल कर, वह कर दिखाया जो प्रतिस्पर्धा में दौड़ रही बड़ी कम्पनियाँ नहीं कर पाईं।

नाकामुरा का जन्म 22 मई, 1954 को जापान के सबसे छोटे व कम विकसित द्वीप शिकाकू पर हुआ। स्कूली परीक्षा में अच्छे अंक नहीं होने के कारण नाकामुरा ने अल्पख्यात टोकुशीमा विश्वविद्यालय से इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में स्नातक उपाधि प्राप्त की। बाद में यहीं से अधिस्नातक बने।

शुजी नाकामुरा

अपने पैतृक स्थान के समीप रहने की चाह के कारण अध्ययन पूरा करने के बाद नाकामुरा रसायनिक पदार्थ बनाने वाली स्थानीय कम्पनी, नीचिया कोरपोरेशन में काम करने लगे। नाकामुरा की कम्पनी का लैड के अनुसंधान से कोई सम्बंध नहीं था मगर कंपनी के मालिक ने अनुमति दी। नौकरी के पहले तीन वर्ष में नाकामुरा ने हरा लेड बनाया। अनुभव नहीं होने के कारण नाकामुरा का हरा लैड बाजार में नहीं चला। बड़ी कम्पनियाँ पहले ही हरा लेड बाजार में ला चुकी थीं। कम्पनी द्वारा अनुसंधान बंद करा देने पर नाकामुरा ने अपने स्तर पर कार्य जारी रखा और 1993 में सफलता प्राप्त की।

सन् 1994 में नाकामुरा को टोकुशीमा विश्वविद्यालय ने इंजीनियरिंग में डॉक्टरेट की उपाधि दी। 1999 में नाकामुरा नीचिया कोरपोरेशन छोड़कर कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में इंजीनियरिंग के प्रोफेसर बन गए। 2001 में नीचिया कम्पनी में किए कार्य का बोनस लेने के लिए नाकामुरा को न्यायालय की शरण में जाना पड़ा, बाद में हुए समझौते में भी इतनी रकम प्राप्त हुई जितनी पूर्व में किसी जापानी कंपनी से किसी को प्राप्त नहीं हुई थी।

नाकामुरा, पत्र प्रकाशन के स्थान पर कार्य करने में विश्वास करते हैं। सफलता मिलने से कुछ समय पूर्व से नाकामुरा ने अनुसंधान पत्र पढ़ने भी छोड़ दिए। नाकामुरा का मानना है कि अनुसंधान पत्र पढ़कर आप दूसरे की तरह कार्य करने लगते हैं। नाकामुरा की सफलता का एक प्रमुख कारण गेलियम नाइट्राइड का चुनाव रहा। उन दिनों अधिकतर अनुसंधानकर्ता अर्द्धचालक बनाने में जिंक सेलेनाइड का उपयोग कर रहे थे।

नाकामुरा सप्ताह में सात दिन काम करते हैं तथा सुबह सात से शाम सात बजे तक कार्य करते हैं। जब कोई काम हाथ में लेते हैं तो जल्दी से पूरा करना चाहते हैं। घर पर रहते हुए भी उनका मन काम ही उलझा रहता है अतः घर रहने से लाभ नहीं होता। नाकामुरा पढ़ने में कम तथा चिन्तन में अधिक विश्वास करते हैं। नाकामुरा इस समय केलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पदार्थ विज्ञान के प्रोफेसर हैं। आने वाले समय में और उपलब्धियों की उम्मीद नाकामुरा से की जा सकती है।

रसायन

7. रोबर्ट एरिक बेटजिंग

रोबर्ट एरिक बेटजिंग का जन्म 13 जनवरी, 1960 को एन्न अरबोर मिशीगन में हुआ। इनके पिता का नाम रोबर्ट बेटजिंग था। कैलिफोर्निया प्रौद्योगिकी संस्थान से भौतिकी में 1983 में स्नातक उपाधि लेने के बाद एरिक कोरनेल विश्वविद्यालय चले गए। कोरनेल विश्वविद्यालय से अधिस्नातक व पी.एचडी. की उपाधियाँ प्राप्त की।

ISSN 2231 - 2455

रोबर्ट एरिक बेटजिंग

अध्ययन पूरा करने के बाद बेटजिंग बेल प्रयोगशाला में अर्द्धचालक भौतिकी में अनुसंधान कार्य करने लगे। सन् 1996 में बेटजिंग ने अपने पिता की अन्न आर्बोर मशीन कम्पनी में अनुसंधान व विकास विभाग के उपाध्यक्ष बने। वहाँ पर बेटजिंग ने फ्लेक्सिबल अडेपटिव सर्वोहाइड्रोलिक तकनीकी का विकास किया, मगर वह तकनीकी वाणिज्यिक स्तर पर सफल नहीं हुई। इसके बाद बेटजिंग पुनः सूक्ष्मदर्शन के क्षेत्र में लौट गए और प्रकाश सक्रिय स्थानीयकारी सूक्ष्मदर्शन (फोटोएक्टिवेटेड लोकेलाइजेशन माइक्रोस्कोपी) का विकास किया। सन् 2006 में बेटजिंग होवर्ड हगेज मेडिकल संस्थान में अति उच्च विभेदित प्रदीप्तिशील सूक्ष्मदर्शन तकनीक के विकास समूह का नेतृत्व करने लगे। बेटजिंग को कई बार सम्मानित किया गया तथा परिणति 2014 के नोबेल पुरस्कार में बराबर की भागीदारी के रूप में हुई।

8. स्टेफेन वाल्ट हेल

स्टेफेन वाल्ट हेल

स्टेफेन वाल्टर हेल का जन्म 23 दिसम्बर, 1962 को अराद रोमानिया में हुआ। इनका बचपन इनके पैतृक स्थान सनताना में बीता। सन् 1977 तक हेल ने वहीं पर प्रारम्भिक अध्ययन किया। एक वर्ष की शिक्षा टीमीसोअरा में प्राप्त करने के बाद इनका परिवार पश्चिमी जर्मनी चला गया। हेल के पिता इंजीनियर तथा माता शिक्षिका थीं। परिवार जर्मनी में लुडविगशाफेन में स्थायी रूप से बस गया।

हेल ने अपना उच्च अध्ययन हेइडेलबर्ग विश्वविद्यालय में 1981 में प्रारम्भ किया। हेइडेलबर्ग विश्वविद्यालय से सन् 1990 में डॉक्ट्रेट के साथ अध्ययन पूर्ण किया। हेल के शोधपत्र का शीर्षक था- को फोकल सूक्ष्मदर्शी से सूक्ष्म पारदर्शी संरचनाओं का चित्रण। हेल ने को फोकल सूक्ष्मदर्शी की विभेदन क्षमता में सुधार किया जो बाद में 4 पाई सूक्ष्मदर्शन कहलाया। 1991 से 1993 तक हेल ने यूरोपियन अणु जीवविज्ञान प्रयोगशाला हेइडेल्बर्ग में कार्य किया। यहाँ 4 पाई सूक्ष्मदर्शन का सैद्धान्तिक पक्ष स्पष्ट किया। सन् 1993 से 1996 तक तुर्कु विश्वविद्यालय फिनलैण्ड के चिकित्सकीय भौतिकी विभाग में कार्य करते हुए उद्दीपित उत्सर्जन अवक्षय (स्टेप) सूक्ष्मदर्शी विकसित किया। हेल सन् 2002 में हेल मैक्स प्लांक संस्थान के जैवभौतिकी रसायन विभाग के निदेशक बने। उन्होंने मैक्स प्लांक संस्थान में 'नैनोबायोफोटोनिक्स' का नया विभाग स्थापित किया। सन् 2003 से हेल ने जर्मन कैंसर अनुसंधान केन्द्र के 'प्रकाशीय नैनोदर्शन प्रभाग' (ऑप्टीकल नैनोस्कोपी डिविजन) का नेतृत्व किया।

उद्दीपित उत्सर्जन अवक्षय (स्टेप) सूक्ष्मदर्शी में निरन्तर सुधार करते हुए हेल ने अबे की सीमा रेखा को पार करने की विधि विकसित की। इस पर उन्हें 2014 के रसायन के नोबेल पुरस्कार का सहभागी बनाया गया। सूक्ष्मदर्शन के क्षेत्र में हेल द्वारा किए गए योगदान के कारण इन्हें 10 वाँ जर्मन इनोवेशन अवार्ड प्रदान किया गया था।

9. विलियम एस्को मोइर्नर

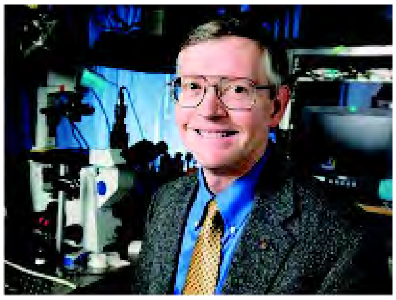

विलियम एस्को मोइर्नर

विलियम एस्को मोइर्नर का जन्म 24 जून, 1953 को प्लेटसान्टन कैलिफोर्निया, अमेरिका में हुआ। इनकी माँ का नाम बर्था फ्रान्सेस तथा पिता का नाम विलियम अल्फ्रेड मोइर्नर था। एस्को ने वाशिंगटन विश्वविद्यालय से भौतिकी, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग तथा गणित में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। अध्ययन के लिए इन्हें छात्रवृतियाँ निरन्तर मिलती रही। कोर्नेल विश्वविद्यालय से अधिस्नातक हुए तथा वही से 1982 में पी.एचडी. की उपाधि प्राप्त की। मोइर्नर ने आईबीएम कोरपोरेशन अनुसंधानकर्ता के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया फिर वहीं पर मैनेजर व दल प्रभारी की जिम्मेदारी निभाई। बाद में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में रसायन विभाग में भौतिक-रसायनशास्त्र में मोइर्नर को सम्मानजनक पद मिल गया।

सन् 1997 में मोइर्नर हार्वर्ड विश्वविद्यालय में रोबर्ट बर्न्स वुडवर्ड विजिटिंग प्रोफेसर बने। 1998 में मोइर्नर के प्रोफेसर बनने पर इनका अनुसंधान समूह स्टानफोर्ड विश्वविद्यालय में चला गया। मई 2014 तक मोइर्नर के 386 अनुसंधान पत्र प्रकाशित हो चुके थे। एकल अणु स्पेक्ट्रोस्कोपी, अतिउच्च विभेदन सूक्ष्मदर्शन, रसायन-भौतिकी, नैनो फोटोनिक्स आदि मोइर्नर के प्रिय अनुसंधान विषय रहे हैं।

मोइर्नर ने पुरस्कृत होने का जो सिलसिला विद्यार्थी जीवन से प्रारम्भ किया वह आगे भी चलता रहा है। सेवा में आने पर 1984 में मोइर्नर को अद्वितीय युवा व्यवसायी का राष्ट्रीय का एवार्ड मिला। अब 2014 में विश्व का सर्वश्रेष्ठ नोबेल पुरस्कार मिला है।

"सब में समान जीव है।"
"जो सब परिस्थितियों में अपनी उपमा से सबको समान देखता है वह योगी है।"

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

फास्ट फूड : ना बाबा ना !!!

मनीष मोहन गोरे*

फास्ट फूड और उसका सेवन

तेजी से बढ़ते शहरीकरण, व्यस्त जीवन-शैली और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रही प्रगति ने विकासशील देश में लोगों के जीवन-यापन के तरीके को बदल कर रख दिया है। इन बदलावों के नतीजे के तौर पर लोगों ने घर पर खाना पकाने और खाने की आदत में भी परिवर्तन किया है। खासकर शहरों में रहने वाले लोग 'रेडी टू ईट मील' और 'फास्ट फूड' पर ज्यादा निर्भर होते जा रहे हैं।

फास्ट फूड बढती माँग

फास्ट फूड का चलन 1950 के दशक में सबसे पहले अमेरिका में शुरू हुआ और बीसवीं सदी के अंत तक एशियाई देशों से होता हुआ भारत में पहुँचा। इन खाद्य पदार्थों में संतुलित आहार की संकल्पना को पूरी तरह ध्यान में नहीं रखा जाता और ज्यादातर वसा, कार्बोहाइड्रेट, नमक और जायका बढ़ाने वाले मसालों और रसायनों पर जोर रहता है। इसके अलावा इन फास्ट फूड में मोनो-सोडियम ग्लुकामेट, सोडियम नाईट्रेट और सोडियम नाइट्राइट जैसे मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक रसायनों को केवल स्वाद में इजाफे के लिए मिलाया जाता है। फास्ट फूड रेस्टोरेंट में बेचे जाते हैं और लोग इन्हें वहीं बैठकर तुरन्त खा भी सकते हैं और पैक कराकर घर भी ले जा सकते हैं।

फास्ट फूड के आने से पहले घर की महिलाओं को भोजन या पकवान बनाने के लिए बाजार से मसाले, सब्जी, राशन आदि अनेक प्रकार की सामग्रियाँ इकट्ठा करना, उन्हें पकाना फिर परोसना होता था। इस पूरी प्रक्रिया में अधिक समय और श्रम लगता है, परन्तु असंख्य भारतीय परिवार खाना पकाने और खाने-खिलाने की इसी परम्परागत प्रक्रिया को आज भी अपनाते हैं। आधुनिक जीवन की व्यस्तता और समय की कमी के चलते अनेक लोग घर पर खाना पकाने की जगह फास्ट फूड को वरीयता देते हैं। कई अध्ययन और सर्वेक्षण के बाद यह निष्कर्ष पाया गया है कि लोग फास्ट फूड को मुख्य रूप से इन छः कारणों से अपना रहे हैं- बढ़ता शहरीकरण, लंबे समय तक काम करना, घर पर खाना बनाने में समय अधिक लगना, आकर्षक विज्ञापन, व्यावसायिक भवनों की उपलब्धता और आय में वृद्धि।

फास्ट फूड का इतिहास

अधिकांशतः विदेशी यात्रियों को भोजन की सुविधा प्रदान करने के लिए मानव सभ्यता के अनेक स्वरूपों में रेस्टोरेंट जैसी दुकानों का अस्तित्व रहा है। प्राचीन रोम और ग्रीस में बाहर से आये लोगों के आवास और भोजन के लिए सराय और धर्मशाला हुआ करते थे। पश्चिमी समाज में सत्रहवीं सदी से मनोरंजन के लिए घर से बाहर जाकर चायखाना और काफी हाउस में चाय-काफी और स्नैक्स खाने-पीने का चलन शुरू हो गया था। हालाँकि व्यवस्थित तरीके से रेस्टोरेन्ट बनाकर ग्राहकों को चाय-काफी, स्नैक्स और फास्ट फूड बेचने की पहली औपचारिक पहल का श्रेय मैकडोनाल्ड कंपनी को जाता है। फास्ट फूड चेन शुरू करने का श्रेय कुछ लोग वाईट केसल को देते हैं। शुरुआत के दिनों में बर्गर एक प्रचलित फास्ट फूड था और इसे मेलों, सर्कस में और घूमकर ठेलों पर बेचे जाते थे। प्रारंभ में लोगों ने शिकायत किया कि हैमबर्गर में सड़े हुए माँस का प्रयोग होता है। लोगों के मन के इस संदेह को मिटाने के लिए व्यावसायिक भवनों में आकर्षक रेस्टोरेंट खोले गए और वहाँ पर फास्ट फूड बनने की पूरी प्रक्रिया लोगों को दिखाई जाती थी। मैकडोनाल्ड, वाईट कैसल के बाद समय के साथ बर्गर किंग, टाको बेल, वेंडिज और केएफसी जैसे फास्ट फूड ब्रैंड दुनिया में उभरकर आये। वर्तमान में मैकडोनाल्ड दुनिया का सबसे बड़ा फास्ट फूड चेन है।

भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसन्धान परिषद् (आईसीएमआर) के अनुसार ''फास्ट फूड वे खाद्य पदार्थ होते हैं जो पहले से बने होते हैं या मिनटों के अंदर तैयार किये जाते हैं, जैसे कि नूडल, बर्गर, फ्राइड फिश, मिल्क शेक, चिप्स, सलाद, पिज्जा, सैंडविच आदि। फास्ट फूड का संग्रहरण, हैंडलिंग और सूक्ष्म-जैविक संक्रमण इससे जुड़े मुख्य मुद्दे होते हैं। इन खाद्य पदार्थों में कैलोरी मान भी जरूरत से काफी ज्यादा होता है इसलिए इनके सेवन से हमारे स्वास्थ्य पर बुरा असर होता है।''

रेस्टूरेन्ट में फास्ट फूड

क्या हमें फास्ट फूड से पोषक तत्व मिलते हैं?

आधुनिक जीवन-शैली के दबाव में फास्ट फूड भले ही सुविधाजनक, अनुकूल और सस्ते हों, मगर इन खाद्य पदार्थों से हमारी सेहत को अनेक नुकसान भी हैं। इन खाद्य सामग्रियों में अधिक मात्रा में

* विज्ञान प्रसार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, ए-50, इन्डस्ट्रियल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा-201 309.

वसा, संतृप्त वसा और नमक मिलाये जाते हैं जिनके सेवन से हमें जरूरत से बहुत ज्यादा कैलोरी मिल जाती है। इनके फलस्वरूप हृदय रोग, मधुमेह, दाँतों में संक्रमण और मोटापे जैसी स्वास्थ्य समस्याएँ जन्म ले रही हैं। शोध नतीजों में ये भी सामने आया है कि फास्ट फूड में एडिटिव और प्रोसेसिंग तकनीकों के प्रयोग से खाद्य सामग्रियों के मूल स्वरूप में बदलाव आ जाता है और इस कारण उनकी पौष्टिकता घट जाती है।

पिज्जा, उपमा और डोसा

आज महिलाएँ अधिक संख्या में काम करने के लिए घर से बाहर जा रही हैं और परिवार भी एकाकी हो चले हैं। इसलिए खासकर शहरी इलाकों में रहने वाले लोगों के द्वारा फास्ट फूड का उपभोग बढ़ा है। दूध, माँस, मछली, ताजे फल और सब्जियों जैसे जल्दी खराब होने वाले खाद्य पदार्थों को परिरक्षित करने के लिए खाद्य प्रसंस्करण यानी फूड प्रोसेसिंग एक आवश्यक प्रक्रिया के रूप में इजाद हुई है।

चिप्स और चॉकलेट

फूड प्रोसेसिंग की वजह से आज लंबी दूरियों और लंबे समय तक खाद्य पदार्थों के परिवहन और वितरण किया जाना संभव हुआ है। प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों को आमतौर पर परिष्कृत किया जाता है और उनमें से अधिकांश में वसा और नमक-शर्करा की अधिक मात्रा पायी जाती है। इसके फलस्वरूप, इनमें अधिक कैलोरी मौजूद होते हैं। इन खाद्य पदार्थों में आहार संबंधी रेशे और सूक्ष्म पोषक तत्व बिल्कुल भी नहीं पाए जाते हैं। इन कारणों से यदि हमारे भोजन का एक बड़ा हिस्सा ये फास्ट फूड हैं तो इनके सेवन को लेकर सावधानी बरतनी चाहिए। इडली, डोसा, उपमा जैसे परम्परागत नाश्तों में भरपूर मात्रा में पोषक पदार्थ मौजूद होते हैं। चिप्स, कैंडी, चाकलेट बच्चों में बेहद लोकप्रिय खाद्य पदार्थ केवल रिक्त कैलोरी प्रदान करते हैं और इनमें कृत्रिम रंजक और अन्य मिलावटी पदार्थ होते हैं, इसलिए इन्हें स्वास्थ्य के लिए सर्वथा हानिदायक माना जाता है। बच्चों को इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

फास्ट फूड के सामान्य घटक

फास्ट फूड में सामान्यतौर पर पाए जाने वाले घटक होते हैं:

- ट्रांस फैट
- सोडियम
- मोनोसोडियम ग्लुकामेट
- शुगर
- जायका बढ़ाने वाले रसायन

इन सभी का संबंध केवल स्वाद में वृद्धि करना है और फास्ट फूड को बनाने में स्वास्थ्य को लेकर समझौते किये जाते हैं। मसलन इन खाद्य पदार्थों में कार्बोहाइट्रेट, वसा, मसालों और नमक का जरूरत से अधिक प्रयोग किया जाता है। संतुलित आहार की अवधारणा का ध्यान नहीं रखा जाता। रेशे इनमें बिल्कुल नहीं मिलाये जाते हैं जो कि हमारे भोजन की पाचन क्रिया में बेहद सहायक होते हैं।

क्या फास्ट फूड का हमारी सेहत पर बुरा प्रभाव पड़ता है?

जैसा कि पहले चर्चा हो चुकी है कि फास्ट फूड में अधिक मात्रा में वसा पाई जाती है और शोध नतीजों में फास्ट फूड के सेवन और हमारे 'बाड़ी मास इंडेक्स' अर्थात् मोटापे के बीच सकारात्मक संबंध पाया गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट में यह बात सामने आई है कि जो लोग ज्यादातर फास्ट फूड और साफ्ट ड्रिंक लेते हैं, उनमें हृदयरोग, कैंसर, आस्टियोपोरोसिस, दाँत से जुड़े रोग, मधुमेह और मोटापा जैसे रोग पाए जाते हैं।

फास्ट फूड की अतिरिक्त शर्करा से हमें कोई पोषण नहीं मिलता अलबत्ता इससे मिले अतिरिक्त कैलोरी गैर-जरूरी होते हैं और इनसे शरीर का वजन बढ़ने के अलावा हृदय रोग भी हो जाता है। ज्यादातर फास्ट फूड में ट्रांस-फैट होता है जो एलडीएल कोलेस्टेराल के स्तर को बढ़ाता है। यह बैड कोलेस्टेराल होता है। ट्रांस-फैट एचडीएल यानी कि गुड कोलेस्टेराल को कम करता है। हमारे शरीर में इस तरह के बदलावों के कारण टाईप 2 मधुमेह होने का खतरा बढ़ जाता है। फास्ट फूड में नमक यानी सोडियम क्लोराइड के अधिक प्रयोग के कारण उच्च रक्तदाब और हृदय पेशियों के बड़े होने का खतरा बढ़ जाता है। बच्चों में फास्ट फूड के अधिक सेवन से उनमें भी उच्च रक्तदाब की समस्या उत्पन्न हो रही है। शरीर में सोडियम की अधिकता के कारण बड़ों सहित बच्चों में भी आजकल पथरी और पेट के कैंसर जैसी बीमारियाँ होने लगी हैं।

एक अध्ययन में पाया गया है कि नमक, नाइट्रेट और मोनोसोडियम ग्लुकामेट के मिलाये जाने से पिज्जा, हैमबर्गर और हाट डाग्स जैसे फास्ट फूड खाने वालों को डिप्रेशन का खतरा बना रहता है। फास्ट फूड खाने वाले लोगों में डिप्रेशन होने की सम्भावना ऐसे खाद्य पदार्थ नहीं खाने वालों की तुलना में 51 प्रतिशत अधिक बनी रहती है। फास्ट फूड में उच्च मात्रा में मौजूद कार्बोहाइड्रेट रक्त शर्करा के स्तर में वृद्धि करता है और

इससे त्वचा के मुँहासे बनते हैं। जो बच्चे अधिकतर फास्ट फूड खाते हैं, उन्हें एक्जिमा होने का जोखिम रहता है। इस बीमारी में त्वचा कर धब्बे बन जाते हैं जिसमें जलन होती है।

जब हम कार्बोहाइड्रेट और शर्करा की अधिकता वाले फास्ट फूड का ज्यादा सेवन करते हैं तो हमारे मुँह में रहने वाले जीवाणु अम्ल उत्पन्न करते हैं जो हमारे दाँतों के इनामेल को क्षति पहुँचाने लगते हैं जिससे डेंटल केविटी बनती है। फास्ट फूड से हमारे शरीर में पहुँचने वाली सोडियम की अधिक मात्रा से आस्टियोपोरोसिस का खतरा बढ़ जाता है। इस बीमारी में हड्डियाँ पतली और कमजोर हो जाती है।

बच्चों में मोटापा का एक बड़ा कारण है फास्ट फूड

बच्चों में मोटापा वर्तमान समय का एक अहम समाजिक सरोकार बन गया है। मोटापा इसलिए बुरा है क्योंकि इसकी वजह से अनेक असाध्य रोगों का संबंध होता है। फास्ट फूड की मार्केटिंग और विज्ञापन में भी बच्चों को लक्ष्य कर उन्हें आकर्षित किया जाता है। आम धारणा है कि वयस्क इन विज्ञापनों को लेकर तर्कसंगत ढंग से सोचते हैं और फास्ट फूड के फायदे-नुकसान को जानते-समझते हैं। मगर बच्चे तो अबोध होते हैं और फास्ट फूड से स्वास्थ्य को होने वाले दूरगामी नुकसान से बेखबर होते हैं।

मोटापे की मूल वजह है खाने या पीने से ग्रहण की गई ऊर्जा और मेटाबोलिज्म और शारीरिक गतिविधियाँ के द्वारा खर्च ऊर्जा के बीच असंतुलन। शोध नतीजे बताते हैं कि फास्ट फूड का सेवन अतिरिक्त ऊर्जा प्राप्ति को बढ़ावा देते हैं जिसके फलस्वरूप वजन बढ़ने और मोटापे का खतरा बढ़ता है। मगर आजकल जिस प्रकार बड़े और बच्चे दोनों ही घर के खाने की बजाय रेस्टोरेंट में फास्ट फूड खाना अधिक पसंद कर रहे हैं, उससे स्वास्थ्य को व्यापक खतरा बढ़ा है।

4 से 19 वर्ष के बीच की उम्र के बच्चों में आमतौर पर हफ्ते में दो या दो से अधिक बार फास्ट फूड खाने की प्रवृत्ति देखी जा रही है। बच्चों के शरीर में फास्ट फूड के जरिये जो यह अतिरिक्त कैलोरी पहुँच रही है, वह उनकी शारीरिक गतिविधि से पूरी तरह खर्च नहीं होती है और इस कारण वे मोटापे के आसान शिकार बन रहे हैं। मोटापे के कारण बच्चों में साँस की तकलीफ और मधुमेह जैसी कई दूसरी बीमारियाँ भी होने लगी हैं।

बच्चों को फास्ट फ़ूड से दूर करने में अभिभावकों की भूमिका

बच्चों के आहार में स्वास्थ्यवर्द्धक तत्वों को शामिल किये जाने की दिशा में अभिभावकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आपने अक्सर देखा होगा कि जो माँ-बाप फल और सब्जियों को नियमित रूप से खाते हैं, उनके बच्चों में भी इन्हें जीवनपर्यंत खाने की आदत पड़ जाती है। उसी तरह जो माँ-बाप अधिकतर फास्ट फूड खाते हैं, उनके बच्चों को भी इनकी आदत लग जाती है। बच्चे अपने बचपन में विभिन्न प्रभावों के अंतर्गत जो आदत विकसित कर लेते हैं, वे आदत उनके साथ जीवन भर बने रहते हैं। इसलिए बचपन से ही माँ-बाप के हस्तक्षेप के माध्यम से बच्चों में स्वास्थ्यवर्द्धक खान-पान की आदत का विकास किया जा सकता है और उन्हें फास्ट फूड के ज्यादा सेवन से रोका जा सकता है।

फास्ट फूड परिवार के साथ खाते हुए

स्वास्थ्यवर्द्धक भारतीय खाद्य पदार्थ और व्यायाम की उपादेयता

भारतीय आहार स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यंत उत्तम हैं। पूर्वांचल का सत्तू, दाल-बाटी हो या दक्षिण भारत के इडली सांभर, इडली, बड़ा, डोसा, उपमा - इन सभी में आवश्यक पोषक तत्व मौजूद होते हैं और इनमें मसालों, नमक और अनावश्यक घी-तेल का भी कोई स्थान नहीं होता। अगर संतुलित और संयमित आहार लिया जाए, तली-भुनी मसालेदार खाद्य पदार्थों से दूरी बनाकर रखा जाए और नियमित रूप से व्यायाम किया जाए तो हम अपने शरीर को स्वस्थ बनाए रख सकते हैं। व्यायाम का अर्थ यह नहीं है कि 2-3 घंटे कसरत में हर रोज लग जाना। आप अगर हफ्ते में 4-5 दिन सुबह या शाम को 30-40 मिनट ब्रिस्क वॉकिंग (तेज टहलना) कर लें तो यह एक बेहतर व्यायाम के समान है।

> "शास्त्रविहित विधियों का अन्धवत् अनुकरण हानिकर है। शास्त्रविहित शब्दों का वास्तविक तात्पर्य और अर्थ समझना और उन शब्दों के साथ उच्च भावों और विचारों का सम्बन्ध पैदा करना सामाजिक व्यवहार और नीति के सुधार के लिए आवश्यक है।"
>
> –महामना पं. मदन मोहन मालवीय

ISSN 2231 - 2455

कहाँ मिलता है फिरोजा और लाजवर्त ?

डॉ0 विजय कुमार उपाध्याय*

फिरोजा

फिरोजा हरीतिमायुक्त नीले रंग का एक अपारदर्शक खनिज है। रासायनिक संघटन के दृष्टिकोण से यह ताम्बे तथा एल्युमिनियम का हाइड्रस फौस्फेट है जिसका रासायनिक सूत्र $CuAl_6 (PO_4)_4 (OH)_{8.4}H_2O$ है। इसे अंग्रेजी में टर्क्वायज कहा जाता है। वस्तुतः इस रत्न का अंग्रेजी नाम 'टर्क्वायज' 16वीं शताब्दी में प्रचलन में आया। टर्क्वायज शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच भाषा के शब्द 'टर्किस' से हुई है। फ्रेंच भाषा में इसे टर्किस इस कारण से कहा जाता था क्योंकि इसे टर्की से फ्रांस लाया गया था। यह रत्न उस समय ईरान के रवोरासन प्रान्त में पाया जाता था। प्राचीन यूरोपीय विद्वान प्लीनी ज्येष्ठ ने अपनी पुस्तकों में इस रत्न की चर्चा 'कैल्लैस (Callais)' नाम से की थी। ईरान में इसे 'फिरोजा' कहा जाता था। प्राचीन मेक्सिको के निवासी ऐजटेक लोग इस रत्न को 'टैक्सीहुइट' कहते थे।

फिरोजा का माला

मो के पैमाने पर फीरोजा की कठोरता 5.5 से 6 के बीच पायी जाती है। इसका विशिष्ट गुरुत्व 2.60 से 2.10 के बीच, वर्तनांक 1.61 से 1.62 के बीच तथा चमक (लस्चर) मोमवत (वैक्सी) या काँचवत (विट्रियस) होती है। इसकी रवा प्रणाली (क्रिस्टल सिस्टम) ट्राइक्लिनिक, वर्ण रेखा (स्ट्रीक) हल्की नीली से उजली तथा भंगुरता (फ्रैक्चर) गोलाम (कनक्वायडल) होती है। सामान्य तापमान पर यह सभी अम्लों में अघुलनशील है, परन्तु गर्म हाइड्रोक्लोरिक एसिड में यह घुल जाता है। सामान्य तौर पर फिरोजा अपारदर्शक रत्न है, परन्तु कभी-कभी इसके अर्द्धपारदर्शक (ट्रांसल्युसेंट) नमूने भी पाये जाते हैं। इसका रंग प्रायः नीले रंग में ही मिलता है जो तपाने पर हरा हो जाता है। ऐसा रंग परिवर्तन निर्जलन (डिहाइड्रोकान) के कारण होता हैं कभी-कभी हरीतिमायुक्त पीले रंग का या उजले रंग का फिरोजा भी पाया जाता है।

रत्नों के रूप में फिरोजा का उपयोग काफी प्राचीनकाल से होता आया है। हरीतिमायुक्त नीले रंगवाला फिरोजा कई प्राचीन सभ्यताओं के लोगों द्वारा उपयोग में लाये जाने के साक्ष्य इतिहास में मिलते हैं। प्राचीनकाल के दौरान मिस्र, फारस तथा मेसोपोटामिया के शासकों द्वारा इस रत्न को काफी अधिक महत्व दिया जाता था। प्राचीन मेक्सिकों के ऐजटेक शासकों द्वारा भी इस रत्न को काफी पसन्द किया जाता था। चीन में प्राचीनकाल के दौरा शांग वंश के राजाओं का यह एक प्रिय रत्न था। हालाँकि फिरोजा काफी प्राचीनकाल से उपयोग में लाये जाने वाले प्रमुख रत्नों में से एक था, परन्तु यूरोप में इसका उपयोग बहुत विलम्ब से शुरु हुआ। इसके पीछे कारण यह था कि रोमन कैथोलिक चर्च रत्नों के उपयोग को काफी निरुत्साहित करते थे जिनमें फीरोजा भी प्रमुख था। यूरोपीय देशों में फिरोजा का उपयोग 14वीं सदी में शुरु हुआ जब रोमन कैथोलिक चर्च का प्रभाव कम होने लगा था। सिर्फ यूरोप ही नहीं भारत में भी मुगल शासन के पूर्व फिरोजा एक अज्ञात रत्न था। जब भारत में यह रत्न आया तो नीले रंग के कारण इसे नीलम के उप रत्न के रूप में उपयोग में लाया जाने लगा। नीलम ज्योतिष के अनुसार शनि का रत्न माना जाता है। जापान में फीरोजा का उपयोग 18वीं शताब्दी के बाद शुरु हुआ।

कुछ देशों के निवासियों की मान्यता थी कि फिरोजा में रोग निरोधक गुण पाये जाते हैं। उन लोगों का विश्वास था कि फिरोजा धारण करने वाले व्यक्ति के स्वास्थ्य की परिस्थिति के अनुसार इस रत्न का रंग बदलता है तथा यह रत्न धारण करने वाले व्यक्ति को बुरे प्रभावों से बचाता है। ऐसी मान्यता रखने वालों में प्रमुख ये प्राचीन मेक्सिको के निवासी ऐजटेक लोग। इसी मान्यता के कारण ऐजटेक लोग आभूषणों के अलावा दैनिक उपयोग में आने-वाले औजारों (जैसे- चाकू इत्यादि) में भी फिरोजा जड़वा देते थे। ऐजटेकों के समान ही अमेरिका की कुछ अन्य जन जातियाँ भी फिरोजा को दुख तथा रोग दूर करने वाला मानती थीं। ऐसी जन जातियों में शामिल थीं पुएब्लो, नवाहो तथा अपाचे। ये जन जातियाँ फिरोजायुक्त ताबीज पहना करती थीं। ताबीज के अलावा ये लोग फिरोजा का उपयोग मोजायक तथा मूर्ति निर्माण आदि कार्यों के लिये भी करते थे। ये जन जातियाँ कई पीढ़ियों तक फिरोजा से बने आभूषणों तथा अन्य सामानों का व्यापार करती रहीं तथा उससे मालामाल होती रहीं। नवाहो तथा दक्षिणी

*राजेन्द्र नगर हाउसिंग कोलोनी, के.के. सिंह कोलोनी, पो.- जमगोड़िया, वाया- जोधाडीह, चास, जि.- बोकारो- 827 013.

पश्चिमी अमेरिका की अन्य जन जातियों द्वारा आजकल किया जा रहा चाँदी के आभूषणों का निर्माण एवं व्यापार वस्तुतः प्राचीनकाल के फिरोजा व्यापार का ही आधुनिक रूप है जिसकी शुरुआत सन् 1880 में यूरोपीय लोगों से प्रभाव के कारण हुई।

फारस में लगभग एक हजार वर्षों तक फिरोजा को राष्ट्रीय रत्न माना जाता था तथा इसका उपयोग भवनों तथा सामानों को सजाने हेतु किया जाता था। जिन सामानों को फिरोजा से सजाया जाता था उनमें शामिल थे पगड़ी, अचकन, हथियार इत्यादि। इसके अलावा महलों तथा मस्जिदों की भीतरी तथा बाहरी दीवारों को भी फिरोजा से सजाया जाता था। उदाहरणार्थ इसफहान की शाह हुसैन मस्जिद को फिरोजा से सजाया गया था। भारत में मुगल शासन की स्थापना के बाद पर्शियन शैली तथा फीरोजा के उपयोग की शुरुआत हो गयी। मुगल शासन के दौरान भारत में जितने प्रमुख भवनों एवं मस्जिदों का निर्माण हुआ उनमें से अधिकांश में फिरोजा का उपयोग किया गया। इन भवनों में लगाये गये पर्शियन फिरोजा की पट्टियों पर अरबी लिपि में धार्मिक शब्द अथवा नारे खोद दिये गये थे। फिर इन लिखावटों पर सोने की पन्नी चढ़ा दी जाती थी। तिब्बत तथा मंगोलिया में आयातित फिरोजा तथा मूंगे को सोने तथा चाँदी के आभूषणों में लगाया जाता था।

फिरोजा के आभूषण

मिस्र में फिरोजा का उपयोग प्रथम राजवंश (फर्स्ट डाइनेस्टी) के राजाओं के शासनकाल के पूर्व ही शुरुहो गया था। सर्वोत्तम किस्म के फिरोजा के नमूने मिस्र के बालक राजा तूतन खामन की कब्र से प्राप्त हुए हैं। मिस्र के प्राचीन सम्राटों (राजाओं) की मृत्यु के बाद उन्हें दफनाते समय कब्र में उत्तम किस्म के रत्नों को रखने का प्रचलन था। मिस्र में प्राचीनकाल के दौरान फिरोजा को अंगूँठी तथा नेकलेस में लगाने का प्रचलन बहुत अधिक था। इस प्रकार के नेकलेस को 'पेक्टोरल' कहा जाता था। लोगों की मान्यता थी कि पेक्टोरल धारण करने से छाती के रोगों से सुरक्षा प्राप्त होती है। मिस्र में लोगों द्वारा फिरोजा को इतना अधिक महत्व दिये जाने का करण था कि इसे देवी 'हैथौर' का रत्न माना जाता था। हैथौर मिस्र में प्रमुख देवी मानी जाती थीं।

फिरोजा वैसे रत्नों में शामिल था जिनका खनन मानव द्वारा प्रागैतिहासिक काल में ही शुरु कर दिया था। हालाँकि प्राचीनकाल में खोदी गयी अधिकांश खाने अब बन्द हो चुकी हैं, परन्तु कुछ अभी भी चालू हैं।

फिरोजा की अंगूठी

ये खानें छोटे स्तर की थीं जो साल में कुछ ही महीने चालू रहती थीं, क्योंकि उस समय तक आवागमन हेतु विकसित किस्म के मार्ग उपलब्ध नहीं थे। साथ ही बरसात में खानों में पानी भर जाता था जिसके कारण काम बन्द हो जाता था। वस्तुतः अधिकांश स्थानों पर फीरोजा ताम्र अयस्कों के खनन के दौरान एक उप-उत्पाद के रूप में प्राप्त होता था।

लगभग दो हजार वर्षों तक ईरान (जिसे पश्चिमी देशों में पर्शिया कहा जाता था) फीरोजा का प्रमुख उत्पादक रहा। ईरान वाले फीरोजा को 'पीरोजा' कहा करते थे जिसका अर्थ है 'विजय'। अरबों द्वारा आक्रमण के बाद पीरोजा को फीरोजा कहा जाने लगा। ईरान में निर्मित होने वाले भवनों के गुम्बदों को फीरोजा से सजाया जाता था। ईरानियों की मान्यता थी कि नीले रंगवाला फीरोजा पृथ्वी पर स्वर्ग का दृश्य प्रस्तुत करता है। ईरान में फीरोजा मुख्य रूप से खोरासन प्रांत की राजधानी मोशाद से कुछ दूर निशापुर नामक स्थान पर पाया जाता है। यहाँ फीरोजा ट्रैकाइट नामक ज्वालामुखीय शैल में मिलता है। ट्रैकाइट की यह परत लिमोनाइट तथा सैंडस्टोन की परतों के बीच स्थित है। यह खान संसार में फीरोजा की सर्वाधिक पुरानी खानों में से एक है।

मिस्र में लगभग तीन हजार वर्ष ईसा पूर्व प्रथम राजवंश (फर्स्ट डाइनेस्टी) के राजाओं द्वारा सिनाई प्रायद्वीप में फीरोजा का खनन कराया जाता था। सिनाई प्रायद्वीप को स्थानीय 'मोनीतु' लोग 'फीरोजा का देश' कहते थे। यहाँ फीरोजा की छः खानें हैं जो प्रायद्वीप के समुद्री किनारे पर लगभग 650 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली हुई हैं। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इनमें दो खानें महत्वपूर्ण हैं जिनके नाम हैं 'सेराबिट एल खादिम' तथा 'वादी माधारेह'। ये सर्वाधिक पुरानी खानें हैं। इनमें सेराबिट एल खादिम नामक खान 'हैथौर देवी' के प्राचीन मन्दिर के निकट स्थित है। ईरान से प्राप्त फीरोजा में जहाँ नीलापन अधिक है, वहीं सिनाई से प्राप्त फीरोजा में हरापन अधिक है। ईरान से प्राप्त फीरोजा जहाँ पूरी तरह अपारदर्शक है, वहीं सिनाई से प्राप्त फीरोजा कुछ हद तक पारभाषक (ट्रांसल्युसेंट) है। सिनाई से प्राप्त फीरोजा की लोग 'मिस्री फीरोजा (अजिप्शियन टर्क्वायज) के नाम से जानते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी पश्चिमी भाग (ऐरीजोना, कैलिफोर्निया, न्यू मेक्सिको तथा नेवदा) में कई स्थानों पर फीरोजा मिलता है। कैलिफोर्निया तथा न्यू मेक्सिको में प्राचीनकाल के दौरान स्थानीय जन जातीय अमेरिकनों द्वारा पत्थर से बने औजारों द्वारा फीरोजा के खनन के साक्ष्य मिले हैं। वर्तमान काल में ऐरीजोना क्षेत्र में फीरोजा का उत्खनन प्रचुर परिमाण में किया जा रहा है। ऐरीजोना में दो ऐसी प्रसिद्ध खानें हैं जहाँ रंग तथा गुणवत्ता के आधार पर संसार के उत्कृष्ट फीरोजा पाये जाते हैं। ये दो खानें हैं: 1- स्लीपिंग ब्यूटी माइन तथा 2- किंगमैन माइन। चीन में विगत तीन हजार वर्षों से फीरोजा उत्खनन किये जाने की साक्ष्य मिले हैं। मार्कोपोलो ने चीन के सिचुआन नामक स्थान पर फीरोजा पाये जाने की चर्चा की थी।

ISSN 2231 - 2455

लाजवर्त

लाजवर्त पत्थर के अपरिष्कृत टुकड़े

लाजवर्त या लाजवर्द एक सुन्दर, गहरे नीले रंग का अपारदर्शक पत्थर है जिसे संस्कृत में नृपोपल अथवा नीलाश्म, हिन्दी में लाजवर्द, अरबी एवं फारसी में लाजवर्द तथा अंग्रेजी में 'लैपिस लैजुली' कहा जाता है। अंग्रेजी का लैपिस लैजुली शब्द लैटिन भाषा से आया है। लैटिन में लैपिस शब्द का अर्थ है 'पत्थर'। जबकि लैजुली शब्द लैटिन भाषा के 'लैजुलम' शब्द से उत्पन्न हुआ है। लैटिन में लैजुलम या लैजुलस शब्द का अर्थ होता है 'आसमान के समान नीले रंग का'।

ज्योतिष की दृष्टिकोण से लाजवर्द को लहसुनिया (कैट्स आई) का उपरत्न माना जाता है। लहसुनिया नवरत्नों में शामिल है तथा इसे केतु का रत्न माना जाता है। यदि लहसुनिया उपलब्ध नहीं हो तो उसके स्थान पर उसके उपरत्न लाजवर्द को ही धारण करने का परामर्श दिया जाता है।

लाजवर्त का हार

पुरातात्विक साक्ष्यों से पता चलता है कि मानव द्वारा लाजवर्द का उपयोग प्रागैतिहासिक काल से ही किया जाता रहा है। प्राचीन काल में राजे महाराजे इस रत्न से फलदान, प्याले, चाकुओं की मूठें तथा गले का हार बनवाया करते थे। उस काल में इस रत्न के भस्म का उपयोग कई प्रकार के रोगों की चिकित्सा हेतु व्यापक स्तर पर किया जाता था। जिन रोगों में यह भस्म लाभदायक साबित होता था उनमें शामिल थे सूखा रोग, फिरंग रोग, प्रमेह, पांडु रोग तथा रक्त विकार इत्यादि।

लाजवर्त पत्थर से निर्मित विभिन्न कलाकृतियाँ

लाजवर्द वैसे चन्द रत्नों में शामिल है जिनका उपयोग मानव ने सबसे पहले शुरू किया। मेडिटेरेनियन क्षेत्र में प्राचीन सभ्यता संस्कृति के केन्द्रों पर किये गये पुरातात्विक उत्खननों से पुरातत्वविदों ने अनेक ऐसे कब्र पाये हैं जिन्हें लाजवर्द से सजाया गया था। इससे पता चलता कि आज से हजारों वर्ष पूर्व मेसोपोटामिया, मिस्र, पर्शिया, यूनान तथा रोम के निवासियों के बीच लाजवर्द बहुत ही लोकप्रिय रत्न था। कहा जाता है कि चार हजार वर्ष ईसा पूर्व यूफ्रेट्स नदी के तट पर स्थित प्राचीन नगर 'उर' में लाजवर्द का काफी व्यापार होता था। यह लाजवर्द अफगानिस्तान की खानों से आता था। कुछ अन्य प्राचीन सभ्यताओं में लाजवर्द को एक पवित्र रत्न माना जाता था। विशेष कर मध्य पूर्व में लोगों का विश्वास था कि इस रत्न में जादुई शक्ति छिपी हुई रहती है। इन देशों में इस रत्न से पवित्र गुबरैले (Scarabs), राज मुद्रायें तथा प्रतिमायें बनायी जाती थीं। सिकन्दर महान ने जब मिस्र पर चढ़ाई की तो उसे वहाँ इस प्रकार के असंख्य गुबरैले, राज मुद्रायें तथा प्रतिमायें मिली जिन्हें वह यूनान ले गया था। वहाँ नीले लाजवर्द के रंग को 'अल्ट्रा मेरीन' कहा जाता था जिसका अर्थ है 'समुद्र से पार'।

मध्य पूर्व के देशों तथा यूनान में लाजवर्द के आकर्षक नीले रंग का उपयोग रत्न के अलावा अन्य कई प्रकार से किया जाता था। इसका महीन चूर्ण बनाकर इसे माड़, द्रव गोंद अथवा किसी अन्य बाइंडिंग ऐजेंट में घोल कर दीवारों को रंगने के काम में लाया जाता था। इससे दीवारें काफी आकर्षक एवं चमकदार दिखायी पड़ती थी। प्राचीन काल में प्रमुख भवनों की दीवारों को आकर्षक तथा चमकदार बनाने के लिये लाजवर्द का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जाता था। प्राचीन काल के दौरान मैडोन्ना (जेसस क्राइस्ट की माँ मेरी) की असंख्य प्रतिमायें लाजवर्द से बने पेंट का उपयोग करके ही बनायी गयी थी। वस्तुतः लाजवर्द से बना पेंट सिर्फ महँगा ही नहीं था अपितु उस काल में ऐसी चमक पैदा करने वाला कोई भी अन्य रंग उपलब्ध नहीं था। लाजवर्द से बना पेंट सिर्फ महँगा एवं आकर्षक ही नहीं था, अपितु यह रंग चिरस्थायी भी होता था। जहाँ भवनों की दीवारों पर पोते गये अन्य पेंट मौसम के थपेड़ों को सहकर धुँधले तथा रौनकहीन

हो जाते थे, वहीं लाजवर्द पेंट से पोते गये दीवारों की चमक हजारों वर्षो के बाद भी वैसी ही दिखायी पड़ती है जैसी शुरू में दिखायी पड़ती थी। सन् 1834 में जब संश्लेषित नीले रंग की खोज हो गयी तब लाजवर्द जैसे महँगे पदार्थ का उपयोग दीवारों को रंगने हेतु बंद हो गया। आजकल लाजवर्द से बने पेंट का उपयोग ऐतिहासिक भवनों की दीवारों तथा अन्य प्राचीन स्मारकों के पुनर्निर्माण कार्य (रिस्टोरेशन वर्क) हेतु किया जाता है।

लाजवर्त की अँगूठी

खनिज विज्ञान के दृष्टिकोण से लाजवर्द 'लैजुराइट' नामक खनिज है जिसमें अत्यल्प परिमाण में कैल्साइट तथा पाइराइट के कण मौजूद रहते हैं। पाइराइट की उपस्थिति के कारण ही लाजवर्द में चमकीले पीले धब्बे दिखायी पड़ते हैं। मो के पैमाने पर लैजुराइट की कठोरता 5 से 5.5 के बीच पायी जाती है। इसकी रवा प्रणाली (क्रिस्टल सिस्टम) सममापीय (आइसो मेट्रिक) है। इसका विशिष्ट गुरुत्व 2.4 से 2.5 के बीच तथा वर्त्तनांक 1.5 है। यह एक अपार दर्शक खनिज है जिसकी चमक (लश्चर) काँचवत (विट्रियस) अथवा तैलीय (ग्रीजी) पायी जाती है। इसका विदलन (क्लिवेज) तीनों अक्ष के लम्बवत होता है। रासायनिक संघटन के दृष्टिकोण से लैजुराइट एक प्रकार का सिलिकेट है जिसका सूत्र है $(Na,Ca)_8Al_6Si_6O_{24}(S,SO_4)_4$।

लाजवर्द सबसे अधिक अफगानिस्तान के पूर्वोत्तर भाग में स्थित हिन्दू कुश पर्वत में पाया जाता है। परन्तु इस क्षेत्र में आवागमन का साधन अभी भी पुराना ही है। यहाँ सड़कों का निर्माण लगभग नगण्य है। नतीजा यह है कि पहाड़ों पर स्थित खदानों में विस्फोट (ब्लास्टिंग) कर नीले पत्थर (लाजवर्द) के टुकड़ों को खच्चरों पर लादकर नीचे घाटियों में लाया जाता है। यह काम प्रायः ग्रीष्म ऋतु में किया जाता है, क्योंकि उस समय रास्ते पर पानी के जमाव की समस्या नहीं रहती है।

लाजवर्द रूस में भी पाया जाता है। इस देश में लाजवर्द के भंडार बैकाल नामक झील के पश्चिम में स्थित हैं। परन्तु रूस में पाया जाने वाला लाजवर्द अफगानिस्तान में मिलने वाले लाजवर्द की तुलना में निम्न स्तर का है। दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप के एक प्रमुख देश चिली में भी लाजवर्द पाया जाता है। यहाँ लाजवर्द ऐंडीज पर्वत माला के कुछ भागों में मिलता है। यहाँ लाजवर्द की चट्टानों में कैल्साइट नामक खनिज की धारियाँ मौजूद पायी जाती हैं। अल्प परिमाण में लाजवर्द इटली, मंगोलिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, म्यामार (बर्मा) तथा पाकिस्तान में भी पाया जाता है। परन्तु इन देशों में पाया जाने वाला लाजवर्द अफगानिस्तान में मिलने वाले लाजवर्द की तुलना में काफी निम्न स्तर का होता है। यही कारण है कि बाजार में मिलने वाले लाजवर्द के नमूनों के मूल्य में काफी अन्तर पाया जाता है। जैसे अफगानिस्तान से प्राप्त होने वाला लाजवर्द काफी महँगा बिकता है जबकि कई अन्य देशों से प्राप्त होने वाले लाजवर्द सस्ते मिलते हैं। लाजवर्द का मूल्य उसकी सुन्दरता तथा उसके रंग की तीव्रता पर निर्भर करता है। तीव्र तथा गहरे नीले रंग वाले लाजवर्द सामान्यतौर पर आकर्षक तथा सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। जिस लाजवर्द में मौजूद पाइराइट के छोटे-छोटे कण सोने की तरह दमकते दिखायी देते हैं वे सबसे अधिक आकर्षक होते हैं तथा उनका मूल्य भी काफी अधिक होता है। परन्तु लाजवर्द के ऐसे नमूने बहुत ही कम पाये जाते हैं।

वैज्ञानिकों ने संश्लेषित (सिंथेटिक) लाजवर्द बनाने में भी सफलता प्राप्त कर ली है। हालाँकि संश्लेषित लाजवर्द देखने में प्राकृतिक लाजवर्द जैसा ही मालूम पड़ता है, परन्तु इसका रासायनिक संघटन भिन्न रहता है। साथ ही इसकी रवा संरचना भी भिन्न होती है। इसके अलावा जैस्पर (रंगीन तथा अपारदर्शक क्वार्ज) नामक खनिज को भी नीले रंग में रंग कर लाजवर्द का रूप दे दिया जाता है। ताम्बे का एक अयस्क है 'ऐजुराइट' जो देखने में लाजवर्द जैसा ही नीला दिखायी देता है। परन्तु इसकी कठोरता कम होती है। साथ ही इसका रंग लाजवर्द की तुलना में अधिक गहरा होता है। इसी प्रकार एक अन्य खनिज है 'सोडालाइट' जो देखने में लाजवर्द जैसा ही नीले रंग का होता हैं परन्तु इसके दाने लाजवर्द की तुलना में बड़े-बड़े होते हैं। अतः ग्राहकों को लाजवर्द खरीदने में बहुत ही सावधान रहने की जरूरत है।

अन्यथा ठगे जाने की संभावना काफी अधिक है। असली लाजवर्द की एक पहचान है। यदि इसका चूर्ण पानी में डालने पर अपना रंग नहीं बदले तरे समझना चाहिए कि लाजवर्द शुद्ध है। साथ ही यदि इसे ग्राइंडिंग ह्वील या पत्थर पर घिसा जाय तो एक विशिष्ट प्रकार की गंध निकलती पायी जाती है।

"मन को जीतना काम-क्रोध-मोह से बचना, और शुद्ध संकल्पयुक्त रहना, किसी विषय वृत्ति के कारण विक्षिप्त होकर फिर भी उस पर विजय प्राप्त करना, व्यवहार-काल में छल-कपट, धोखा, फरेब से मन को दूर रखना, मन को सात्विक बनाना है। यह मन द्वारा सात्विक तप करना है।"

-महामना पं. मदन मोहन मालवीय

पैकेजिंग में प्लास्टिक का विकल्प : जैविक कचरा

डॉ0 (श्रीमती) अंजलि बाजपेयी[1] एवं श्रीमती माया शर्मा[2]*

विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति हेतु खाद्य सामग्री के संग्रहण एवं परिवहन के दौरान उसकी गुणवत्ता एवं सुरक्षा के परिप्रेक्ष्य में पैकेजिंग की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। संश्लेषित बहुलक (प्लास्टिक) का आविष्कार पैकेजिंग के क्षेत्र में क्रान्तिकारी सिद्ध हुआ। साँचे में ढाले जाने की क्षमता, पारदर्शी गुण, नमी व सोखना, वायु का प्रवेश अवरुद्ध करना, आदि महत्वपूर्ण गुणों के कारण पैकेजिंग हेतु प्लास्टिक की लोकप्रियता अद्वितीय है। अत्यंत हल्की एवं पतली प्लास्टिक फिल्म की यांत्रिक सामर्थ्य (भार वहन क्षमता) काफी अधिक होने के कारण परंपरागत पैकेजिंग पदार्थों जैसे- कागज, गत्ता, काँच एवं टिन का स्थान प्लास्टिक ने ले लिया है। प्लास्टिक पदार्थों की विविधता एवं विभिन्न संगठनों के कारण पदार्थ विशिष्ट के अनुरूप पैकेजिंग डिजाइन की जा सकती है।

विश्व में वर्ष 2015 में प्लास्टिक का वार्षिक उत्पादन 3000 लाख टन से भी अधिक अनुमानित है, जिसका वैश्विक अर्थव्यवस्था में खरबों डालर का योगदान होगा। इस उत्पादन का उल्लेखनीय भाग पैकेजिंग में प्रयुक्त होता है (चित्र क्रं-1क)।

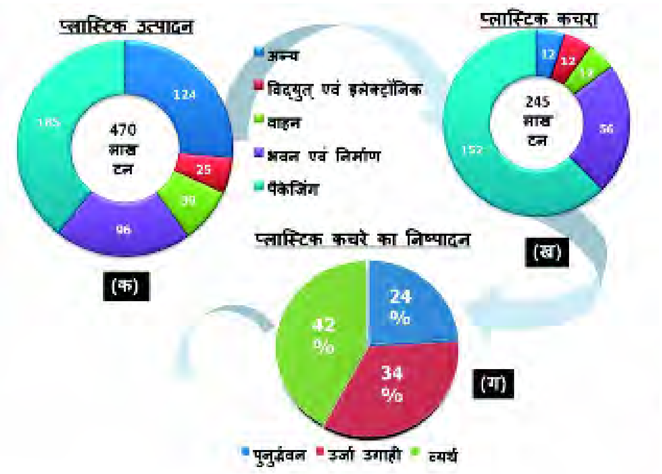

चित्र 1 : प्रतिवर्ष (क) प्लास्टिक का उत्पादन, (ख) कचरे में जाने वाले प्लास्टिक की मात्रा, (ग) रिसाइक्लिंग एवं ऊर्जा रिकवरी के बाद बची हुई व्यर्थ मात्रा

पैकेजिंग में प्लास्टिक का उपयोग लगभग सभी प्रकार की उपभोक्ता वस्तुओं में किया जाता है। पैकेजिंग में उपयोग किये जाने वाले प्लास्टिक की मात्रा का लगभग आधा भाग फिल्मों, चादरों, बोतलों, कपों, डिब्बों

सार्वजनिक कचरा

एवं ट्रे के रूप में खाद्य सामग्री रखने में प्रयुक्त होता है। एक ओर जहाँ प्लास्टिक का अजैव अपघटनीय गुण लंबे समय तक खाद्य सामग्री संग्रहण हेतु उपयोगी है, वहीं दूसरी ओर यही गुण पर्यावरण के लिये अत्यन्त हानिकारक है। उपयोग के उपरान्त फेंक दिये जाने वाले मानव द्वारा संश्लेषित प्लास्टिक पदार्थों के निपटान के लिये प्रकृति में कोई क्रियाविधि नहीं है।

विचारणीय तथ्य यह है, कि क्या पैकेजिंग, खानपान (Catering), शल्य चिकित्सा (Surgery), स्वच्छता (Hygiene) जैसे अल्पकालीन उपयोगों के लिए प्लास्टिक पदार्थों का उपयोग युक्तिसंगत है? सोचनीय है, कि क्या अल्पकालिक सुविधा हेतु चिरजीवी पदार्थों को उपयोग कर कचरे के रूप में पर्यावरण में झोंक दिया जाये। प्रतिदिन के कचरे में भोज्य पदार्थों की पैकेजिंग एवं चिकित्सकीय अपशिष्ट का बहुत बड़ा हिस्सा होता है, जिसमें विविध प्रकार के प्लास्टिक उपस्थित होते हैं। (चित्र-1ख) निपटान के समुचित उपायों एवं संसाधनों के अभाव में यह पर्यावरण को सैकड़ों-हजारों वर्षों तक प्रदूषित करता रहेगा। (चित्र -1ग)

चित्र 2 : प्लास्टिक प्रदूषण

*[1]प्राध्यापिका, [2]शोध छात्रा, रसायनशास्त्र, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.).

तात्कालिक सुविधा के लोभ एवं दूरगामी परिणामों को अनदेखा करने की प्रवृति के कारण प्लास्टिक पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। घर से थैला लेकर बाजार जाने की आदत लुप्तप्राय हो चली है। आकर्षक पैकिंग के द्वारा ग्राहकों को लुभाने की व्यापारिक वृति के कारण प्लास्टिक का पैकेजिंग में अंधाधुंध उपयोग किया जा रहा है, परिणामस्वरूप कचरे में प्लास्टिक की मात्रा बढ़ती जा रही है। (चित्र -1ख)

प्लास्टिक को कचरे में पड़ी खाद्य सामग्री के साथ गाय आदि पशु निगल लेते हैं, जो उनके लिए पीड़ादायी सिद्ध होता है। नालियों के माध्यम से प्लास्टिक पदार्थ नदी, तालाब, समुद्र में पहुँचने पर यह जलीय जीवों द्वारा निगल लिया जाता है, जो उनके लिए हानिकारक होता है। मछलियों पर भोजन के लिए निर्भर पक्षियों को भी दुष्प्रभावित करता है। (चित्र -2)

संश्लेषित प्लास्टिकों का विकल्प खोजने की आवश्यकता

अजैव अपघटनीय प्रकृति के साथ ही दूसरी समस्या यह भी है, कि प्लास्टिक उत्पादन में पेट्रोलियम पदार्थों का उपयोग किया जाता है, जिनके सीमित भण्डार निरन्तर घटते जा रहे हैं, फलतः मूल्य बढ़ रहे हैं। अर्थशास्त्रियों एवं पर्यावरणविदों के लिये यह चिन्तनीय विषय है। धारणीय विकास हेतु प्लास्टिक के विकल्प की खोज में वैज्ञानिक तत्परता से संलग्न हैं। प्लास्टिक के समुपयुक्त विस्थापन के लिए निरन्तर नवीकरणीय जैव पदार्थों (renewable bio resources) से नवीन पदार्थों का विकास करना वैज्ञानिकों की प्राथमिकता में शामिल है।

प्रकृति से प्रेरणा लेकर वैज्ञानिक जैव अपघट्य पदार्थों एवं सरल प्रविधियों के अनुसंधान में संलग्न हैं। प्रकृति में सरलतम पदार्थों से जटिल एवं विविध संरचनाएँ बनाने की अद्भुत क्षमता है। कार्बन डाईआक्साइड एवं जल से सूर्य प्रकाश की उपस्थिति में ग्लूकोज बनता है, इसी ग्लूकोज के अनेक (हजारों) अणु जुड़कर सेल्युलोज एवं स्टार्च बनाते हैं। ग्लूकोज अणुओं के परस्पर जुड़ने के तरीके की भिन्नता से इन दोनों प्राकृतिक पदार्थों के गुण-धर्म चमत्कारिक रूप से भिन्न होते हैं।

सेल्यूलोज

सेल्यूलोज पृथ्वी पर सर्वाधिक प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला कार्बनिक पदार्थ है। जैविक क्रियाओं के द्वारा प्रतिवर्ष विश्व स्तर पर इसका उत्पादन लगभग 10^{10} से 10^{11} टन आंका जाता है। इसमें से इसका लगभग 6×10^{9} टन विभिन्न उद्योगों जैसे - कागज, कपड़ा फर्नीचर, इमारती उपयोग, रासायनिक एवं अन्य पदार्थों के प्रसंस्करण के लिए प्रयुक्त होता है।

सेल्यूलोज से अभिनव पदार्थ बनाने का इतिहास बहुत पुराना है। सन् 1870 में हयात मैन्यूफेक्चरिंग कम्पनी ने सेल्यूलोज पर नाइट्रिक अम्ल की क्रिया से सेल्यूलोज नाइट्राइट बनाया जो सेल्यूलाइड के रूप में फिल्म उद्योग में व्यापक रूप से प्रयोग में लाया गया। यह मानव निर्मित सबसे पहला थर्मेप्लास्टिक था। इस प्रयास से प्रेरित होकर औद्योगिक स्तर पर विविध प्रकार के पदार्थ बनाये गये, जो काष्ठ द्वारा प्राप्त सेल्यूलोज के रासायनिक परिवर्तन से बनाये गये। विस्कोस रेयान या कृत्रिम रेशम पुनरुद्भवित सेल्यूलोज (regenerated cellulose) से वृहद स्तर पर बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त सेल्यूलोज ईथरों एवं एस्टरों का व्यावसायिक उपयोग सतह-लेपन (Coating), फिल्म, झिल्लियों, इमारती पदार्थों, दवाइयों, भोज्य पदार्थों में किया जाता है।

इट बनाया जो सेल्यूलाइड के रूप में फिल्म उद्योग में व्यापक रूप से प्रयोग में लाया गया। यह मानव निर्मित सबसे पहला थर्मेप्लास्टिक था। इस प्रयास से प्रेरित होकर औद्योगिक स्तर पर विविध प्रकार के पदार्थ बनाये गये, जो काष्ठ द्वारा प्राप्त सेल्यूलोज के रासायनिक परिवर्तन से बनाये गये। विस्कोस रेयान या कृत्रिम रेशम पुनरुद्भवित सेल्यूलोज (regenerated cellulose) से वृहद स्तर पर बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त सेल्यूलोज ईथरों एवं एस्टरों का व्यावसायिक उपयोग सतह-लेपन (Coating), फिल्म, झिल्लियों, इमारती पदार्थों, दवाइयों, भोज्य पदार्थों में किया जाता है।

सेल्यूलोज के स्रोत

प्राकृतिक रेशों के रूप में सेल्यूलोज के अनेक उपयोग हैं। इनके प्रमुख स्रोत एवं वार्षिक उत्पादन सारणी 1 में प्रदर्शित हैं।

सारणी 1. सेल्यूलोज के व्यावसायिक स्रोत

रेशे का स्रोत	विश्व में उत्पादन (हजार टन में)
जूट	2300
फ्लेक्स	830
हेम्प	214
रेमी (चीनी घास)	100
गन्ने के खोई	75000
बाँस	30000
केनाफ	970
सिसल	378
नारियल की जटा	100
एबेका (केले की प्रजाति का पौधा)	70
घास	700

इनके अतिरिक्त कृषि उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट जैसे- भूसा, चावल एवं दालों के छिलके, फलों की गुठलियाँ एवं छिलके, मौसमी फसलों के अवशेष आदि सेल्यूलोज के स्रोत है। इनका कुछ अंश पशुओं के चारे के रूप में इस्तेमाल होता है, कुछ जला दिया जाता है एवं शेष सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस कूड़े के सही इस्तेमाल की उपयुक्त विधि विकसित की जाये, तो कृषकों को आय का अतिरिक्त स्रोत मिलेगा एवं पर्यावरण के लिए अहानिकारक पदार्थों का निर्माण किया जा सकेगा।

जैव अपघटनीय पदार्थों का पैकेजिंग में प्रयोग

पत्तों से बने हुए पत्तलें, दोने इत्यादि व्यापक रूप से प्रयोग में लाये जाते रहे हैं।सीमित समयावधि वाले अनुप्रयोगों यथा-डिस्पोजेबल कटलरी, डिस्पोजेबल प्लेट, कप एवं बर्तनों, डायपर, कचरे के थैले, पेय पदार्थों के पात्र, फास्ट फूड के पात्र, कृषि पलवार (Mulching), फिल्म, चिकित्सकीय उपकरणों (सीरिंगज, ट्यूब, दस्ताने आदि) के लिए

पुनर्नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त जैव-अपघट्य जैव-बहुलक (Biopolymer) अधिक उपयोगी होंगे।

आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप पैकेजिंग में प्लास्टिक के विस्थापन के लिये कृषि अपशिष्टों से प्राप्त जैव बहुलकों के परिमार्जन के उपरान्त उनका बृहद एवं व्यावसायिक प्रयोग संभव है। जैव आधारित पदार्थों से विकसित पदार्थों के लिए बायोप्लास्टिक शब्द प्रयोग में लाया जाता है। बायोप्लास्टिक की स्वीकार्यता के लिए यह निर्धारित करना आवश्यक है, कि उनका अपघटन किन परिस्थितियों में हो। उनकी यांत्रिक सामर्थ्य एवं खाद्य सामग्री के लिए हानिकारक सूक्ष्म जीवों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता कैसी हो। उनमें विविध प्रकार के पदार्थ, जैसे- एन्टीऑक्सीडेन्ट, एन्टीफंगल (फफूंदरोधी) तथा एन्टीमाइक्रोबियल एजेन्ट, रंजक एवं अन्य पोषक पदार्थ भी अधिशोषित किये जा सकें, जो भोज्य पदार्थों की जीवनावधि बढ़ाने में सहायक हों। सामान्यतः जैव बहुलकों की सबसे बड़ी कमी उनकी आर्द्रता शोषी गुण है। यांत्रिक सामर्थ्य (मजबूती) एवं ढाले जा सकने की क्षमता भी कम होती है। इन सब कमियों को दूर करने के प्रयास में वैज्ञानिक बायोनैनोकम्पोजिटों के विकास में पूरे जोश से संलग्न हैं।

बायोनैनोकम्पोजिट

बायोनैनोकम्पोजिट ऐसे मिश्रित पदार्थ हैं, जिनमें बायोपालीमर मैट्रिक्स को नैनोपार्टिकल्स या नैनोकणों से प्रबलित (reinforce) किया जाता है। नैनोपार्टिकल्स ऐसे कण होते हैं, जिनका कम से कम एक आयाम में आकार नैनोमीटर (1-100 nm) परास में हो। एक नैनोमीटर मिलीमीटर का 10 लाखवाँ हिस्सा होता है।

बायोनैनोकम्पोजिट में उपयोग किये जाने वाले बायोपॉलीमर मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं।

(क) प्राकृतिक बायोपॉलीमर-

(अ) ***पौधों द्वारा प्राप्त कार्बोहाइड्रेट*** - सेल्यूलोज, स्टार्च, काइटिन, एल्जिन, अगर, कराजीनन आदि।

(ब) ***पौधों या प्राणियों से प्राप्त प्रोटीन*** - सोया प्रोटीन, मक्के से जीन, गेहूँ से ग्लूटेन, जिलेटिन, कोलेजन, छाछ का प्रोटीन, केसीन आदि।

(ख) संश्लेषित जैव अपघट्य पॉलीमर - पॉलीलेक्टिक अम्ल, पॉलीग्लाइकालिक अम्ल, पॉलीकेप्रोलेक्टोन, पॉली ब्यूटिलीन सक्सीनेट, पॉलीविनाइल एल्कोहल, आदि।

(ग) सूक्ष्म जीवों से किण्वन द्वारा संश्लेषित पॉलीमर -

पॉलीएस्टर, जैसे- पॉलीहाइड्रॉक्सी एल्केनोएट पॉलीसैकेराइड, जैसे- पुलुलन, कर्डलन।

बॉयोपॉलीमर की यांत्रिक सामर्थ्य कम होने के कारण उनमें कुछ अकार्बनिक पूरक मिलाये जाते हैं। मृदा में पाये जाने वाले परतदार सिलिकेट इस कार्य के लिए अत्यंत उपयुक्त होते हैं। बायोपालीमर के भार का 5 प्रतिशत मृदा मिलाने पर भी यांत्रिक सामर्थ्य (मजबूती) कई गुना बढ़ जाती है एवं कार्बन डाईआक्साइड, आक्सीजन एवं नमी के लिए अवरोधक गुण उत्पन्न हो जाता है।

इस लेख में बायोनैनोकम्पोजिटों में उपयोग किये जाने वाले सभी पदार्थों का विवरण देना संभव नहीं हैं, अतः केवल सेल्यूलोज से संबंधित अनुसंधान का संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है।

नैनोसेल्यूलोज या सेल्यूलोज नैनोपार्टिकल (CN)

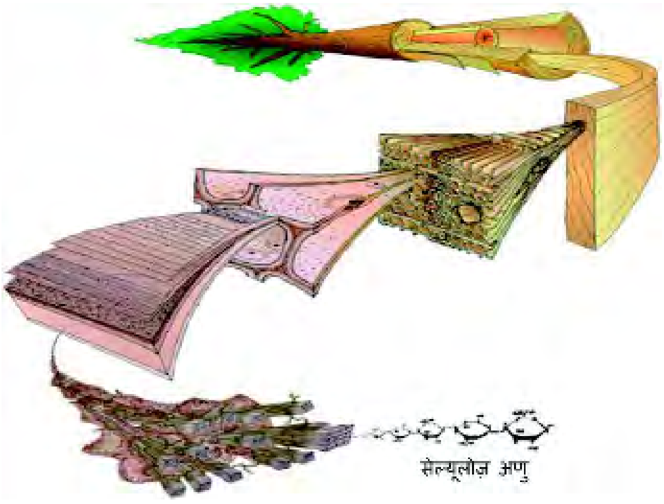

चित्र 3 : सेल्यूलोज के अणुओं का जुड़कर बृहद संरचनाएँ बनाने का रेखाचित्र

बॉयोपॉलीमर कम्पोजिट उद्योगों के लिए सेल्यूलोज नैनोपार्टिकल अत्यन्त आदर्श पदार्थ हैं। प्रकृति से सेल्यूलोज के बृहदाणु आपस में हाइड्रोजन आबंधों से जुड़कर बहुत प्रबल संरचना बनाते हैं। पौधों की कोशिकाभित्ति सेल्यूलोज की ही बनी होती है। अनेक कोशिकाओं से ऊत्तक बनते हैं, जो पौधे के विभिन्न हिस्सों जड़, तना, डालियाँ, पत्ती आदि का निर्माण करते हैं। चित्र-3 एवं 4 में इसे दर्शाया गया है। चित्र-5 सेल्यूलोज की सूक्ष्म संरचना को प्रदर्शित किया गया है, जिसमें कुछ भाग क्रिस्टलीय एवं कुछ अक्रिस्टलीय होते है।

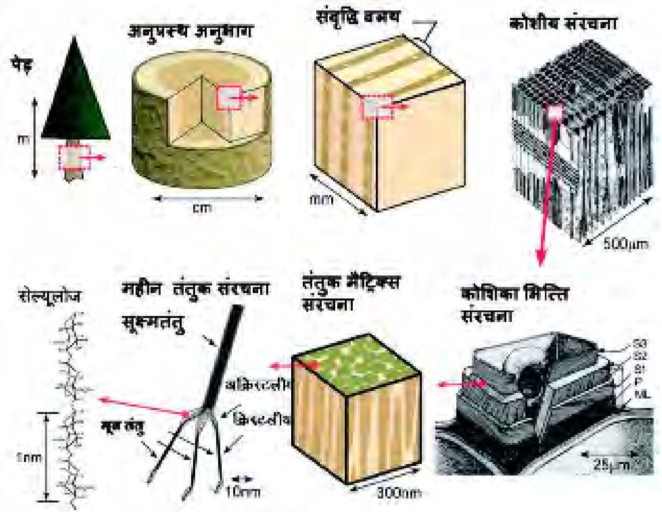

चित्र 4 : सेल्यूलोज अणुओं के जुड़ने से बनी सूक्ष्म संरचनाओं का रेखा चित्र

क्रिस्टलीय सेल्यूलोज का प्रत्यास्थता गुणांक (खींचे जा सकने की क्षमता) स्टील से भी अधिक तथा केवलार (एक अत्यन्त मजबूत संश्लेषित

तंतु, जिसका उपयोग बुलेट प्रूफ जैकेटों में किया जाता है) के समान होती है। यांत्रिक सामर्थ्य अन्य प्रबलीकारक पूरकों-काँच तंतु (glass fibre), धातु तंतु (metal fibre) के सामान्तर होती है।

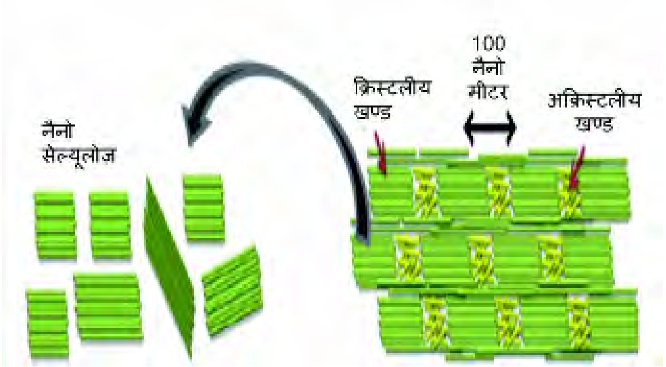

चित्र 5 : नैनोसेल्यूलोज

बायोनैनोकम्पोजिट के विशिष्ट गुणों का आधार मैट्रिक्स में पूरक पदार्थ के सूक्ष्मतम कणों का समांगी मिश्रण होता है। सेल्यूलोज के गुणों की उपयोगिता तभी सिद्ध होगी, जब उसे नैनों कणों के रूप में प्राप्त किया जाये। नैनोसेल्यूलोज पर आधारित पदार्थों के विकास में सबसे बड़ी बाधा उसके निर्माण की उच्च लागत है। प्राकृतिक स्रोतों में सेल्यूलोज के अणु परस्पर प्रबलता से जुड़े रहते हैं, उन्हें पृथक करना आसान नहीं है, अतः वैज्ञानिक कम लागत वाली एवं सहज प्रविधि खोजने में व्यस्त हैं, जो औद्योगिक स्तर पर प्रयोग में लाई जा सके।

नैनोसेल्यूलोज के उत्पादन की विधियाँ

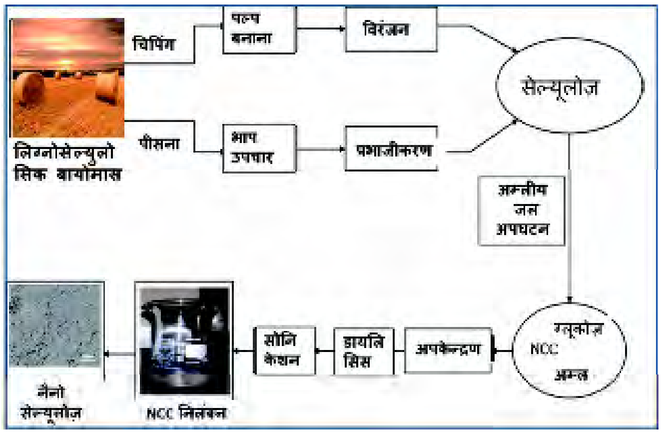

चित्र 6 : लिग्नोसेल्यूलोजिक बायोमास से नैनोसेल्यूलोज (NCC) बनाने के प्रमुख पद

नैनोसेल्यूलोज या सैल्यूलोज नैनोकणों की दो श्रेणियाँ हैं- नैनोक्रिस्टलाइन सेल्यूलोज (NCC) या सेल्यूलोज व्हिस्कर्स एवं माइक्रोफाइब्रिलेटेड सेल्यूलोज (MFC)। लकड़ी या पौधों के काष्ठ भाग को उच्च दबाव पर होमोजेनाइजेशन (पीसने) से प्राप्त श्इण होता है, जो जेल के सदृश गुण धर्म प्रदर्शित करता है। सेल्यूलोज के अक्रिस्टलीय भाग को अम्लीय जल अपघटन द्वारा अलग कर देने पर नैनो सेल्यूलोज (NCC) प्राप्त होता है। इसके बनाने की विधि रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित की गई है। इनके अतिरिक्त एक तीसरे प्रकार का नैनोसेल्यूलोज सिरके के बैक्टीरिया ग्लूकोनोएसीटो बैक्टर के उपयोग से निम्न अणुभार वाले यौगिकों, जैसे-शक्कर से बनाया जा सकता है। (चित्र-6)

कष्ठ एवं कृषि/वानिकी अवशेषों पर एन्जाइमों की क्रिया से नैनोसेल्यूलोज बनाने में भी अनेक वैज्ञानिक सक्रिय हैं। अभी तक बनाये गये नैनोसेल्यूलोज कम्पोजिट पारदर्शक होने के साथ ही साथ ढलवाँ लोहे से अधिक तनन शक्ति एवं निम्न तापीय प्रसारयुक्त पाये गये हैं, अर्थात् तापक्रम बढ़ने या घटने पर आकार में अंतर नहीं आता। इनके कुछ अनुप्रयोग अवरोधक फिल्म, लचीले प्रदर्शन पटल (जैसे लपेटकर रखे जा सकने वाले टी.वी., मोबाइल फोन आदि में) प्लास्टिक में प्रबलीकारक पूरकों (reinforcing fillers) जैव चिकित्सकीय प्रत्यारोपण (biomedical implants) जैसे एंजियोप्लास्टी हेतु बैलून), ड्रग डिलेवरी, इलेक्ट्रानिक घटकों के टेम्पलेट, छन्नक झिल्लियाँ, बैटरी, सुपर कैपेसिटर, विद्युत सक्रिय पॉलीमर इत्यादि में संभावित हैं।

हिन्दी में कहावत है, "घूरे के भी दिन फिरते हैं"। यदि नैनोसेल्यूलोज पर आधारित बायोप्लास्टिक बनाने की मितव्ययी एवं सहज विधि विकसित कर ली जाये, तो यह कहावत चरितार्थ हो सकेगी। कृषि उद्योगों के घूरे की कीमत बढ़ जायेगी, क्योंकि उससे उपयोगी सामग्री बन सकेंगी। उपयोग के उपरान्त इस सामग्री के घूरे में जाने पर प्रदूषण की समस्या नहीं रहेगी, जो अभी घूरे में अजैव अपघट्य प्लास्टिक के अंबार से हो रही है।

शिमला मिर्च से नहीं होगी शुगर

डायबिटीज और मोटापे से बचने के लिए शिमला मिर्च खाना लाभप्रद बताया गया है। पिछले दिनों हुए एक शोध में पता चला है कि कच्ची शिमला मिर्च सलाद में डालकर खाने से इस बीमारी की आशंका काफी कम हो जाती है। भारतीय रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान में यह अध्ययन किया गया है। अनुसंधान में यह जानने का प्रयास किया गया है कि यह खाद्य पदार्थ पाचन तंत्र को कैसे प्रभावित करता है तथा इससे ग्लूकोज और वसा का पाचन किस तरह प्रभावित होता है। अनुसंधान में पाया गया है कि शिमला मिर्च ग्लूकोज और वसा की पाचन प्रक्रिया को मंद और बेहतर बना देते हैं।

फसल ऋतुजैविकी की भविष्यवाणी एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

पारोमिता घोष एवं मनमोहन सिंह कनवाल*

जलवायु परिवर्तन एक सतत् प्रक्रिया है जिसका हिमालयी क्षेत्र पर भी अत्याधिक प्रभाव पड़ा है। जलवायु परिवर्तन का पर्वतीय खेती पर भी भविष्य में प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा अतः इससे बचने के लिए हमें अग्रिम रूप से तैयार होना होगा और इसके अनुकूलन तथा शमन के लिए पूर्व चेतावनी प्रणालियों एवं अन्य तरीके विकसित करने होंगे। इस लेख में ऋतुजैविकी, इसके अध्ययन के कारणों तथा हाल के समय में अनुकरण प्रतिमानों का ऋतुजैविकी को सही ढंग से जानने में प्रयोग के बारे में वर्णन है जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का उचित आंकलन करने में अवश्य सहायक होगा।

चित्र 1 : तीव्र तथा भारी वर्षा से फसल उत्पादन पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के विचारों और अनुमानों (आईपीसीसी, 2007) के अनुसार ग्रीन हाउस गैसों की वैश्विक वायुमंडलीय सांद्रता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। उष्ण तथा बहुधा अधिक गर्म दिन और गर्म हवाओं की आवृत्ति में बढ़ोत्तरी से इसका पता चलता है। विगत कुछ वर्षों से भारी बारिश तथा बाढ़ में बढ़ोत्तरी की घटनाएँ दर्ज की गई है (चित्र 1)। बढ़ते सूखे (चित्र 2), तीव्र उष्णकटिबन्धीय चक्रवाती गतिविधियों तथा समुद्र स्तर में वृद्धि से विशाल भू-क्षेत्र प्रभावित हुए है।

कृषि के जैव-भौतिकी पक्ष पर जलवायु परिवर्तन का व्यापक प्रभाव पड़ा हैं। फसलों, चरागाहों, जंगलों तथा पशुधन पर इसके परिणात्मक तथा गुणात्मक प्रभाव पड़े हैं। भूमि, मृदा तथा पानी के स्रोतों की मात्रा तथा उनके गुणों में भी भारी बदलाव दर्ज किए गये हैं। भूमि क्षरण एवं बंजरता के फलस्वरूप मृदा लवणता में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है। बढ़ते खरपतवार व कीटों ने भी चुनौतियाँ पेश की हैं। उपरोक्त सभी कारकों के

चित्र 2 : अत्यधिक गर्मी तथा सूखे का फसल उत्पादन पर प्रभाव

फलस्वरूप फसल पैदावार में स्पष्ट कमी आयी है। जलचक्र में बदलाव एवं वृष्टिपात में भी भिन्नता दर्ज की गयी है। वृद्धि काल में बदलाव के कारण फसल उत्पादन व आजीविका विकल्प सीमित हुए हैं।

ऋतुजैविकी, समय-समय पर होने वाली जैविक घटनाओं का अध्ययन है, जो पारंपरिक रूप से एक वृद्धि काल में एक बार होती है। यह वृद्धि एवं विकास की प्रक्रिया, वृद्धि एवं विकास को नियंत्रित करने वाली पादप प्रक्रियाओं की दर और पर्यावरण को मापने का एक तरीका है। यह पादप विकास की गतिशीलता का अध्ययन है जो आंतरिक पादप क्रियाओं के बजाय अंतर्निहित प्रक्रियाओं की घटनाओं जैसे विकास विभेदीकरण तथा अंगों के प्रस्फुटन पर ध्यान देता है। मुख्य पादप ऋतुजैविकी प्रक्रियाओं में बसंतीकरण, पत्ती, जड़, शाखा विकास पुष्पन तथा बीजों का विकास शामिल है।

फसल विकास प्रतिरूप की स्पष्ट भविष्यवाणी खेती प्रबंधकों के लिए फसल उत्पादन में सहायक होगी जिससे फसल के महत्वपूर्ण विकास चरण अनुकूल मौसम की अवधि के दौरान होंगे। निम्नलिखित प्रकार से हम विकास के चरणों की सही ढंग से भविष्यवाणी करने में सक्षम होंगे :

1. कीटनाशकों का प्रयोग फसल अथवा कीटों के कुछ ही विकास अवस्थाओं में करना चाहिए।
2. पुष्पन के समय होने वाले कुप्रभाव का अनाज की पैदावार पर बड़ा असर पड़ेगा जबकि वनस्पतिक विकास के समय होने वाले तनाव का विपरीत प्रभाव कम होगा।
3. वैश्विक जलवायु में CO_2 तथा अन्य ग्रीनहाउस गैसों की बढ़ती सान्द्रता के कारण होने वाले परिवर्तन से बचने के लिए

*गो0ब0 पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड).

ऋतुजैविक प्रतिक्रियाओं में भी बदलाव की आवश्यकता है। स्थानीय जलवायु के सर्वोत्तम उपभोग हेतु फसलों की नई किस्मों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

मध्य हिमालय क्षेत्र में खेती का बड़ा हिस्सा वर्षा आधारित खेती का है। अतः फसल को वृद्धि के समय सूखे, गर्मी या ठंड से होकर गुजरना पड़ता है। अधिक पैदावार के लिए यह आवश्यक है कि फसल किस्मों व रोपण तारीखों का सही चयन किया जाये जिसमें आर्थिक पैदावार कम प्रभावित हो। प्रत्येक चरण के दौरान होने वाले विकास के पारस्परिक संबंधों को भी समझना चाहिए।

एक फसल वृद्धि अनुकरण प्रतिमान फसल विकास की प्रक्रिया (ऋतुजैविकी) में लगने वाले समय की भविष्यवाणी को बताता है। खेती के समय पादप क्रियाओं की प्रतिक्रियाओं की भविष्यवाणी के लिए विकास चरणों के समय की सटीक भविष्यवाणी की खास आवश्यकता है। प्रत्येक विकास चरण की परिस्थिति बाद के चरणों के दौरान बनने वाली परिस्थिति पर फसल की प्रतिक्रिया की क्षमता को प्रभावित करती है। फसल काल के दौरान तापमान, नमी, दिन की लम्बाई, प्रकाश तथा अन्य पर्यावरणीय कारकों में बदलाव होता रहता है। फिर भी प्रतिमान सटीक अनुमान लगा सके कि कब वृद्धि क्रिया शुरू हो तथा कब खत्म। यह इतना सरल होना चाहिए कि इसकी जानकारी/प्रौद्योगिकी किसी भी उपभोक्ता को दी जा सके और वह इस जानकारी को व्यावहारिक समस्याओं को सुलझाने और निर्णय लेने में इस्तेमाल कर सके। शोध प्रतिमान मुख्य रूप से पादप वृद्धि की क्रियाओं तथा पर्यावरण के बीच संभावित संबंधों के अन्वेषण के लिए प्रयुक्त किये जाते है। आवेदन प्रतिमान मुख्य रूप से भविष्य या काल्पनिक घटनाओं की भविष्यवाणी के लिए अभिप्रेरित होते हैं, जैसे फसल काल के अंत में पैदावार अथवा वर्तमान या हाल की घटनाओं के रूप में, जो सीधे मापने में कठिन होते हैं, जैसे की मिट्टी की नमी में कमी। आवेदन प्रतिमानों का सफल विकास पादप वृद्धि क्रिया तथा पर्यावरण की क्रियाओं के आपसी संबंधों की समझ पर निर्भर है, जो शोध प्रतिमानों के साथ उत्पन्न अनुभव से प्राप्त की जा सकती है।

इस प्रकार कृषि प्रतिमान फसल प्रणालियों के कई घटकों जैसे विशेष फसल, कीट, मोथ, रोग तथा मृदा प्रक्रियाओं के लिए विकसित किये गये हैं। ये प्रतिमान मात्रात्मक सिद्धांतों पर आधारित हैं कि कैसे भौतिक एवं जैविक क्रियायें अपने पर्यावरण और एक-दूसरे से कैसे प्रतिक्रिया करते हैं। इन घटक प्रतिमानों में से कुछ जटिल फसल प्रणाली के बड़े प्रतिमानों से संयोजित किये गये हैं और वे व्यापक रूप से उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव की भविष्यवाणी के लिए उपयोग किए जाते हैं। कुछ प्रचलित फसल प्रतिमान जो जलवायु परिवर्तन का फसलों की उत्पादकता पर प्रभाव मापने हेतु प्रयुक्त किये जाते हैं वे इस प्रकार है :

इन्फो क्राप

यह एक सामान्य फसल प्रतिमान है जो कृत्रिम रूप से मौसम, मृदा, मुख्य कीटों के प्रकोपो, फसल उत्पादन, मृदा कार्बन, नाइट्रोजन, जल तथा ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन की भविष्य में स्थिति बताता हैं। यह फसल वृद्धि एवं विकास मृदा जल नाइट्रोजन एवं कार्बन तथा फसल व कीटों का पारस्परिक प्रभाव का आकलन करता है। इन्फो क्रॉप अनुकरण प्रतिमान का प्रवाह आरेख चित्र 3 में प्रदर्शित है।

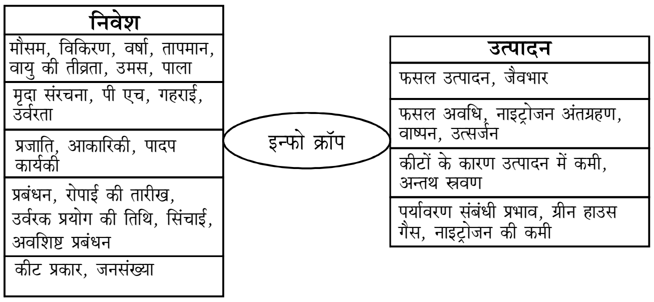

चित्र 3 : इन्फो क्रॉप अनुकरण प्रतिमान का प्रवाह आरेख चित्र

एपसीम

यह प्रतिमान कृषि प्रणालियों की जैव भौतिकी क्रियाओं के आकलन हेतु विकसित किया गया है यह जलवायु परिवर्तन के आर्थिक एवं पारिस्थितिकी खतरों का आकलन करने में सक्षम है। यह जलवायु, मृदा, जीनोटाइप तथा प्रबंधन के अनुसार सही भविष्यवाणी कर सकता है।

क्राप सिस्ट

यह बहुफसल प्रतिमान प्रयोगकर्ता के आसान प्रयोग के लिए बनाया गया है जो जी आई एस साफ्टवेयर तथा मौसम जनक से जुड़ा रहता है। इसका मुख्य लक्ष्य फसल प्रणाली को प्रबंधन द्वारा फसल उत्पादन तथा वातावरण पर प्रभावों का अध्ययन करना है।

डीससैट

यह प्रतिमान मृदा के प्रभावों, फसल रचना, मौसम तथा प्रबंधन इकाईयों को जोड़ता है तथा प्रयोगकर्ता को कई संभावनाओं ''यदि ऐसा'' प्रकार के प्रश्नों के उत्तर प्रदान करता है। यह किसी क्षेत्र में बोई गयी फसल की वृद्धि, विकास एवं उपज का सामान्य रूप में अथवा मिट्टी, पानी, कार्बन या नाइट्रोजन की मात्रा में बदलाव करने पर भी फसल प्रणालियों में होने वाले प्रभावों का आंकलन कर सकता है।

इस प्रकार फसल वृद्धि अनुकरण प्रतिमान भविष्य की फसल तथा मृदा की उत्पादकता का अनुमान लगाने में साहयक है। जीसीएम (सामान्य प्रसार प्रतिमान) के साथ मिलकर ये प्रतिमान भविष्य की कृषि प्रणालियों का अनुमान लगा सकते है जो परिवर्तित जलवायु के अनुकूल होंगी। ये अनुकरण प्रतिमान ''यदि ऐसा'' प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देने में सक्षम हैं जैसे अगर जलवायु परिवर्तित होगी, यदि फसल की अलग किस्में प्रयोग की जाए इत्यादि।

फसल प्रतिमानों द्वारा अनुरूपित होने वाली मुख्य जलवायु संवेदनशील प्रक्रियाएँ इस प्रकार हैं :-

1. फसल विकास - विभिन्न वृद्धि अवस्थाएँ
2. फसल वृद्धि - प्रकाश संश्लेषण, श्वसन एवं विकास प्रकियाएँ
3. पौधे के हिस्सों का विभाजन - फली एवं बीज में वृद्धि आदि
4. नाइट्रोजन स्थिरीकरण - ग्रन्थिकाओं में वृद्धि एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण
5. जड़ वृद्धि - गहराई एवं प्रसार
6. मृदा प्रक्रियाएँ - उर्वरक रूपान्तरण एवं संतुलन
7. जलचक्र प्रक्रियाएँ - जल संतुलन
8. प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव - तापमान तथा जल तनाव
9. कीट व रोग - वृद्धि विकास एवं उपचार पद्धति

प्रतिमान वास्तविक दुनिया को गणितीय रूप में प्रस्तुत करते हैं। आजकल कृषि एवं पर्यावरण विज्ञान में प्रतिमानों का प्रयोग बहुत प्रचलित हो रहा है। फसल अनुकरण प्रतिमान वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान को अन्य विषयों जैसे- फसल क्रिया विज्ञान, पौधा प्रजनन, शस्य विज्ञान, फसल मौसम विज्ञान, मृदा भौतिकी, मृदा रसायन और कीट विज्ञान से जोड़ते हैं। सामान्यतः फसल अनुकरण प्रतिमान मौसम की स्थिति, फसल प्रबंधन परिदृश्यों के अनुसार फसल उपज की गणना अथवा अनुमान लगाते हैं।

फसल अनुकरण प्रतिमान के मापांकन व सत्यापन के लिए आवश्यक आँकड़े इस प्रकार हैंः-

1. प्रतिदिन मौसम के आँकड़े :- बारिश, अधिकतम और न्यूनतम तापमान, सौर विकिरण, धूप के घंटे।
2. मृदा रूपरेखा के आँकड़े :- (एक बार का कार्यकलाप जो मिट्टी की सर्वेक्षण रिपोर्ट से प्राप्त किया जाये): क्षितिज से मृदा की बनावट, थोक घनत्व, अंश पत्थर, जैविक कार्बन, मृदा पीएच (जल), क्षितिज मोटाई और गहराई, जड़ विकास वितरण, सतही विशेषताएँ जैसे- मृदा रंग, ढाल, पारगम्यता, जल निकासी वर्ग, मिट्टी की श्रृंखला का नाम।
3. प्रबंधन आँकड़े :- फसल, किस्म, रोपण तारीख, अंकुर दर, पादप रिक्ति, पंक्ति रिक्ति रोपण गहराई, सिंचाई (तारीख, मात्रा, प्रकार और विधि) उर्वरक (तिथि, राशि, प्रकार, प्रयोग की विधि), जुताई/माध्यमिक संचालन (दिनांक, गहराई, उपकरणों का इस्तेमाल क्रिया), जैस उर्वरकों (तिथि, राशि, प्रकार और प्रयोग की विधि), निराई और छंटनी (तारीख और विधि)।
4. प्रारंभिक मृदा आँकड़े (फसल की बुवाई के समय एकत्र हो):-

(अ) अधिकतम गहराई (1.5 मी0) तक आरंभिक मिट्टी के पानी की माप तथा 30 समी0 के अन्तराल पर मिट्टी के नमूने।

(ब) 1.5मी0 की गहराई तक 30 समी0 के अंतराल पर आरंभिक मृदा उर्वरता। मिट्टी के नमूनों में NH_4, NO_3, P,K, pH और जैविक कार्बन तथा नाइट्रोजन का विश्लेषण किया जाना चाहिए।

(स) मिट्टी की सतह पर अवशेष - राशि तथा रचना (N और C की मात्रा)।

5. मृदा जल मापः- ग्रवीमैट्रीक या अन्य विधियों द्वारा 10 से 15 दिन के अन्तराल पर हर 30 सेमी0 के अन्तराल पर अधिकतम गहराई (1.5 मी0 तक)।
6. वनस्पतिक और प्रजनन विकास (फसल अनुसार : केवल दृश्य अवलोकन):- अवलोकन 2 या 3 दिन बाद ली जाये। उभार तारीख, वानस्पतिक तथा प्रजनन अवस्था अभिलेखित करें।
7. फसल वृद्धि विश्लेषण (फसल अनुसार, फसल के साथ बदल सकता है):- पौधों के नमूनों हर 2 सप्ताह के अन्तराल में लेने चाहिए। नमूना क्षेत्र के लिए 1मी0^2 क्षेत्र, नमूना पौधों की संख्या, भूमि से ऊपर का जीवभार, पत्तों, पर्णवृन्त, फली और बीज का भार, पत्ती क्षेत्र, फलीयों की संख्या, बीजों की संख्या तथा नाइट्रोजन की मात्रा (वैकल्पिक)।
8. फसल कटाई के समय पैदावार व अन्य घटक (फसल अनुसार बदल सकता है):- कटाई की तारीख, फसल घनत्व (पौधे/मी0^2), फसल क्षेत्र, भूमि के ऊपर का जीवभार, फली उपज (बीज आवरण), बीज उपज, 1000 फलियों का वजन।

प्रतिमान अनुप्रयोगों के लिए आवश्यक आँकड़ा समुच्चयः प्रतिदिन मौसम के आँकड़े, मृदा रूपरेखा के आँकड़े, प्रारंभिक मृदा आँकड़े प्रारंभिक मृदा उर्वकरता और मृदा की नमी, प्रबंधन आँकड़े, फसल विशेष के गुणांक (आनुवंशिक गुणांक)।

इस प्रकार फसल प्रतिमान अनुकूलन रणनीतियों को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नई फसलों और उच्च तापमान, सूखे, जल लवणता, जमाव, कीड़े और बीमारीयों, फँसल अवधि आदि के निर्धारण में भी ये सहायक हैं। यह फसल विज्ञान को उत्तम बनाने जैसे- बुवाई की तारीख, पौधों की संख्या, पोषक तत्व प्रबंधन तथा मृदा व जल प्रबंधन (जैसे-जल उपयोग की दक्षता बढ़ाने) में भी सहायक हैं।

हालाँकि अनुकरण प्रतिमानों में अभी भी पूर्ण जानकारी की कमी है। फिर भी ये प्रतिमान बहुत उपयोगी हैं। अगर इसकी व्याख्या ध्यानपूर्वक तथा प्रतिमान की क्षमता के संदर्भ में की जाये तो एकल पहलुओं पर प्रतिरूपण से जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर हमारे ज्ञान में बढ़ोत्तरी होती है। ये सरकारी, गैर सरकारी संगठनों या निजी निगमों के लिए पैदावार की सही भविष्यवाणी के लिए काफी उपयोगी हैं। ये जलवायु परिवर्तन का कृषि-पारिस्थितिकी पर प्रभाव को जानने तथा संभावित अनुकूलन और शमन को जानने में मददगार हैं।

''समाज सुधार शास्वत, सर्वकालीन है।'' धर्म और संस्कृति के मूल सिद्धान्तों की अंधविश्वास से निर्मुक्त शास्त्रानुकूल व्याख्या द्वारा दोषपूर्ण प्रथाओं और रूढ़ियों का संशोधन किया जाय। ज्ञान के सजीव तत्त्वों को पुष्ट किया जाय, लोक-कल्याण का विस्तार किया जाय।

-महामना पं. मदन मोहन मालवीय

प्रोटियोमिक्स : मेजबान पौधों व कवकों के सम्बन्ध को समझने का एक माध्यम

मनोज कुमार[1,3], प्रो0 कविता शाह[2], प्रो0 रमेश चन्द[1] और प्रो0 आर0एस0 दूबे[3]*

ब्रह्माण्ड में उपस्थित हर जीव को अपने को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। पोषण सभी जीवधारियों के लिए एक अतिआवश्यक जरूरत है। अतः सभी जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, कीड़े-मकोड़े, जीवाणु, विषाणु, कवक आदि विभिन्न विधियों द्वारा अपना भोजन प्राप्त करते हैं। इन सभी को जीवित रहने के लिए एक संतुलित पारिस्थितिकी तन्त्र की आवश्यकता होती है। उदाहरण के तौर पर किसी एक स्थान पर बहुत अधिक मात्रा में वनस्पति होने के कारण प्राथमिक उपभोक्ता जीवित रहते हैं, जबकि प्राथमिक उपभोक्ता पौधों (वनस्पतियों) को खाकर उनकी संख्या कम कर देते हैं। प्राथमिक उपभोक्ता को गौण उपभोक्ता (दूसरी व तीसरी श्रेणी के उपभोक्ता) खाते हैं। इन गौण उपभोक्ताओं का सम्बन्ध प्राथमिक उपभोक्ताओं व उत्पादकों से है (चित्र-1)।

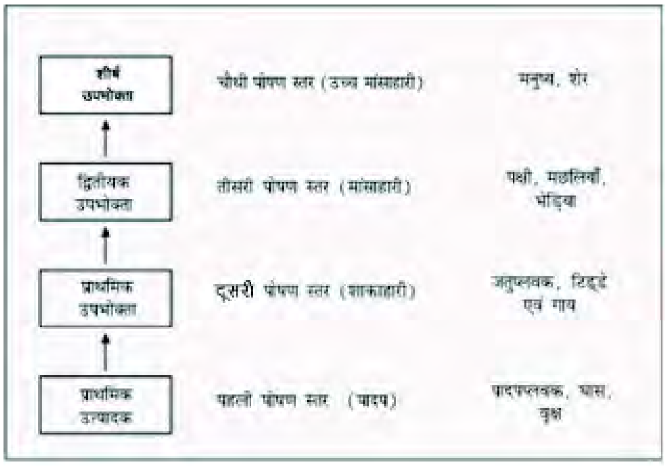

चित्र-1 पोषण स्तर पर पारिस्थितिक तंत्र का आरेखीय निरूपण

मनुष्य के जीवन में सुख शांति व समृद्धि के लिए पौधे व उनके उत्पाद अतिआवश्यक हैं। लेकिन पर्यावरण में हो रहे लगातार बदलाव के कारण पौधों व उनके उत्पादों पर बहुत सारे कीटाणुओं, जीवाणुओं, विषाणुओं आदि का आक्रमण तेजी से बढ़ रहा है। इसके कारण पेड़-पौधे व उनके उत्पादों की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है। सदियों से हो रही नयी-नयी खोजों व शोधों के आधार पर वैज्ञानिकों के मन में हमेशा जिज्ञासा रही है कि पौधों व उनको नष्ट करने वाले कारकों/घटकों (कीट पतंग, कवक, जीवाणु, विषाणु आदि) में आपसी सम्बन्ध (Interaction) के लिए कौन-कौन से अणु, परमाणु या उनका आणविक आधार क्या है?

वैज्ञानिक नवीन-तकनीकी माध्यमों से पौधों तथा उन्हें नष्ट करने वाले कारकों के भौतिक, रासायनिक व आणविक क्रियाओं पर लगातार शोध करते आ रहे हैं। ये सत्य है कि कोशा जीवधारियों के संरचना एवं जैविक क्रियाओं की एक इकाई है और इनमें प्रायः स्वतः जनन करने की क्षमता होती है। कोशा विभिन्न पदार्थों का छोटा संगठित रूप होता है, जिसमें कि जीवन की सभी क्रियाएँ निहित होती हैं, जिन्हें हम सामूहिक रूप से जीवन कहते हैं। प्रत्येक जीवधारी अपना जीवन एक कोशा से आरम्भ करता है, इसके अस्तित्व को पीढ़ी दर पीढ़ी ले जाने का कार्य एक बहुत ही महत्वपूर्ण अणु डी0एन0ए0 (DNA) करता है, बहुत सारे जीवधारियों में डी0एन0ए0 के कार्य का विस्तृत अध्ययन पूर्ण जीनोम अनुक्रमण के माध्यम से किया जा चुका है तथा लगातार और अन्य का अध्ययन हो रहा है।

डी0एन0ए0 कोड की नकल m-RNA के निर्माण द्वारा प्रदान की जाती है। m-RNA कोशाद्रव्य में एक सूत्र/टेम्प्लेट या संरचना बनाता है तथा t-RNA से मिलकर प्रोटीन संश्लेषण करता है। जिसमें कि अमीनों एसिड्स एक-दूसरे से मिलकर पेप्टाइड्स बनाते हैं और इस प्रकार अमीनों एसिड्स की शृंखला बन जाती है तथा अलग होकर प्रोटीन्स को संश्लेषण/निर्माण करती है (चित्र-2)।

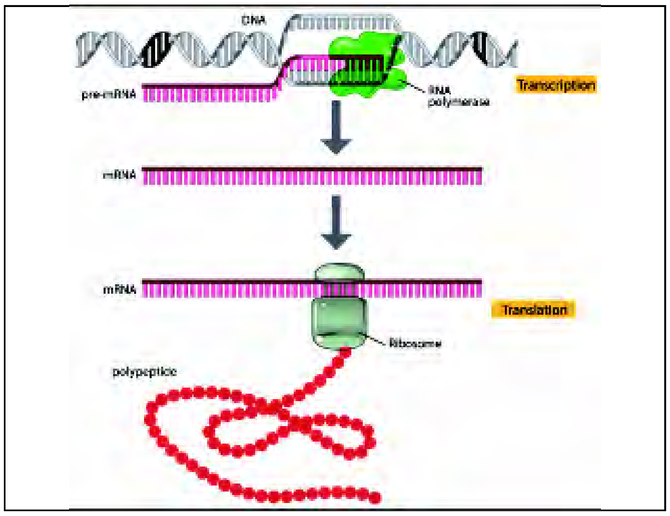

चित्र-2 ट्रान्सक्रिप्शन एवं ट्रान्सलेशन द्वारा प्रोटीन-संश्लेषण का चित्रात्मक वर्णन

* [1] कवक एवं पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान; [2] पर्यावरण एवं धारणीय विकास संस्थान तथा [3] जैव- रसायन विभाग, विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

पौधों की कोशा में बनने वाली इन प्रोटीन्स की भूमिका उनको नष्ट करने वाले कारकों के बीच कुछ सम्बन्ध स्थापित करती है। इन प्रोटीन्स के कार्य व उपयोग को जानने व समझने के लिए बहुत सारे तौर-तरीकों को उपयोग किया जा रहा है। प्रोटीन्स के विस्तृत अध्ययन को प्रोटियोमिक्स के अन्तर्गत किया जाता है तथा प्रोटियोमिक्स शब्द सबसे पहले सन् 1997 में प्रोटीन्स के व्यवस्थित विश्लेषण के लिए किया गया, प्रोटियोम का व्यवस्थित विश्लेषण पैराजीनोमिक युग में एक शक्तिशाली तरीका है।

कवक दुनिया में अति आकस्मिक पौध रोग के अनौपचारिक कर्मक हैं। ये मेजबान पौधों की अक्षुण सतहों के भंग करने में सक्षम होने के नाते सूक्ष्मजीव (माइक्रोबियल) रोगजनकों में अद्वितीय हैं। बहुत सारे पौध रोगजनक कवकों जैसे कि *बोटेट्रिस सेनेरिया, स्क्लेरोटिना-एस्क्लेरोशियम, फ्येजेरियम ग्रैमिनैरियम, फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरियम, मैग्नापोर्थी ओराइजी, स्टेग्नोस्पोरा नोजेरम* आदि का पूर्ण जीनोम अनुक्रमण होने के साथ-साथ उनके प्रोटियोम में वैश्विक परिवर्तन की निगरानी प्रोटियोमिक्स के अन्तर्गत की जा रही है। यह कवक विकास, कवकयुक्त पौध व्यवहार और पौध रोग जनन एक आणविक आधार है, जिसके लिए प्रोटियोमिक्स अध्ययन का एक सटीक तरीका है।

वर्तमान समय में पादप तथा उन पर रोग पैदा करने वाले कारक के बीच के सम्बन्ध तथा उनमें भाग लेने वाली प्रोटीन्स का अध्ययन एक नवीन तकनीकी - 2-Dimentional Gel Electrophoresis (2-DE) द्वारा सम्भव हुआ है। इस तकनीकी द्वारा अलग की गयी प्रोटीन्स का विच्छेदन मास-स्पेक्ट्रोफोटोमेट्रिक (Mass-Spectrophotometric) तकनीकी (MALDI-TOF/TOF) की सहायता से किया जाता है। इस तकनीकी द्वारा प्रोटीन्स को सबसे पहले उनके आवेशानुसार (According to Charge) विच्छेदित किया जाता है, जिसे आइसोइलेक्ट्रिक फोकसिंग (घ्इं) कहते हैं। तत्पश्चात् प्रोटीन्स को उनके भार के आधार पर दूसरी दिशा में एअ्ए PAGE (Sodium dodacyl sulfate palyacryl amide get electrophoresis) द्वारा विच्छेदित करते हैं (चित्र-3)।

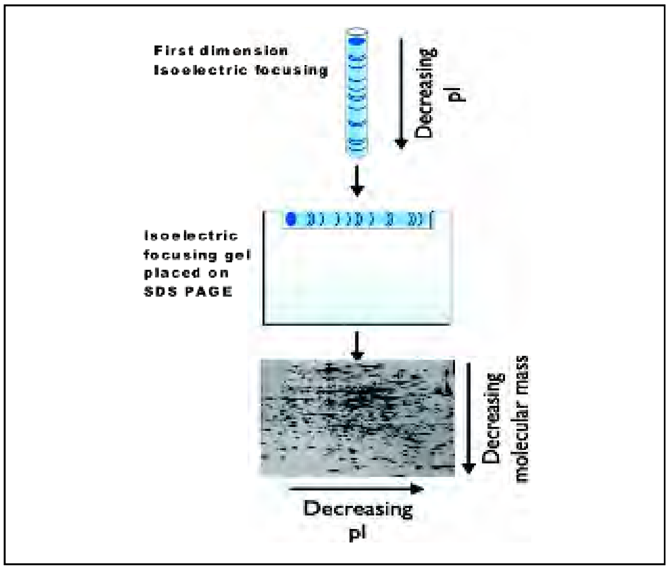

चित्र-3 द्वि-दिशीय (2-डाइमेन्सनल) जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस का चित्रात्मक वर्णन

इस तकनीकी के माध्यम से कवक संक्रमित पादप तथा स्वस्थ पादप के सभी प्रोटीन्स का विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है। जैव संसूचिकी (Bioinformatics) के संयुक्त अध्ययन से प्रोटीन्स की बनावट/पहचान आदि का अध्ययन संभव हो सका। इस प्रकार वैज्ञानिकों ने किसी भी जैविक या अजैविक आपदा की स्थिति में पौधों/पादप या कवक जीनोम द्वारा वर्णित (Expressed) प्रोटीन्स का सम्पूर्ण आंकलन करने में सफलता हासिल की है (सारिणी-1)। धान एक महत्वपूर्ण खाद्यान्न है जिसके बारे में हजारों वर्ष पूर्व एशिया के कृषि के इतिहास में वर्णन मिलता है। एक अनुमान के अनुसार केवल भारत में धान की लगभग 2 लाख किस्में मिलती हैं। भारत में धान की जो विविधता है, वह विश्व की सर्वाधिक विविधताओं में एक है। बासमती धान अपनी सुगंध व स्वाद के लिए मशहूर है और इसकी 27 पहचानी गयी किस्में भारत में उगायी जाती हैं।

उदाहरणार्थ, अभी तक के सर्वेक्षण के अनुसार धान में अंगमारी नामक रोग पैदा करने वाले कारक *मैग्नापोर्थी ओराइजी* के आपसी अन्तर्क्रिया (Interection) के दौरान धान की सम्बन्धित कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार की प्रोटीन्स (प्रतिरक्षा, एलिसिटर सम्बन्धित) की पहचान 2-डाइमेन्सनल जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस तकनीकी द्वारा सम्भव हो सकी। इसी क्रम गेहूँ में रोग पैदा करने वाले कारक *फ्यूजेरियम ग्रेमिनेरियम* के आपसी अन्तर्क्रिया (Interection) के दौरान विभिन्न प्रकार के प्रोटीन्स 2-डाइमेन्सनल जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस तकनीकी द्वारा सम्भव हो सका। कुछ अन्य महत्वपूर्ण फसलों जैसे कि- मक्का, टमाटर, मटर आदि में रोग पैदा करने वाले कारकों के आपसी सम्बन्ध के दौरान बनने वाले प्रोटीन्स की पहचान की जा सकी है। इस तकनीकी का सर्वप्रथम प्रयोग खमीर प्रोटियोम के आंकलन के लिए किया गया। पादप-कवक सम्बन्धी प्रोटीन्स के विन्यास व विश्लेषण का संक्षिप्त सार इस चित्र द्वारा समझाया जा सकता है (चित्र-4)।

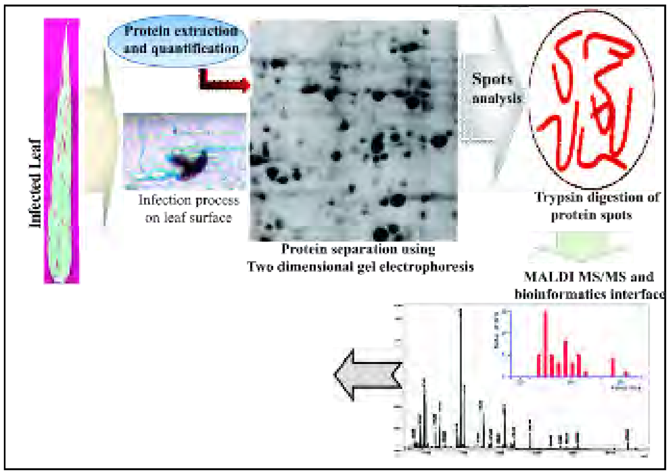

चित्र-4 कवक/पादप प्रोटियोमिक्स अध्ययन का एक दृष्टान्तचित्र वर्णन

2-DE से उच्चतर स्तर की एक-दूसरी तकनीकी जिससे कि 2D-DIGE के नाम से जानते हैं तथा इसमें प्रोटीन्स के नमूने घ्इं से पहले एक विशेष प्रकार की स्फटीक वर्णक (Crystal Dye) से रंगी जाती है (चित्र-5)। इस तकनीकी द्वारा एक ही बार में तीन से ज्यादा प्रोटीन्स के नमूनों को

विच्छेदित किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने इससे भी उच्चतर स्तर की जेल-रहित बहुआयामी प्रोटीन विच्छेदन तकनीकी (Multi-dimensional Identification Technology; Mud: PIT) विकसित की है।

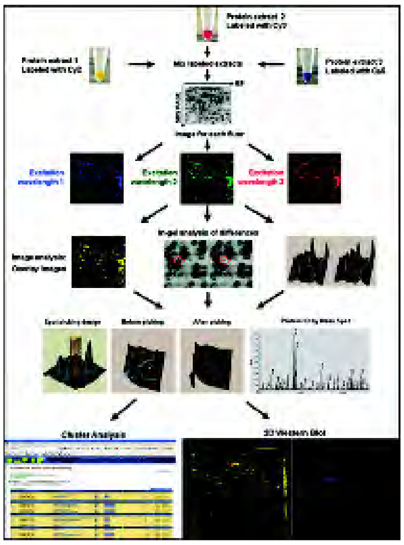

चित्र-5 2D-DIGE के माध्यम से प्रोटीन वर्णन (Protein Experession) अध्ययन का चित्रात्मक वर्णन

पौधों में एक विशेष प्रकार का जन्मजात प्रतिरक्षा तन्त्र विकसित होता है, जो कि सूक्ष्म रोगजनकों जैसे कि- कवक, जीवाणु, विषाणु आदि के आक्रमण से बचाता है। यह प्रतिरोधकता दो प्रकार की होती है -

1. बेसल (Basel) और
2. प्रतिरोधक जीन मध्यस्थ (R-gene Mediated Immunity)

बेसल प्रतिरक्षा (Basel lmmunity) संग्रहित सूक्ष्म अणुओं की पहचान पर होती है, जैसे कि पैथोजन असोसिएटेड मालीकुलर पैटर्न (PAMPs) या माइक्रोवियल-एसोसिएटेड मालीकुलर पैटर्न (PAMPs)। जबकि प्रतिरोधक जीन मध्यस्थ- जीन फार जीन (R-gene Mediated Immunity, Gene for Gene) परिकल्पना पर आधारित होती है। इस प्रकार R-gene की पौधों में उपस्थिति या अनुपस्थिति उनके प्रतिरोधकता या अप्रतिरोधकता को दर्शाता है (चित्र-6)।

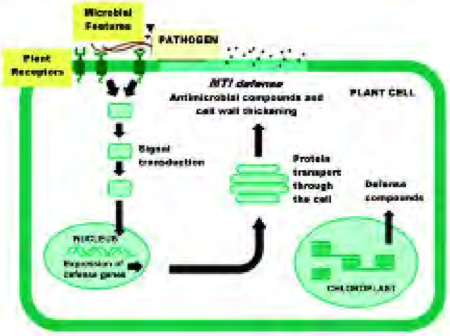

चित्र-6 कवक-पादप सम्बन्ध होने के दौरान कोशिका के भीतर बनने वाले प्रतिरोधक मालीक्यूल्स का चित्रात्मक वर्णन

अनुमानित या सक्रिय प्रतिरक्षात्मक यन्त्र रचना (Induced or Active Defence Mechanism) सामान्यतः ऑक्सीडेटिव विस्फोट (Oxidative Burst) से सम्बन्धित होती है, जैसे कि- AVR, PAMPs, कोशाभित्ति का विभेदन स्थल पर क्षरण, Hyper Sensitive Reaction (HR), कोशा मृत्यु, रोगाणुरोधी मेटाबोलाइट्स का उत्पाद (Phyto-alaxin) तथा रोगजनन प्रोटीन्स (PRs) के लिप्यान्तरण (Translation) की सक्रियता आदि से संचालित होती हैं पौधों की सुरक्षा व्यवस्था, सैलेसिलिक अम्ल (SA) जैस्मोनिक अम्ल (JA) और इथाइलीन (ET) आदि संकेतक अणुओं से मध्यस्थ होती है।

आणविक संयत्र को पादप-कवक सम्बन्ध (Interaction) की सुव्यवस्थित ढंग से समझने के लिए प्रोटियोमिक्स एक बहुत ही सुदृढ़ तकनीकी है। प्रोटियोमिक्स की सहायता से पौधों में प्रतिरक्षा सम्बन्धी संकेतकों या पाथवें का पता उनके जैव रासायनिक अणुओं के उत्पाद का विश्लेषण किया जा सकता है। प्रोटियोमिक्स की सहायता से कवक पादप सम्बन्ध के समय प्रतिरक्षात्मक अणुओं का पता लगाने के लिए किया जा सकता है।

परिणामी जैव रासायनिक परिवर्तन बहुत ही रुचिकर है, क्योंकि ये रोगाणु सुधार प्रतिरोधक या प्रतिरक्षा के समय मेजबान/वाहक पौधों की रक्षा सम्बन्धी पथ की विशिष्ट स्विच बिन्दु में जानकारी दे सकता है।

इस प्रकार से इस तकनीकी द्वारा बायोट्राफिक, नैक्रोट्रफिक और हेमीबायोट्राफिक पौध रोगजनक कवकों के प्रतिरोध में होने वाली जटिल से जटिलतम क्रिया तंत्र को समझने में सहायक है, यह प्रोटियोमिक्स कवक तथा मेजबान पौधों में होने वाले सम्बन्ध के समय आणविक प्रतिक्रियाओं को समझने के लिए सहायक हो सकता है।

पौध रोग जनक कवक के लिए उत्तरदायी मेजबान प्रोटीन्स (Host Proteins Responsive to Fungal Phytopathogens)

प्रोटियोम में लगातार हो रहे अनुसंधान के परिणामस्वरूप वैज्ञानिकों ने मेजबान पौधों तथा उनमें रोग पैदा करने वाले कारकों यानी पौध रोगजनकों के बीच होने वाले सम्बन्धों के दौरान पौधों में बदलाव होने वाले जटिल प्रोटीन्स तथा चयापचयी उत्पादों की क्रमबद्ध जानकारी पाने/लेने में सफलता हासिल की है। धान एक महत्वपूर्ण फसल होने के कारण इसमें नुकसान पहुँचाने वाले पौध रोगजनक कवक *मैग्नापोर्थी ओराइजी (M. oryzae)* का मेजबान पौध (धान) के बीच होने वाले सम्बन्ध के दौरान आणविक-आनुवंशिकी का विस्तारपूर्वक अध्ययन हुआ है।

मेजबान पौध (Host plant) में कवक की प्रारम्भिक अवस्था में पहचान के दौरान प्रतिरोधी तंत्र सक्रिय हो जाते हैं, जैसेकि- रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीसीज (ROS) का निकलना, सेल्युलोज का जमाव, कवक विष का एकत्रित होना तथा ईंउाहो का सक्रिय अभिव्यक्त होना आदि।

धान के अंगमारी रोग (Rice blast) कारक (कवक) का रोग फैलाने के दौरान ईं प्रोटीन्स जैसे PR-2 (B. 1-3 ग्लूकानेज), PR-5 (थायूमेटिन जैसी प्रोटीन TLP), PR-9 (परॉक्सीडेज-POX 22.3) और PR-10 (प्रोबेन्जोल व्युत्पन्न 'Inducible' प्रोटीन), अभिग्राहक (Receptor) जैसे कि- प्रोटीन काइनेज, आइसोफ्लैवोन रिडक्टैज जैसे प्रोटीन्स और

ISSN 2231 - 2455

नमक (Salt) प्रेरित प्रोटीन्स इत्यादि। आइसोफ्लेवोन रिडक्टेज, दलहनी फसलों में आइसोफ्लेवोन फाइटोएलेग्जिन का उत्पादन कवकों के आक्रमण तथा पर्यावरणीय या विपरीत परिस्थितियों के दौरान एकत्रित हो जाते हैं। आर्द्रता बाहुल्य प्रक्षेत्र में उगाई जाने वाली गेहूँ तथा जौ में एक बहुत ही खतरनाक रोग फ्यूजेरियम हेड ब्लाइट के नाम से जाना जाता है, जो कि *फ्यूजेरियम-जर्मेनेरियम* नामक कवक से होता है।

प्रोटियोमिक्स के बहुत ही प्रारम्भिक तरकीब; 2-DE/LC-MS/MS का प्रयोग करते हुए *फ्यूजेरियम* संक्रमित गेहूँ के टूड़े की बहुतायात प्रोटीन्स एन्टीऑक्सीडेन्ट कार्य जैसे कि सुपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज (SOD) डीहाइड्रोएस्कार्बेट रिडक्टेज तथा ग्लूटाथियान-एस-ट्रान्सफरेज से सम्बन्धित थी जो कि उत्तक के अन्दर H_2O_2 के ऑक्सीडेटिव विस्फोट से सम्बन्धित थी। एक-दूसरे अध्ययन में *फ्यूजेरियम जर्मेनेरियम* संक्रमित गेहूँ के टूड़े की 41 प्रोटीन में से 33 प्रोटीन्स उसके सुरक्षात्मक तंत्र से सम्बन्धित थी।

बहुत ही उच्च गुणवत्ता वाले अनुक्रमण प्रौद्योगिकी के आगमन के साथ ही कवक जीनोम अनुक्रमण की संख्या बहुत ही तेजी से बढ़ रही है। पूर्ण जीनोम ऑकड़ों की उपलब्धता और उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन पहचानने की तरकीब जैसे- 2-DE MALDI -TOF Deewj ESI-MS/MS का आगाज पौध-कवक अभिक्रिया (Plant Pathogen Interaction) के दौरान प्रोटियोम में परिवर्तन के अध्ययन के लिए आग में घी का कार्य कर रहे है। इन तकनीकों के उपयोग से वैज्ञानिक जैव रासायनिक तंत्र, अन्तर्निहित पौध रक्षा प्रतिक्रिया, बीमारी की शुरुआत में कवक प्रभावोत्तपादक की भूमिका, बीजाणु अंकुरण, हिस्टोरियल गठन में शामिल संरचनात्मक व क्रियात्मक/विनियामक घटकों को समझने व पौध रोग की रोकथाम के लिए कवकनाशी दवा बनाने में सक्षम हो सकेंगे। हालाँकि शोधकर्ताओं या वैज्ञानिकों के सामने बहुत सारी चुनौतियाँ हैं, जैसकि- एकल प्रोटीन का पृथक्करण व उनका पूर्ण विश्लेषण। इन सब कमियों को दूर करने के लिए लगातार प्रयास हो रहे हैं।

गर्भाशय के उत्तकों से हुआ बच्चे को जन्म

ब्रिटेन में एक 28 वर्षीय महिला ने उसके बचपन में निकालकर सुरक्षित रखे गए गर्भाशय के उत्तकों की मदद से एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दिया है। ऐसा करने वाली वह दुनिया की पहली महिला बन गई है। साथ ही चिकित्सा की दुनिया में यह एक क्रांतिकारी प्रगति है और यह प्रक्रिया कैंसर पीड़ितों के लिए एक आशा की किरण है। इससे पहले भी सुरक्षित रखे गए गर्भाशय उत्तकों की मदद से सफल गर्भधारण हुआ है, परन्तु वे सभी गर्भाशय उत्तक वयस्क महिलाओं के थे। यह पहला मामला है जिसमें गर्भाशय उत्तक एक किशोरी से लिया गया था जब उसकी उम्र केवल 13 साल 11 महीने थी। इस ब्रिटिश महिला का जन्म रिपब्लिक ऑफ कांगो में हुआ। वह 11 वर्ष की आयु में बेल्जियम आ गई। यहाँ एक भीषण बीमारी के इलाज के दौरान मरीज को उसके भाई का अस्थिमज्जा दिया गया। अस्थिमज्जा देने की प्रक्रिया में मरीज को कीमोथेरेपी दी जाती है ताकि उसकी प्रतिरोधी क्षमता कमजोर हो जाए और शरीर अस्थिमज्जा को स्वीकार कर सके। डॉक्टरों ने 14 साल की उम्र से पहले ही उसका दाया अंडाशय निकाल लिया व उसके उत्तकों को सुरक्षित रख लिया। उसके शरीर का विकास तो हुआ, पर माहवारी कभी नहीं आई। उसके जटिल शारीरिक समस्या को देखते हुए डाक्टरों ने उस पर यह नया प्रयोग किया, जो सफल रहा और चिकित्सा की दुनिया में मील का पत्थर साबित हुआ।

अपराधियों की सटीक पहचान के लिए वीएनटीआर्स (VNTRs) एक नया क्रांतिकारी कदम

संजय गोस्वामी*

जिस समय मानव समाज की रचना हुई अर्थात् मनुष्य ने अपना सामाजिक संगठन प्रारंभ किया, उसी समय से उसने अपने संगठन की रक्षा के लिए नैतिक व सामाजिक आदेश बनाए। उन आदेशों का पालन मनुष्य का 'धर्म' बतलाया गया। किन्तु, जिस समय से मानव समाज बना, उसी समय से उसके आदेशों के विरुद्ध काम करने वाले भी पैदा हो गए और जब तक मनुष्य प्रवृत्रि ही न बदल जाए, ऐसे व्यक्ति बराबर होते रहेंगे। अपराधियों तक पहुँचने के लिए संदिग्ध लोगों से पूछ-ताछ, घटना से संबंधित सबूतों की जाँच-परख, रक्त के नमूनों की जाँच या फिर फिंगर प्रिंट्स के द्वारा अपराधी तक पहुँचने की जटिल एवं श्रम-साध्य लेकिन अनिश्चित विधाएँ, अब तक के परंपरागत तरीके थे। ऐसे में डीएनए फिंगर प्रिंटिंग की विधा इस क्षेत्र में एक क्रांतिकारी कदम के रूप में सामने आई है। इस विधा द्वारा बच्चे तथा माता-पिता के संबंधों की संदिग्धता को दूर करने से लेकर अपराधियों की सटीक पहचान, सभी कुछ आसानी से किया जा सकता है। पहली बात, डीएनए फिंगर प्रिंटिंग के नाम से लोकप्रिय इस विधा का फिंगर अर्थात् अंगुलियों से कुछ भी लेना-देना नहीं है। चूँकि अंगुलियों के छाप का उपयोग व्यक्ति, विशेषकर अपराधियों की पहचान के रूप में बहुत पहले से किया जाता रहा है, अतः उसी तर्ज पर इस विधा को भी 'डीएनए फिंगर प्रिंटिंग' (DNA Fingerprinting) का नाम दे दिया गया। वास्तव में इसे केवल 'डीएनए टाइपिंग' (DNA Typing) या फिर 'डीएनए प्रोफाइलिंग' (DNA Profiling) ही कहना चाहिए।

सन् 1984 में ब्रिटिश जनेटिस्ट एलेक जेफ्रीज एवं उनके सहयोगियों द्वारा विकसित इस विधा की सहायता से किसी भी व्यक्ति की पहचान या फिर उसके माता-पिता कौन हैं, जैसे तथ्यों की पुष्टि उनके शरीर की किसी भी कोशिका में पाए जाने वाले 'वैरिएबल नंबर टैंडेम रीपीट्स-'वीएनटीआर्स-VNTRs' के नाम से जाना जाता है, के द्वारा आसानी एवं विश्वसनीय रूप से की जा सकती है। इसका उपयोग अनुवांशिक रोगों की पहचान तथा उनके उपचार में होता है। जिस प्रकार दो व्यक्तियों के फिंगर प्रिंट्स शत प्रतिशत एक जैसे नहीं होते, उसी प्रकार दो व्यक्तियों के 'वीएनटीआर्स' के भी एक जैसे होने की संभावना लगभग न के बराबर है। एक ही निषेचित डिंब से जन्में जुड़वाँ बच्चे इसके अपवाद हो सकते हैं या फिर करोड़ों की जनसंख्या में अपवाद स्वरूप एक-आध केस ही ऐसे मिल सकते हैं, जिनके वीएनटीआर्स शत-प्रतिशत मेल खा जायें।

आजकल फोरेंसिक साइंस में इस विधा का उपयोग बढ़ता जा रहा है। कारण, फिंगर प्रिंट्स की तुलना में इस विधा में झंझट कम है, सुनिश्चित परिणाम मिलता है, साथ ही इसका दायरा भी बड़ा है। इसके लिए संदिग्ध व्यक्ति के रक्त के छीटों, बाल के टुकड़ों या फिर खरोंची हुई त्वचा अथवा वीर्य के धब्बों, यहाँ तक कि लार से प्राप्त मात्र कुछ कोशिकाएँ ही जाँच के लिए काफी हैं।

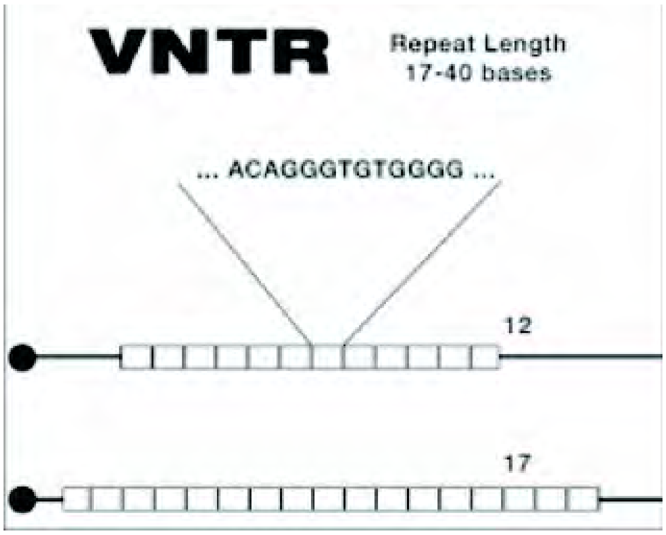

दुहराये गये नाइट्रोजन बेसेज

इस विधा को विस्तार से समझने के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले हम यह जान लें कि ऊपर की पंक्तियों में बार-बार उल्लिखित 'वीएनटीआर्स' आखिर हैं क्या? इन्हें समझने के लिए सबसे पहले कोशिका, उसके केंद्रक, केंद्रक में अवस्थित गुणसूत्रों तथा उनके निर्माण में प्रयुक्त मुख्य रसायन डीएनए के बारे में जान लेना आवश्यक है। वैक्टीरिया जैसे कुछ आदि जीवों को छोड़ सभी जीवों की कोशिका में एक केंद्रक अवश्य होता है। इस केंद्रक में गुणसूत्रों की संख्या एक प्रजाति के सभी जीवों की सभी कोशिकाओं में निश्चित होती है। यथा, किसी भी मनुष्य की किसी भी कोशिका में इन गुणसूत्रों के 23 जोड़े पाए जाते हैं। मनुष्य के इन 23 जोड़े गुणसूत्रों में 15 लाख जीन्स के जोड़े पाए जाते हैं। ये जीन्स वास्तव में गुणसूत्रों में अवस्थित डीएनए के दुहरे कुंडलाकार धागे के छोटे-छोटे अंश होते हैं तथा संरचना में नाइट्रोजन बेसेज के क्रमवार विन्यास के आधार पर एक दूसरे से अलग-अलग होते हैं। संरचना में यही भिन्नता इन जीन्स द्वारा वहन किए जाने वाले विभिन्न अनुवांशिक लक्षणों का आधार है। ये जीन्स वास्तव में गुणसूत्रों में अवस्थित डीएनए के दुहरे कुंडलाकार धागे के छोटे-छोटे अंश होते हैं तथा संरचना में एडेनिन (A),

*यमुना जी/13, अणुशक्तिनगर, मुंबई- 400 094.

ISSN 2231 - 2455

गुआनिन (G), साइटोसिन (C) तथा थायमिन (T) जैसे नाइट्रोजन बेसेज के क्रमवार विन्यास के आधार पर एक दूसरे से अलग-अलग होते हैं। संरचना में यही भिन्नता इन जीन्स द्वारा वहन किये जाने वाले विभिन्न अनुवांशिक लक्षणों का आधार है। एक जीन में पाए जाने वाले सभी नाइट्रोजन बेसेज का क्रमवार विन्यास यह तय करता है कि उसके द्वारा संश्लेषित प्रोटीन के अणु में एमीनों एसिड्स का क्रम क्या होगा। इन जीन्स की सहायता से नाना प्रकार के संश्लेषित प्रोटीन्स ही परोक्ष-अपरोक्ष रूप से कोशिका की संरचना तथा कार्यकी का निर्धारण करते हैं।

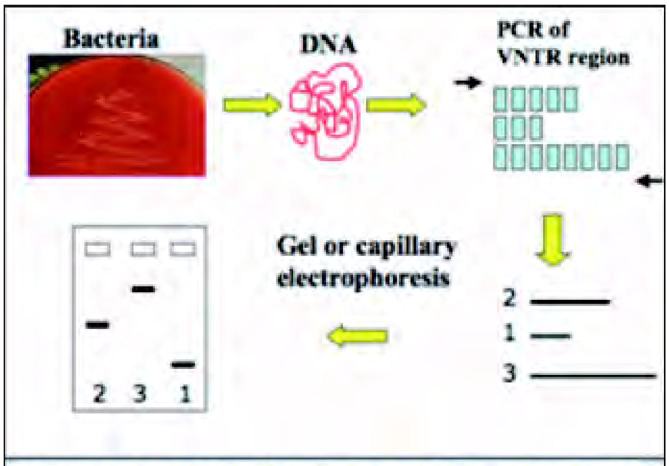

Figure 2 - MLVA (Multi-Locus VNTR Analysis)

ऐसा भी नहीं है कि एक गुणसूत्र में पाया जाने वाले डीएनए के सभी अंश अर्थपूर्ण जीन्स की ही भूमिका निभाते हैं और प्रोटीन्स के संश्लेषण में ही सहायक होते हैं। इन अर्थपूर्ण अंशों के बीच-बीच में ऐसे अंश भी होते हैं जो इन अर्थपूर्ण जीन्स के क्रिया-कलापों पर नियंत्रण रखने का काम करते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी अर्थहीन अंश होते हैं, जिनका कोई मतलब नहीं होता। इन्हीं बेमतलब के अंशों में कुछ ऐसे अंश भी होते हैं, जहाँ ये नाइट्रोजन बेसेज बार-बार दुहराए जाते हैं। उदाहरण के लिए: A-G-A-G-AG-A-G-A-G। ऐसे दुहराए गए नाइट्रोजन बेसेज से बने डीएनए के अंश की संरचना में 9 से 80 बार नाइट्रोजन बेसेज का उपयोग हो सकता है। डीएनए के ऐसे ही अंशों को 'वीएनटीआर्स' [VNTRs] का नाम दिया गया है। ऐसे डीएनए को पॉलीमॉर्फिक डीएनए भी कहा जाता है तथा डीएनए के इन अंशों को मिनीसैटेलाइट्स की संज्ञा दी गई है। किसी व्यक्ति की सुनिश्चित पहचान के लिए वास्तव में उसके पूरे जीनोम के नाइट्रोजन बेस शृंखला का अध्ययन ही सर्वश्रेष्ठ तरीका है, लेकिन लगभग तीन सौ करोड़ नाइट्रोजन बेसेज के जोड़ों का अध्ययन एक जटिल, श्रमसाध्य एवं समय लेने वाला कार्य है। ऐसे में इन वीएनटीआर्स को शेष डीएनए से अलग कर उन्हें व्यक्ति के पहचान के रूप में इस्तेमाल कर लेने की विधा का विकास कर एलेक जेफ्रीज ने हमारे समक्ष एक नया, बेहतर एवं सुनिश्चित विकल्प प्रस्तुत कर दिया है।

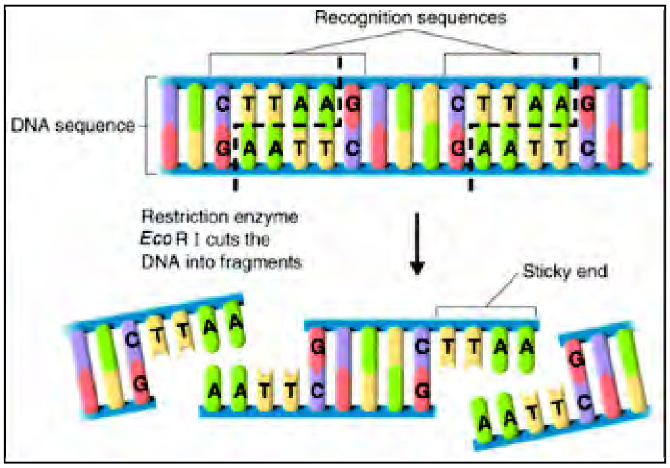

पहचाने गये डीएनए क्रम

पर्यावरण की शिक्षा के माध्यम से अधिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार की परिकल्पना भी की जा सकती है। डीएनए फिंगर प्रिंटिंग को और भी सरल, सस्ता, विश्वसनीय एवं कम से कम समय लेने वाली विधा बनाने की दिशा में लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। अब बीएनटीआर्स की जगह एसटीआर्स [Short tandem repeats] के उपयोग की तकनीक का विकास किया जा चुका है, जिसने डीएनए फिंगर प्रिंटिंग कि विधा को और भी विश्वसनीय एवं सस्ता बना दिया है। यह विधा भी 'पॉलीमरेज चेन रिएक्शन' (PCR) ही आधारित है लेकिन इसमें फिगर प्रिंटिंग के लिए डीएनए के केवल उन पॉलीमॉर्फिक क्षेत्रों का उपयोग किया जाता है, जिनमें लंबी शृंखला वाले वीएनटीआर्स की बजाय केवल 3, 4 या फिर 5 नाइट्रोजन बेसेज से बने डीएनए के छोटे-छोटे अंश [Short tandem repeats] मौजूद हों। ऐसे अंशों को शेष डीएनए से अलग कर ऊपर वर्णित विधा द्वारा इनके भी एक्सरे चित्र प्राप्त किये जा सकते हैं जिनका उपयोग पहचान के लिए किया जा सकता है।

जनता में धर्म के सजीव तत्त्वों और मूल सिद्धान्तों का प्रचार किया जाय, उसमें उचित गुण उत्पन्न किये जायें, उसे अपने कर्तव्यों का ज्ञान कराया जाय और इस तरह समाज में जीवन शक्ति संचारित की जाय।

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

निर्बाध जल प्रबंधन और भारत

प्रो0 गिरीश चन्द्र चौधरी*

विश्व जल का मानचित्र

जल भूमि, सागर तथा आकाश में अनवरत घूमता रहता है और पृथ्वी के 70 प्रतिशत भाग पर छाया हुआ है। एक बार ऐसा लगता है कि यह अनन्त और अक्षय संसाधन है और आज के समय में यह मानवीय समाज और आर्थिक विकास को परिभाषित करता है। जल संसाधन का प्रबंधन किसी भी राष्ट्र की एक महत्वपूर्ण कड़ी है क्योंकि यह विकास तथा आर्थिक विकास से सीधा जुड़ा रहा है और विश्व द्वारा सबसे महत्वपूर्ण चुनौती का सामना करा रहा है। ये विकासशील पहचान के रूप में है कि सीधी जल आपूर्ति से ऊपर शुद्ध जल की पारिस्थितिक की प्रणाली पूरी तरह से ठोस और जैविक का असंगत मिश्रण के रूप से आर्थिकतौर पर बहुत अमूल्य सामग्री है। इन सेवाओं में बाढ़ नियंत्रण, वाष्पीकरण, पुनर्रचना, शुद्धिकरण, मानवीय और औद्योगिक उच्छिष्टों का वनस्पति एवं जीव का रहन-सहन, मछली और खाद्यान्नों का उत्पादन तथा बाजारी सामान, ये सभी पारिस्थितिक का लाभ बहुत महँगा बहुधा असंभव हो जाता है। जबकि जल प्रणाली का ह्रास होता है।

भारत की बढ़ती हुयी जनसंख्या के जलापूर्ति की समस्या निवारण हेतु भविष्य के लिए जल प्रबंधन जो निर्बाध एवं भली-भाँति योजनाबद्ध और अपने उद्देश्य को दूर तक पाने वाली बनाना पड़ेगा। एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले भारत के 35 शहरों में प्रतिदिन केवल कुछ घंटों की जलापूर्ति हो पाती है जबकि उनके पास सामान्यतः संसाधन उपलब्ध हैं। 2007 में एक अध्ययन से पता लगा कि देश के 20 नगरों में केवल 4.3 घंटे प्रतिदिन जलापूर्ति हो पाती है। इनमें सबसे अधिक चंडीगढ़ में 12 घंटे प्रतिदिन और सबसे कम 20 मिनट प्रतिदिन राजकोट गुजरात। दिल्ली में नगरवासियों को केवल कुछ घंटे प्रतिदिन जल मिल पाता है कारण वितरण प्रणाली का प्रबंधन दोषपूर्ण है। परिणाम यह होता है कि प्रदूषित जल लोगों को पीना पड़ जाता है और गरीब लोगों को विशेषकर।

भारत की राष्ट्रीय जलनीति

भारत में जल का प्रभावकारी सटीक उपयोग दो उद्देश्यों से आवश्यक है। एक तो सामाजिक आर्थिक विकास और दूसरा पर्यावरण संरक्षण। इस दृष्टि से भारत सरकार ने राष्ट्रीय जलनीति का पुनः मूल्यांकन और निर्धारण 2002 में किया। इसमें स्पष्ट बताया गया कि चूँकि भारत 21वीं सदी में प्रवेश कर चुका है तो इस महत्वपूर्ण संसाधन को विकसित, संरक्षित, उपयोगी और प्रबंध के प्रभावकारी ढंग से क्रियान्वित करने की कोशिश की जाए जो निर्बाधित हो और राष्ट्रीय परिपेक्ष्य से निर्देशित हो। भारत की समस्त जनसंख्या, चाहे वह शहर या गाँव में हो, इस नीति द्वारा जो मुद्दे उठाये गए, उनमें सिंचाई व्यवस्था, पुनर्स्थापन, बहाली, जल गुणवत्ता का नियंत्रण, जल का एकत्रण, सूचना तंत्र, वॉटर शेड प्रबंधन, पेयजल की उपलब्धता आवश्यक हैं।

संसार में जल की स्थिति

नल से जल

पृथ्वी पर जल का अनुमान 1.4 BCM जिसमें से केवल 1 प्रतिशत जल चक्र में प्रविष्ट होता है जो वर्षा या बर्फ वृष्टि से, मिट्टी से इनफिल्ट्रेट होकर नदियों द्वारा समुद्र में और पुनः वाष्पीकरण हो जाता है। पृथ्वी के समस्त का केवल 2.5 प्रतिशत शुद्ध जल है और इसमें से भी 0.5 प्रतिशत सीधे उपयोग में और बाकी बर्फ और हिम नदियों में इकट्ठा रहता है। तात्पर्य यह है कि 1 प्रतिशत पृथ्वी के शुद्ध जल का केवल 3/10 भाग नदियों, झीलों में जल के मुख्य श्रोत के रूप में प्राप्त है। यह श्रोत मानव इतिहास से चला आ रहा है। जो भी हो एक करोड़ से ऊपर जनता को अपनी आधारभूत आवश्यकता पूर्ति हेतु पूरा जल नहीं मिलता। संसार के 27 देशों में जलाभाव और 16 देशों में जल की कमी पाई जा रही है। संसार में जनसंख्या द्वारा रहन-सहन के बढ़ाव द्वारा जल की माँग बढ़ती जा रही है और ये चिंता का विषय है।

भारत का जल बजट और अवरोध

जैसाकि ज्ञात है कि भारत एक विशाल देश है जो संसार की 1/6 जनसंख्या वाला, 1/50वाँ जमीन संसार की होते हुए और संसार के जल संसाधनों का 1/25वाँ भाग समेटे हुए है। देश में होने वाली वर्षा एवं हिमपात से प्राप्त जल लगभग 400 सेमी. प्रति वर्ष है। जिसमें इसका 60 प्रतिशत सतही जल के रूप में और कुछ प्रतिशत भूजल के रूप अर्थात् भारत में वर्षा का 28.3 प्रतिशत जल ही उपयोगी है। कुछ बड़ी नदियों का जलग्रहण क्षेत्र जिसका केवल 3.33 प्रतिशत जल उपयोगी है। बढ़ती हुई जनसंख्या का उपयोग सन् 1997-98 में केवल 57.8 प्रतिशत जल उपयोगी रहा और 53.2 प्रतिशत भूगर्भ जल उपयोगी रहा।

दूसरी समस्या बढ़ते हुए शहरीकरण की पानी की समस्या है। जो अनुमानतः 2050 में वर्तमान आवश्यकता से दूनी हो जाएगी। भारत की 20 बड़ी नदियों के जल क्षेत्रों से 6 नदियों का जल क्षेत्र पानी की कमी वाला है। जिसमें बड़ी तेजी से बढ़ोतरी हो रही है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था

*अ0प्रा0 आचार्य, भौमिकी विभाग, का.हि.वि.वि., वाराणसी– 221 005; आवास : भारतेन्दु भवन, चौखम्भा, वाराणसी – 221 001.

यूनिसेफ और WWF के रिपोर्टर के अनुसार भारत के गुण और मात्रा की दृष्टि से जल संसाधन की कमी का कारण जल प्रदूषण, जल संसाधन का गलत प्रबंधन और जल के उपयोग का गलत विधामन एवं नियमन है।

अक्षुण्ण विकास की अवधारणा विकास योजनाओं का मुख्य भाग पर्यावरण संरक्षण और दृढ़ संसाधन प्रबंधन है। साथ ही जनता की वर्तमान आवश्यकताएँ और भविष्य में प्रकृति से प्राप्त होने वाला संसाधन निर्बाध विकास का आधार है। निर्बाध विकास का मुख्य प्रकाश पृथ्वी के नागरिकों का प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग बिना बढ़ाए हुए अर्थात् पर्यावरण की क्षमता से अधिक आपूर्ति अनिश्चित होना है। बहुत बड़ी आधार वाली विकास योजना जो कि तरह-तरह की जल की आवश्यकता की पूर्ति करे। और उन आवश्यकताओं का ठीक-ठीक विभाजन निर्बाध कहलाता है।

जल का निर्बाध विकास

यह एक भ्रान्ति है कि जल असीमित मात्रा में स्वतंत्र रूप से प्राप्त है। वास्तविकता यह है कि इसका एक सीमाबद्ध संसाधन कार्य निर्बाध विकास के लिए अवसर चाहता है। निर्बाधता प्राकृतिक संसाधन संरक्षण एवं पर्यावरण द्वारा निरंतर विकास में आवश्यक है। कभी-कभी जल की आवश्यकता और उपलब्धता में ताल-मेल न बैठने से कमी हो जाती है। अपने जल साधनों को बचाने के लिए विशेषकर आगे की पीढ़ी के लिए हमको अपना विकास बिना कम किए करना पड़ेगा। साथ ही जल का प्रदूषण को भी ध्यान में रखना पड़ेगा।

निर्बाध जल संसाधन प्रबंधन के मुद्दे

जल की कमी अनवरत विकास का बड़ा सबब है। इस ज्वलंत समस्या के निवारण हेतु कई उपाय मिले है। इन उपायों में समन्वित जल संसाधन प्रबंधन, वर्षा जल का उपयोग, अनुपयोगी जल का पुनर्भरण, जल की नुकसान की कमी, भूजल का विकास एवं प्रबंधन, जल क्षेत्रों में आपसी जल का स्थानांतरण, पर्यावरणीय बहाव की आवश्यकता, जल की गुणवत्ता और स्वास्थ्य, सामुदायिक सहभागिता क्षमता का निर्माण तथा प्रबंधन का आंकड़ों पर मुख्य नियामक हैं। समन्वित जल संसाधन एक क्रिया है जो विकास संयोजन एवं प्रबंधन, भूमि का और संबंधित संसाधनों का जो समाज कल्याण और आर्थिक कल्याण ऐसा करें कि मुख्य पारिस्थितिक प्रणाली को बचाए रखने के लिए तीन प्रकार से समझा जा सकता है-

1. जल के विभिन्न आयामों का सुनियोजित विकास अर्थात् सतही और भूजल का गुणवत्ता और मात्रा दोनों का संयोजन।
2. जल और भूमि एवं पर्यावरण के मध्य समस्या इस दृष्टि से कि किसी एक संसाधन में बदलाव दूसरे को प्रभावित कर सकता है।
3. जल को भूमि संसाधन का आपसी संबंध साथ ही सामाजिक और आर्थिक विकास जल प्रबंधन के लिए इन्हीं संदर्भों में हस्तक्षेप आवश्यक है।

इस समन्वय के लिए सर्वप्रथम जल क्षेत्र के अंदर अन्य क्षेत्रों को समझने की जरूरत है। इसके लिए आवश्यक है जल संसाधनों की प्राप्ति, जल प्रदूषण, भूजल प्रबंधन, सिंचाई के संसाधनों का प्रबंधन, जल का राज्यों के आपसी विवाद तथा नदी का संरक्षण और प्रबंधन। इन सबके लिए जल का प्रारंभिकतौर पर निर्धारण का संकल्प, पेयजल संरक्षण, जल का अन्य उपयोग जैसे-सिंचाई और उद्योगों में, बाढ़ सूखा आपदा प्रबंधन, जल के उपयोगियों की भागीदारी जो आपस में तथा राज्यों के बीच हो या केंद्र और राज्यों के बीच हो।

जल का धारणीय प्रबंधन का समन्वित विकास के लिए पूर्णरूप से लचीला करना होगा। जहाँ पर वाटर शेड डब्ल्यू आर एम की एक इकाई है और भूजल तथा सतही जल आपस में जुड़े हैं और भू उपयोग और प्रबंधन से संबंधित हैं। वहीं वाटर शेड प्रबंधन का उद्देश्य एक समन्वित उपयोग करना होता है।

वर्षा जल संवलन

अनेक क्षेत्रों में भूजल के उपयोग द्वारा इसका स्तर गिरता है और पुनर्भरण की आवश्यकता होती है वहाँ वर्षा जल संवलन एक अच्छा हल है। इसकी प्रविधि अनेक प्रकार की है और इससे बाढ़ का भी नियंत्रण होता है।

अवजल का पुनः उपयोग

अवजल दो प्रकार का होता है। 1. श्याम जल जो प्रसाधन उच्छिष्टों से मिला हो और उसे साफ करने के लिए रासायनिक प्रक्रिया अपनानी पड़ती है। 2. ग्रे-वाटर जो कि घरेलू बेसिन, टोटी, आदि से गिरता है जिसकी शुद्धिकरण सरल होता है और शुद्धजल घरेलू काम में आ सकता है।

जल उपयोग प्रक्रिया में निम्नलिखित बातों का ध्यान आवश्यक है-

1. वाष्पन वाष्पोत्सर्जन- हानि जो 42 प्रतिशत होती है।
2. शुद्ध जल का अत्यधिक फैलाव।
3. सिंचाई में जल का सीपेज लॉसेस, जो 45 प्रतिशत तक होता है और कृषि में अत्यधिक मात्रा में 15 प्रतिशत की हानि होती है।
4. उद्योगों में जल उपयोग का खर्च विकसित देशों के खर्च से बहुत अधिक होता है।
5. भूजल संसाधन का महत्व विशेष है कि 50 प्रतिशत समस्त सींचित क्षेत्र भूजल पर निर्भर है। चूँकि भूजल अपने उपयोग के स्थान पर इस देश में ज्यादातर पाया जाता है, अतः इसकी उत्पादकता सतही जल से बहुत अधिक है। परन्तु इसका अंधाधुंध उपयोग जो कि पुनर्भरण से अधिक है। हमारे घरों तथा औद्योगिक संस्थाओं में कमी कर रहा है। समुद्र के किनारे शुद्ध जल का अत्यधिक उपयोग शुद्ध जल को प्रदूषित कर रहा है।

कृषि रसायनों के उपयोग द्वारा भूजल आर्सेनिक नाइट्रेट सल्फर और क्लोराइड द्वारा प्रदूषित कर रहा है। सभी विवशताओं को दूर करने के लिए उपायों में- 1. इंटर बेसिन वाटर ट्रांसफर की योजना बहुत कारगर होगी। 2. बढ़ती जनसंख्या को जल की आपूर्ति नदियों और भूजल द्वारा नियंत्रित करनी होगी। नदियों द्वारा समुद्र में मिलने वाला जल का थोड़ा हिस्सा उपयोग में लेना चाहिए। 3. सामुदायिक सहभागिता जो स्थानीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर की जाए, विशेषकर जल का प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से हो। 4. जनता में जल के उपयोग में एकरूपता हो।

सारांश- निर्बाध विकास हेतु जल संसाधन का प्रभावी प्रबंधन आवश्यक है और इसके लिए जल का उपयोग तथा जनसंख्या का विकास में सामंजस्य रखा जावे। जल का महत्व मनुष्य और पशु जीवन की दृष्टि से आर्थिक और विकास की प्रक्रियाओं में पारिस्थितिक संतुलन रखना पड़ेगा। शुद्ध जल के गुणों को बनाए रखने की आवश्यकता है अगर हम इसको बनाए रखने का संकल्प ले लें।

रजनीगंधा की लाभप्रद खेती

अतुल बत्रा एवं ए0के0 द्विवेदी*

रजनीगंधा या ट्यूब रोज (Polianthus tuberosa Linn.) एक सजावटी व सगंध कंदीय पौधा है, जिसका उद्‌भव स्थान मैक्सिको या दक्षिण अमेरिका है। भारत में पुष्प कृषि उद्योग में इसका एक उच्च स्थान है। इकहरे या दुहरे पुष्प वाले रजनीगंधा की श्वेत रंग की पुष्पीय शूकियाँ मनमोहक सुगंध के कारण वातावरण को सुवासित बना देती हैं।

रजनीगंधा की खेती

रजनीगंधा की खेती भारतवर्ष में फूल एवं सुगन्ध उद्योग के लिए बड़े पैमाने पर की जाती है। यह उष्ण तथा उपोषण जलवायु में फूलने वाला कंदीय पौधा है। पादप वर्गीकरण के अनुसार इसे ''एमेरालिडेसी'' कुल में रखा गया है (बेकर 1888, हुकर एवं जैक्सन 1895), परन्तु हचिन्सन (1960) ने इसे ''एगेवेसी'' कुल में रखा है। रजनीगंधा के क्षेत्र एवं भाषा पर आधारित कई नाम हैं- जैसे सुगंधराज (तमिल एवं कन्नड़), रजनीगंधा (संस्कृत एवं बंगाली), गुलचेरी (हिन्दी), नेलासम्पेना या वेरूसम्पेन्गा (तेलगू) आदि। इसके साथ ही इनके फूलों की पुष्प सज्जा तथा उपहार निर्मित गुलदस्तों की महानगरों जैसे बंगलोर, चेन्नई, दिल्ली व मुम्बई आदि में अत्यधिक माँग है। इकहरे पुष्पों वाली रजनीगंधा के फूल लम्बी अवधि तक ताजे बने रहते हैं। पुष्प व्यवसाय में रजनीगंधा का अपना महत्व है क्योंकि इसकी इकहरी तथा दुहरी फूल वाली किस्मों को समान रूप से प्रयोग किया जाता है तथा पुष्प सज्जा, पुष्प विन्यास तथा उपहार स्वरूप देने के लिये इसकी माँग निरन्तर बनी रहती है। रजनीगंधा की पुष्प शूकियाँ वर्ष भर उपलब्ध रहती हैं और गुणवत्ता, मौसम तथा उपलब्धता के अनुसार रु0 15/= प्रति स्पाइक की दर से विक्रेताओं द्वारा बेची जाती हैं। कांकीट (पेट्रोलियम ईथर निष्कर्ष) से प्राप्त होने वाला रजनीगंधा का शुद्ध ऑब्सल्यूट अत्यन्त मूल्यवान प्राकृतिक पुष्पीय तेल है जो आधुनिक सुगंधकों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है। दोनों प्रकार के उत्पाद, शुद्ध ऑब्सल्यूट और ऑब्सल्यूट सुगंध उद्योग में प्रयुक्त किये जाते हैं तथा इनसे उच्चकोटि के सौन्दर्य प्रसाधन तथा इत्र तैयार किये जाते हैं।

पुष्पों में पंखुड़ियों के व्यवस्थित होने के आधार पर रजनीगंधा को तीन किस्मों में वर्गीकृत किया गया है-

सिंगल

स्पाइक पर लगे फ्लोरेट में दलपुंजों का एक ही चक्र होता है।

सेमी डबुल

फ्लोरेट में दलपुंजों के 2-3 चक्र होते हैं।

डबुल

करोला या दलपुंजों के 3 से अधिक चक्र होते है।

रजनीगंधा की खेती

उपोष्णकटिबंधीय जलवायु की दशाओं में जो उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में उपलब्ध है, रजनीगंधा की संतोषजनक खेती करने के लिए निम्न विधियों को उपयोग में लाना चाहिए-

रजनीगंधा की सिंगल तथा डबल प्रजातियाँ के संकरण तथा म्यूटेशन द्वारा कई किस्में (कल्टीवर) बनायी गयी हैं, जिनको सारणी-1 में दर्शाया गया है।

जलवायु एवं मृदा

रजनीगंधा धूप वाली खुली हुई जगह में भली प्रकार से वृद्धि करता है। यह जगह वृक्षों तथा भवनों की छाया से दूर होनी चाहिए। मुख्यतः वृक्षों की छाया में, लगाये गये पौधे भली प्रकार से वृद्धि नहीं करते हैं। रजनीगंधा में मार्च से लेकर दिसम्बर तक फूल आते हैं लेकिन अगस्त से सितम्बर के मध्य में बहुतायत से फूल खिलते हैं। पुष्पन क्रिया समाप्त हो जाने के पश्चात कंद सुसुप्तावस्था में चले जाते हैं।

रजनीगंधा की कृषि विभिन्न प्रकार की मृदाओं में, यहाँ तक कि लवणीय व क्षारीय भूमि में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। फिर भी, 6.5-7.5 पी.एच. मान की अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि इसकी कृषि के लिए आदर्श मानी जाती है। आन्तरिक सज्जा के लिए इनके पौधों को 25 सेमी. आकार वाले गमलों में भी सफलतापूर्वक लगाया जा सकता हैं इसके लिए बलुई दूमट मिट्टी, पत्ती की खाद तथा भली प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद को 3:2:1 के अनुपात में मिलाकर मिश्रण तैयार किया जाता है जिसे गमलों में भरा जाता है।

खेत की तैयारी

खेत की भूमि को 30-40 सेमी. की गहराई तक भली प्रकार से जोतना या खोदना चाहिए तथा मृदा को लगभग 15 दिन के लिए खुली धूप में छोड़ देना चाहिए जिससे उसमें मौजूद सभी प्रकार के हानिकारक खरपतवार तथा कीट आदि नष्ट हो जाये। खरपतवारों को निकालने के पश्चात् भूमि को पुनः जोतना या खोदना चाहिए। तत्पश्चात भूमि की सतह

* सी.एस.आई.आर.-राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ - 226 001.

को समतल कर लेना चाहिए। अलंकारिक बागवानी करने के लिए इच्छा और सौन्दर्य के अनुरूप क्यारियों को आकार और आकृति निर्धारित की जाती है। इसमें क्यारियों के मध्य एक मीटर चौड़ी पट्टी का निर्माण किया जाता है जिससे आवागमन में सुविधा रहे और क्यारियों की भली-भाँति देखभाल की जा सके।

खाद

रजनीगंधा अधिक खुराक ग्रहण करने वाला पौधा है। इसमें कार्बनिक तथा अकार्बनिक खादों को प्रयुक्त करने पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। भली-भाँति सड़ी गोबर की खाद को 10 किग्रा. प्रति वर्ग मी. की दर से क्यारियों की मिट्टी में मिलाया जाता है। इसी के साथ आधारभूत खुराक के रूप में 80 ग्राम प्रति वर्ग मी. की दर से सिंगल सुपर फास्फेट तथा म्यूरेट ऑफ पोटाश को भी मिलाया जाता है। यह सभी खादें कंद रोपण से 10-15 दिन पूर्व मिट्टी में मिला दी जाती है। क्यारियों की सिंचाई की जाती है जिससे मिट्टी भली प्रकार से बैठ जाये। इसके उपरान्त कंद रोपण से पूर्व क्यारियों की सतह को समतल कर लिया जाता है। लवणीय भूमि की अवस्था में पौधे की अच्छी वृद्धि के लिए 77 किग्रा. नत्रजन, 51 किग्रा. फास्फोरस तथा 36 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टर की दर से उपयोग में लाना लाभकारी सिद्ध हुआ है। इसी भाँति 25 सेमी. के गमलों में रजनीगंधा के स्वस्थ पौधे तैयार करने के लिए 5 ग्राम प्रत्येक सिंगल सुपर फास्फेट तथा म्यूरेट ऑफ पोटाश को मिट्टी के मिश्रण में कंद रोपण से पूर्व मिलाना चाहिए।

पर्ण पोषण

रजनीगंधा एक कंदीय पौधा है जिसमें बहुत अधिक पत्तियाँ होती हैं, अतः मृदा में उर्वरक देने के अतिरिक्त पत्तियों पर भी उर्वरकों का छिड़काव करने से लाभ होता है। पौधों में वानस्पतिक वृद्धि शुरू हो जाने के उपरान्त प्रत्येक पखवाड़े में एक बार तथा कुल 16 बार पत्तियों पर उर्वरकों का छिड़काव करके पर्ण पोषण का कार्य किया जाता है। एक एकड़ भूमि के लिए 400 लीटर जल में यूरिया (0.783 किग्रा.), डाइअमोनियम हाइड्रोजन आरथोफास्फेट (1.500 किग्रा.) तथा पोटैशियम नाइट्रेट (0.875 किग्रा.) के साथ एक स्प्रेडर (टी पॉल) को 0.1 प्रतिशत की दर से उपयोग करना चाहिए। इस प्रकार पर्ण पोषण करने से वानस्पतिक वृद्धि को लाभ पहुँचता है तथा फूलों की शूकियाँ लम्बी तथा सुदृढ़ होती हैं। प्रत्येक पुंज में अधिक संख्या में कंद तथा कंदिकाएँ बनती हैं। पुष्पन क्रिया अच्छी होती है और गुणात्मक तथा संख्यात्मक रूप से अच्छे फूल आते हैं।

क्र.सं.	कल्टीवर	दलपुंजों की स्थिति	शोध स्थान	गुण
1.	रजता रेखा	सिंगल	एन.बी.आर.आई.ङ, लखनऊ गामा किरणों के उपचार द्वारा सिंगल किस्म में विकसित	पत्तियों के मध्य में सफेद रेखा (वेरीगेटेड पत्ती), पुष्पण सामान्य सिंगल किस्म की तुलना में कम गृह - सज्जा में विशेष उपयोगी।
2.	स्वर्ण रेखा	डबल	एन.बी.आर.आई., लखनऊ डबल किस्म को गामा किरणों से उपचारित करके विकसित	पत्तियों के दोनों किनारों पर पीली रेखा, पुष्पण में कमी प्रायः शीर्षस्थ पुष्प नहीं खिल ते-वेरीगेटेड पत्ती, सजावट विशेष रूप से गृहसज्जा में उपयोगी।
3.	श्रृंगार	सिंगल	आई.आई.एच.आर.ङङ, बंगलौर, मैक्सिकन सिंगल तथा डबल के संकरण द्वारा विकसित	फूल का आकार सिंगल किस्म के फूल से बड़ा, पुष्प कलिका पर हल्का गुलाबी रंग होने से अधिक आकर्षक (सिंगल फूल की कलिका पर हल्का हरा रंग होता है), फूल की पैदावार (1500 किलो प्रति हे. प्रतिवर्ष) सिंगल किस्म से 40 प्रतिशत अधिक कंक्रीट सिंगल किस्म के बराबर (0.3 प्रतिशत) परन्तु अधिक पुष्प पैदावार के कारण किसानों द्वारा अपनायी गई।
4.	सुवासिनी	डबल	आई.आई.एच.आर.,बंगलौर, मैक्सिकन सिंगल तथा ड बल के संकरण द्वारा विकसित	सफेद फूल, मूल डबल किस्म की तुलना में फूल बड़े एवं अधिक खिलते हैं तथा 25 प्रतिशत अधिक उत्पादन देते हैं।
5.	प्रज्जवल	सिंगल	आई.आई.एच.आर., बंगलौर, श्रृंगार एवं मैक्सिकन सिंगल के संकरण द्वारा विकसित	"श्रृंगार" से 22 प्रतिशत अधिक पुष्प उत्पादन, स्पाइक लम्बी 37 प्रतिशत, वजनी पुष्पी 17 प्रतिशत
6.	वैभव	डबल	आई.आई.एच.आर., बंगलौर, सुवासिनी एवं मैक्सिकन डबल के संकरण द्वारा विकसित	श्वेत पुष्प, सुवासिनी से 50 प्रतिशत अधिक स्पाइक उत्पादन, पुष्प कलिका हरी (सुवासिनी में गुलाबी), स्पाइक की लम्बाई मध्यम आकर की (प्रज्जवल से कम)

* सारणी-1 *राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ; (**भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगालुरु)

रजतरेखा

स्वर्णरेखा

संस्थान द्वारा विकसित रजनीगंधा की किस्में

रोपण

रजनीगंधा की अच्छी फसल लेने के लिए यह आवश्यक है कि रोपण के लिए कंदों का चयन भली प्रकार किया जाए। स्पिन्डिल (तकली) की आकृति वाले भली प्रकार से विकसित, 1.5 सेमी. या उससे अधिक व्यास वाले कंद जो पौधों के पुंजों की परिधि पर बनते हैं, कंद रोपण के लिए अच्छा समझा जाता है। यद्यपि 2.0-3.5 सेमी. व्यास वाले कंदों को एक समय पर रोपण कराकर अधिक समय तक अच्छी श्रेणी के फूल लिए जा सकते हैं। उपोष्णकटिबंधीय भागों में भली प्रकार से तैयार की गयी क्यारियों में कंदों को मार्च-अप्रैल में लगाया जाता है। कंदों को 20-30 सेमी. की दूरी पर इस प्रकार लगाया जाता है कि उनका ऊपरी वृद्धि भाग की सतह पर रहे। अलंकारिक बागवानी करने के लिए कंदों को औपचारिक क्यारियों में 30 सेमी. की परस्पर दूरियों पर लगाया जाता है जिससे क्यारियों का आकर्षण बना रहे।

यह देखा गया कि पौधों के पुंजों का रोपण करने से वानस्पतिक वृद्धि अधिक होती है जबकि फूलों की उत्तम गुणों वाली शूकियाँ प्राप्त नहीं हो पाती हैं। अतः इस प्रकार के रोपण से बचना चाहिए। जब रजनीगंधा को गमलों में लगाया जाता है तब कंदों को गमले के केन्द्र में अकेले ही लगाना चाहिए।

कंद रोपण के तत्काल पश्चात् ही क्यारियों की भली प्रकार से सिंचाई की जाती है जिससे कि कंद क्यारियों में भली प्रकार से स्थापित हो जायें। क्यारियों की सिंचाई इस प्रकार करनी चाहिए कि क्यारियों में नमी बनी रहे। इसके पश्चात मौसम को ध्यान में रखते हुए क्यारियों की सिंचाई करनी चाहिए। ग्रीष्मकाल में क्यारियों की सिंचाई प्रत्येक सप्ताह या कम अवधि में करनी चाहिए तथा शीतकाल में 10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। बार-बार सिंचाई करने की अपेक्षा एक बार भारी सिंचाई करना अच्छा रहता है। पौधों की पत्तियाँ जब पीली पड़ कर सूखने लगे तो सिंचाई कम कर देना चाहिए इससे कंदों को परिपक्व हाने में सुविधा रहती है।

अन्तः सस्य कार्य

खेतों तथा क्यारियों की नियमित निराई करके साफ रखना चाहिए। यह कार्य माह में एक बार किया जा सकता है। खेतों को साफ-सुथरा रखने से पौधे स्वस्थ रहते हैं और प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

रजनीगंधा के कंद अपेक्षाकृत अधिक सहिष्णु होते हैं और सामान्य रूप से ही भण्डारित किये जा सकते हैं। उत्तर भारत के मैदानों में जहाँ उपोष्णकटिबंधीय जलवायु पाई जाती है, रजनीगंधा के पौधों की पत्तियाँ जब सूखकर पीली पड़ने लगती हैं और पौधों की वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है तब इनके पौधों के पुंजों की खुर्पी की सहायता से खोद लिया जाता है। पौधों के पुंजों में लगी हुई मिट्टी को भली प्रकार से साफ करके सूखी पत्तियों को हाथ की सहायता से पृथक कर दिया जाता है। सभी पुंजों को खेत के तापमान पर शुष्क छायादार स्थान पर फैला दिया जाता है। पुंजों को कभी भी ढेर लगाकर भण्डारित नहीं किया जाता है क्योंकि ऐसा करने से कम वायु संचार के कारण कंद सड़ने लगते हैं।

गमलों में लगे हुए पौधों को निकालने के लिए गमलों को उलट दिया जाता है और पौधों को निकाल लिया जाता है। इसके पश्चात् मिट्टी के मिश्रण में से रजनीगंधा के पुंजों को मिट्टी साफ करके अलग कर लिया जाता है। तत्पश्चात् उपरोक्त विधि से पुंजों को भण्डारित कर लिया जाता है। पौधों के पुंजों में से सभी कंदों को अलग करके उन्हें आकार और परिपक्वता के आधार पर परिपक्व (1.5 सेमी. व्यास से ऊपर) तथा अपरिपक्व (1.5 सेमी. व्यास से कम) की श्रेणियों में विभक्त कर लिया जाता है।

उष्ण तथा समुद्र तटीय जलवायु की दशाओं के विपरीत, उत्तर भारत के मैदानी भागों की उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में रजनीगंधा के पौधों की शीतकाल में कोई वृद्धि नहीं होती है और जनवरी के मध्य तक पौधे सुसुप्तावस्था में चले जाते हैं। यह पौधों की पत्तियों के पीला पड़ने से प्रतीत होता है। अत्यधिक शीत होने पर पौधे की सभी पत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं। पुनः कंद रोपण के लिए इन कंदों को खोदने का यह सबसे अच्छा समय है। रजनीगंधा की रटून फसल भी ली जाती है। इसके पौधों को खोदने के बजाये खेत में ही पड़े रहने दिया जाता है। शेष अन्तः सस्य क्रियायें आदि नियमित रूप से की जाती हैं। लेकिन शूकियों की लम्बाई, फूलों की संख्या तथा ताजे फूलों का भार घट जाता है। अतः कटफ्लावर व्यापार की दृष्टि से तीसरे वर्ष में नया कंद ही रोपण करना चाहिए। रटून फसल से प्राप्त फूलों को संगंध तेल के निष्कर्ष के लिए प्रयोग करना चाहिए व छुट्टे फूलों को पुष्पसज्जा के उद्देश्य से बेचना चाहिए। रटून फलस लेने के बाद कंद इतने घने हो जाते हैं कि उनको निकालकर दुबारा रोपने के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं रह जाता है जिससे अच्छी फलस ली जा सके।

सक्रिय करना

उपोष्णकटिबंधीय जलवायु की दशा में खेतों में सुसुप्तावस्था में लगे रजनीगंधा के पुंजों को सक्रिय अवस्था में लाने के लिए उत्प्रेरित करने की आवश्यकता होती है जिससे इच्छानुसार रटून फसल प्राप्त की जा सके। इससे पुष्पों की शूकी को जल्दी खिलने में सहायता होती है जबकि खेतों में लगे पौधों में साधारणतया देर से पुष्प आते हैं। यह देखा गया है कि आंशिक रूप से सुसुप्तावस्था में पहुँचे रजनीगंधा के कंदों में जनवरी माह में खाद डालकर सिंचाई करने से पौधे जाग्रत हो जाते हैं।

पोषण जन्य विसंगतियाँ

रजनीगंधा की फसल पर उर्वरकों को अच्छा व व्यापक असर पड़ता है लेकिन फसल में आवश्यकता से अधिक नाइट्रोजन खाद का उपयोग करने से फूलों की शूकी अपेक्षाकृत अधिक लम्बी व कोमल हो जाती है जो हवा के प्रवाह से आसानी से टूट जाती है। साथ ही पौधे रोग तथा कीड़ों से अधिक प्रभावित होते हैं। फूलों के गुणों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

सिंचाई

कंदों के बुआई के उपरान्त हल्की सिंचाई कर देना चाहिए। सात से दस दिन में कंदों से कल्लों का अंकुरण प्रारम्भ हो जाता है। इस समय एक

ISSN 2231 - 2455

हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। अन्य सिंचाइयाँ मौसम के अनुसार 10 से 20 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

पुष्प कटाई

पुष्पों का आगमन कंदों के रोपण से 60-90 दिनों बाद प्रारम्भ हो जाता है तथा जाड़े तक चलता रहता है। स्पाइक को तेज चाकू या ब्लेड से काटकर 100-100 के बन्डल बनाकर पुष्प बाजार में विक्रय हेतु भेजा जाता है।

रोग एवं निवारण

रजनीगंधा के पौधों में रोग का प्रकोप नहीं के बराबर होता है। अच्छी रोगमुक्त फसल हेतु कंदों के रोपण से पूर्व इसे 0.25 प्रतिशत कैप्टान (फफूंदीनाशक) के घोल में डुबोकर लगाने से कवकजनित रोग उत्पन्न नहीं होते हैं। रजनीगंधा अधिक पानी पसंद नहीं करता, अतः क्यारियों में पानी का अधिक भराव नहीं होना चाहिए अन्यथा कंद सड़ जाने की सम्भावना रहती है। रजनीगंधा में हल्की सिंचाई की वांछित है।

रजनीगंधा में माहू आदि का आक्रमण होता है। विशेष रूप से लम्बे समय तक आकाश में बादल आदि छाये रहने पर या समुचित धूप न मिलने पर इसके निवारण हेतु 0.25 प्रतिशत मैलाथियान के घोल का छिड़काव करना चाहिए। टिड्डे नई पत्तियों एवं फूलों को प्रभावित करते हैं। 5 प्रतिशत कान्फीड्योर का छिड़काव करके इसे रोका जा सकता है। लाल चीटियाँ अत्यन्त सूक्ष्म जीव हैं जो पत्तियों की निचली सतह पर मिलते हैं। यह पौधों का रस चूसकर पत्तियों को पीला या सफेद, भूरा बना देती है। 0.2 प्रतिशत केलथेन या मोनोक्रोटोफास के छिड़काव द्वारा इन्हें नियंत्रित किया जा सकता है।

कुपोषण का प्रभाव

खेत में अधिक नाइट्रोजन होने से स्पाइक लम्बी व कोमल हो जाती है जो तेज हवा में टूट सकती है। अतः उन खेतों में जिसमें दलहनी फसलों के बाद रजनीगंधा की खेती की जा रही है, नाइट्रोजन की मात्रा कम कर दें (लगभग 1/3), नाइट्रोजन की कमी से स्पाइक की संख्या तथा स्पाइक पर फ्लोरेट की संख्या में कमी आ जाती है। फास्फोरस की कमी के कारण पौधों की ऊपरी पत्तियाँ गहरे हरे रंग की तथा नीचे की पत्तियों पर बैंगनी रंग के धब्बे आने लगते हैं। कैल्शियम की कमी से स्पाइक फटने लगती है। मैग्नीशियम की कमी से पुरानी पत्तियों की शिराओं में क्लोरोसिस हो जाती है तथा आइरन की कमी के कारण नई पत्तियों में क्लोरोसिस होती है।

रजनीगंधा की खेती से एक अच्छा लाभ कमाया जा सकता है। इस दिशा में वनस्पति उद्यान सी.एस.आई.आर.-राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने शोधकार्य किये हैं तथा इसकी तकनीकों, आर्थिक पहलुओं में प्रकाश डाला जा चुका है। भारतीय कृषकों के लिए यह एक उत्तम फसल है एवं इसकी खेती कर फूलों एवं बल्ब से रु0 1.35 लाख प्रति हेक्टेयर का लाभ अर्जित किया जा सकता है।

पाँच रुपये खर्च में ब्लड शुगर की जाँच

आने वाले दिनों में मधुमेह (डायबिटीज) रोगियों के ब्लड शुगर की जाँच सस्ती और आसान होगी। उन्हें बार-बार लैब जाने की जरूरत नहीं पड़ेगी और न ही 50-100 रुपये हर बार खर्च करने पड़ेंगे। मात्र पाँच रुपये की एक स्ट्रिप से वे घर बैठे खुद ही ब्लड शुगर जाँच सकेंगे। साल के अंत तक यह स्ट्रिप दवा दुकानों पर उपलब्ध होने की संभावना है।

देशभर में मधुमेह की जाँच के लिए दो साल पूर्व सरकार ने सस्ती जाँच किट लाने का एलान किया था। मधुमेह के क्षेत्र में कार्य कर रही दवा कंपनियों से कहा गया था कि वे सस्ता ग्लूकोमीटर और स्ट्रिप विकसित करें। खबरों के अनुसार इस कड़ी में बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (बिट्स), पिलानी के हैदराबाद कैंपस के विशषज्ञों ने एक नई तकनीक की सस्ती किट विकसित कर स्वास्थ्य मंत्रालय को सौंपी है। इसके बाद मंत्रालय ने उपकरण को बनाने की जिम्मेदारी 'सूत हेल्थकेयर' को दी है। अब सूत हेल्थकेयर ने इसे तैयार कर लिया है और इस साल के अंत तक यह किट बाजार में उपलब्ध हो जायेगी। कंपनी के प्रबंध निदेशक साहिल धारिया के अनुसार यह विश्व की सबसे सस्ती और भरोसेमंद जाँच किट होगी। इस समय बाजार में उपलब्ध किट की कीमत - ग्लूकोमीटर रु0 2500 तथा प्रति स्ट्रिप रु0 25 है, जब कि नई किट की कीमत - ग्लूकोमीटर रु0 1000 तथा प्रति स्ट्रिप रु0 5 की होगी।

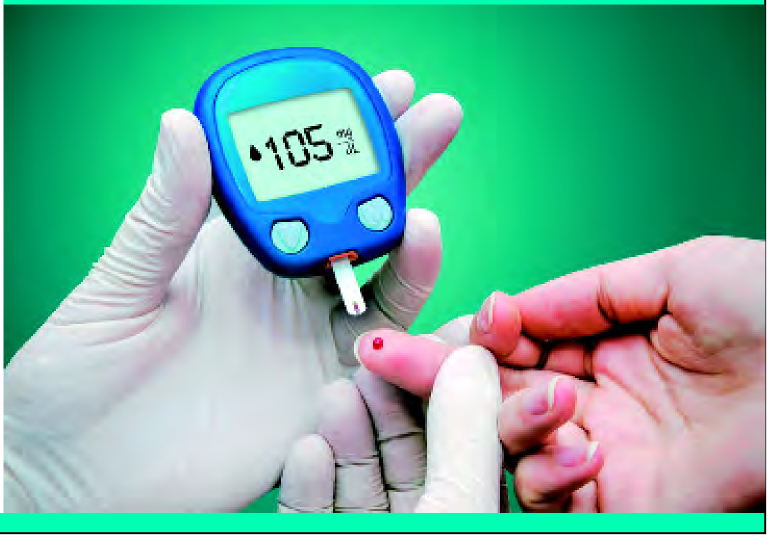

विज्ञान प्रवाह

विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी*

विश्व में विज्ञान में अनुसंधानों का प्रवाह निरन्तर होता रहता है। अनुसंधानों के निष्कर्ष सामने आते रहते हैं। उनमें से कुछ अनुसंधानों की संक्षिप्त चर्चा यहाँ प्रस्तुत है-

1. ऐसे होता है जानवरों को भूकंप का पूर्वाभास

एक लोककथा है जिसमें भूकंप आने से पूर्व चूहे शहर छोड़ जाते हैं। एक अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान बताता है कि वह लोककथा मात्र कल्पना नहीं होकर कोई सत्य घटना रही होगी। जानवरों को भूकंप आने की जानकारी भूकंप आने से बहुत पहले हो जाती है। पेरू देश के एक राष्ट्रीय पार्क में लगे कैमरे में अंकित जानवरों की गतिविधियों के रिकॉर्ड का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला गया है। 2014 में उस क्षेत्र में 7 इकाई का भूकंप आया था।

राष्ट्रीय पार्क में किसी भी सामान्य दिन 5 से 15 जानवर कैमरे में रिकॉर्ड होते थे, मगर भूकंप आने के 23 दिन पहले से ही कैमरे में प्रतिदिन दिखने वाले जानवरों की संख्या घटकर 5 से भी कम हो गई थी। भूकंप आने के 5-7 दिन पहले से तो जानवरों का कैमरे में दिखाई देना बिल्कुल बंद हो गया था। वर्षा वन से ढ़के पर्वतीय क्षेत्र में जानवरों का नहीं दिखाई देना बहुत ही असामान्य घटना थी। जानवर क्षेत्र छोड़कर चले गए थे या सुरक्षित स्थान पर छुप गए थे।

ब्रिटेन के एंजिला रस्किन विश्वविद्यालय में पर्यावरण जीवविज्ञान की व्याख्याता डॉ0 राचेल ग्रान्ट ने यह अध्ययन किया था। ग्रान्ट का कहना है कि जानवरों को भूकंप आने की पूर्व सूचना, सम्भवतः हवा में बड़ी संख्या में उपस्थित धनावेशित कणों से मिलती है। भूमि के नीचे चट्टानों में तनाव उत्पन्न होने पर हवा में धनावेशित कणों की उत्पत्ति होती है। चट्टानों के बीच का तनाव ही बाद में भूकंप का कारण बनता है।

धनावेशित कण जन्तुओं को रास नहीं आते। मानव पर भी इनका विपरीत प्रभाव होता है। धनावेशित कणों के असन्तुलन से उत्पन्न प्रभाव को सेरेटोनिन सिन्ड्रोम कहते हैं। सेरेटोनिन एक हारमोन है जो जीवों के मूड का नियन्त्रण करता है। सेरेटोनिन सिन्ड्रोम में जीव को सिरदर्द, जी मचलाना, उद्विग्नता, बेचैनी आदि समस्याएँ होने लगते हैं। धनावेशित कणों में पहाड़ की चोटी पर संग्रहित होने की प्रवृति होती है। बचने के लिए जानवर पहाड़ से नीचे की ओर चले जाते हैं। डॉ0 राचेल ग्रान्ट ने जिस राष्ट्रीय उद्यान के जानवरों का अध्ययन किया वह भूकंप के केन्द्र से 350 किलोमीटर दूर था, फिर भूकंप से पहले ही उस क्षेत्र में जानवरों की संख्या बहुत कम हो गई थी।

भूकंप के पूर्व जानवरों की गतिविधियों के साथ-साथ वातावरण में भौतिक परिवर्तन भी रिकॉर्ड किए गए थे। भूकंप केन्द्र के पास बहुत कम आवृति की रेडियो तरंगें उत्पन्न हुई थीं। इन तरंगों के कारण आयनोस्फीयर में उत्पन्न विक्षोभ रिकार्ड किया था। बड़ा भौतिक परिवर्तन भूकंप से 8 दिन पूर्व रिकॉड किया गया। यह समय जानवरों के उस क्षेत्र में पलायन के समय से मेल खाता है।

डॉ0 राचेल ग्रान्ट का कहना है कि भूकंप के पूर्व जानवरों के इस व्यवहार में परिवर्तन में कोई दैवीय चमत्कार ढूँढने का प्रयास नहीं करना चाहिए। यह एक वैज्ञानिक घटना है। प्रकृति से दूर होकर मानव अपनी संवेदनाएँ खो चुका है। इस कारण मानव में भूकंप पूर्व के प्रभाव नगण्य से होते हैं।

वर्षा वन में भूकंप पूर्व की चेतावनी को ग्रहण करने में चूहे सर्वाधिक संवेदनशील पाए गए हैं। चूहे ही सबसे पहले क्षेत्र से दूर जाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि भूकंप से एक सप्ताह पूर्व से कैमरे में एक भी चूहा नहीं दिखाई दे रहा था जबकि वर्षा वन में सर्वाधिक संख्या चूहा जाति के जीवों की होती है। यह बात पुरानी लोककथा की पुष्टि करती है कि भूकंप आने से पूर्व चूहे शहर छोड़ चले जाते हैं।

यह अध्ययन चीन व जापान में हुए अध्ययनों की पुष्टि करता है। उन अध्ययनों में पाया गया था कि भूकंप से पूर्व चूहों की जैविक घड़ी (सर्केडियन रिथम) गड़बड़ाने लगती है। उनके सोने-जागने की दिनचर्या अनियमित होने लगती है। भूमि पर रहने वाले पक्षियों में भी भूकंप के प्रति संवेदनशीलता देखी गई है। एक रोचक तथ्य यह सामने आया कि भूकंप समाप्त होने पर क्षेत्र में सबसे पहले दिखने वाले जीव अर्माडिलों थे। सम्भवतः वे समीप में ही छुपे होते हैं जो खतरा टलते ही प्रकट हो जाते हैं। ब्राजील में हुए कुछ अध्ययन बताते हैं कि जल पर तैरने वाली सूक्ष्म वनस्पतियों (प्लांकटन) में भी भूकंप के प्रति संवेदनशीलता पाई जाती है।

*पूर्व प्रधानाचार्य, 2 तिलक नगर, पाली- 306 406 (राजस्थान).

ISSN 2231 - 2455

भूकंप के पूर्व जल में होने वाले रसायनिक परिवर्तनों से ये सूक्ष्मजीव प्रभावित होते हैं।

चूहे में संवेदनशीलता

जानवरों में भूकंप के प्रति इतनी संवेदनशीलता देखने के बाद भी वैज्ञानिक जानवरों के व्यवहार को भूकंप की एकमात्र चेतावनी स्वीकारने के पक्ष में फिलहाल नहीं हैं। वैज्ञानिकों का मानना है कि जानवरों का व्यवहार भू-भौतिकी मापन के साथ ही सहायक सिद्ध हो सकता है।

2. सीखना होगा आसान

कुछ लोग बिना थके मीलों दौड़ लेते हैं तो कुछ लोग ढेरों कविताएँ, गणित के सूत्र, पहाड़े आदि याद कर लेते हैं। ऐसा लगता है कि कुछ लोग दौड़ने तो कुछ याद करने के लिए ही बने हैं। नए अनुसंधान बताते हैं कि दौड़ना व याद करने में कोई बड़ा अन्तर नहीं है। दोनों ही ऊर्जा जनित क्रियाएँ हैं। साल्क संस्थान के वैज्ञानिकों व उनके सहयोगियों ने खोज निकाला है कि शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार की गतिविधियाँ एक ही उपापचय प्रोटीन से नियंत्रित होती हैं। कोशिका उपापचय अनुसंधान पत्रिका 'सेल मेटाबोलिज्म' में छपी एक रिपोर्ट के अनुसार यह प्रोटीन रुधिर व पोषकों के प्रवाह का नियंत्रक है। स्पष्ट है कि दौड़ना हो या याद करना आवश्यकता के अनुसार ऊर्जा की पूर्ति प्रमुख बात है। दौड़ने के लिए हृदय की माँसपेशियों को अधिक ऊर्जा चाहिए तो याद करते समय मस्तिष्क के न्यूरोन्स को अधिक ऊर्जा चाहिए। वैज्ञानिकों ने पाया है कि ऊर्जा हृदय को चाहिए या मस्तिष्क को, ऊर्जा पूर्ति का नियंत्रण एक ही प्रोटीन करता है जिसका नाम एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा (Estrogen-Related Receptor Gamma) है।

साल्क संस्थान की जीन अभिव्यक्ति प्रयोगशाला के निदेशक रोनाल्ड इवांस के अनुसंधान समूह ने 2011 में हृदय माँसपेशियों पर एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन के प्रभाव का अध्ययन किया था। अध्ययन दल ने पाया कि चूहे की हृदय माँसपेशियों में एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन की गतिविधि बढ़ने के साथ हृदय माँसपेशियों में रुधिर प्रवाह बढ़ जाता है। इससे चूहे की दौड़ने की क्षमता दुगनी हो जाती है। वैज्ञानिकों ने पाया है कि एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन कोशिकाओं में वसा को ऊर्जा में बदलने वाली सभी जीनों को प्रभावित करता है। इस खोज के बाद से एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा

प्रोटीन माँसपेशियों को ऊर्जा प्रदान करने व प्रदर्शन की क्षमता बढ़ाने का मुख्य स्विच कहलाने लगा है। एक अन्य अनुसंधान में इन वैज्ञानिकों ने एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन को मस्तिष्क में सक्रिय देखा तो वे यह समझ नहीं पाए कि गामा प्रोटीन वहाँ क्या कर रहा था। जीववैज्ञानिक तथ्य यह था कि मस्तिष्क ग्लूकोज से ऊर्जा उत्पन्न करता है और माँसपेशियाँ वसा से। एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन वसा से ऊर्जा उत्पन्न करने में सहायक पाया गया था।

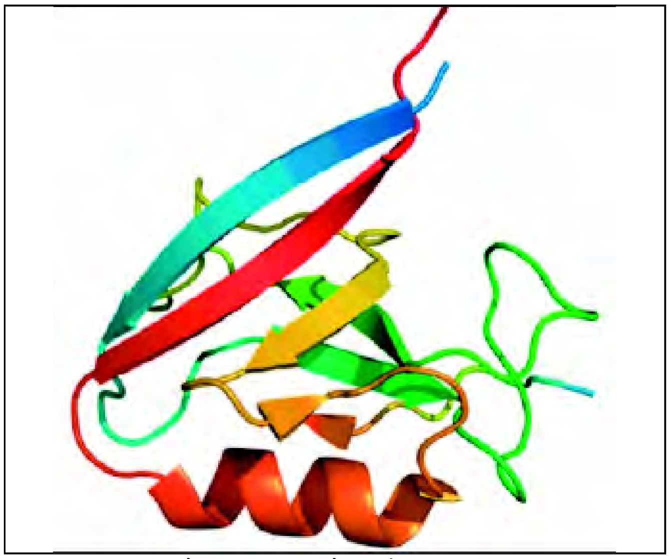

प्रोटीन की संरचना को प्रदर्शित करता चित्र

साथी वैज्ञानिक लिमिंग पेई ने एक विलगित न्यूरोन के अध्ययन से ज्ञात किया है कि एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन माँसपेशियों की तरह ही मस्तिष्क कोशिकाओं की दर्जनों जीन को प्रभावित करता है। आश्चर्य इस बात का है कि मस्तिष्क में यह ग्लूकोज से ऊर्जा उत्पादन को प्रभावित करता है। यह भी पाया गया कि जिन न्यूरोन्स में एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन की कमी होती है वे पर्याप्त ऊर्जा के अभाव में अच्छा कार्य नहीं कर पाते हैं।

वैज्ञानिकों का यह अनुमान गलत निकला कि एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन सम्पूर्ण शरीर में वसा से ऊर्जा उत्पादन करते हैं। रोनाल्ड इवांस ने पाया कि एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन मस्तिष्क के हिप्पोकैम्पस भाग में अधिक सक्रिय होता है। हिप्पोकैम्पस मस्तिष्क का वह भाग है जहाँ नई कोशिकाएँ बनती हैं, हिप्पोकैम्पस का संबंध सीखने व स्मरण करने से भी है। इस कारण हिप्पोकैम्पस को बहुत अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि सीखने व स्मरण करने में एस्ट्रोजन संबंधी ग्राही गामा प्रोटीन की कोई सीधी भूमिका है या नहीं? इन वैज्ञानिकों का अध्ययन इस बात की ओर संकेत तो करता है कि इनमें कोई संबंध अवश्य है। देखा गया है कि इस गामा प्रोटीन की सामान्य मात्रा वाले चूहे की तुलना में प्रोटीन की कमी वाले चूहे की दृष्टि पर तो कोइ विपरीत प्रभाव नहीं होता मगर उसके सीखने की गति कम हो जाती है। उसे रास्तों के टेढ़े-मेढ़े मोड़ याद नहीं रहते हैं।

हर व्यक्ति सीखता है, कोई जल्दी तो कोई धीमे सीखता व याद रखता है। वैज्ञानिक लिमिंग पेई का कहना है कि सीखने की गति में अन्तर का कारण मस्तिष्क की उपापचयी क्रिया में अन्तर हो सकता है। न्यूरोन्स के

उपापचय को समझने से, सीखने व याद रखने में होने वाली कठिनाई के कारण को समझने व उसका इलाज करने में सहायक हो सकता है। जब गामा प्रोटीन से माँसपेशियों की सक्रियता बढ़ाई जा सकती है तो मस्तिष्क की क्यों नहीं बढ़ाई जा सकती?

वैज्ञानिकों का मानना है कि याददास्त उपापचय के बल पर कार्य करती है। सीखने व याद करने की क्रिया को समझने के लिए आवश्यक है कि हम उन मार्गों को समझें जिनसे उसे ऊर्जा मिलती है। इस अध्ययन से पुनर्जनी एवं परिवर्धन औषधियों के विकास में मदद मिलेगी। सीखने व याद रखने की परेशानियों को दूर किया जा सकेगा। साल्क संस्थान की साख को देखते हुए ऐसा जल्दी ही होने की आशा की जा सकती है।

3. श्वॉस से जाँचा जाएगा मलेरिया

आस्ट्रेलिया के वैज्ञानिकों ने श्वास की जाँच कर मलेरिया का पता लगाने की विधि खोजने का दावा किया है। राष्ट्रकुल विज्ञान व औद्योगिक अनुसंधान संस्थान द्वारा कराए गए परीक्षण में नियंत्रित स्थितियों में स्वयं सेवकों को मच्छरों से कटवाया गया। प्रयोग में पाया गया कि मलेरिया से संक्रमित व्यक्ति की श्वॉस साथ चार गंधकयुक्त यौगिक पाए जाते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने के साथ गंधकयुक्त यौगिकों की सान्द्रता श्वॉस में बढ़ती जाती है। मानव नाक उन्हें सूँघ नहीं पाती, मगर उपकरणों से पहचाने जा सकते हैं। गंधकयुक्त यौगिक मलेरिया संक्रमण के प्रारम्भ में ही बनने लगते हैं। जाँच दल का नेतृत्व कर रहे स्टेफेन ट्रोवेल का कहना है कि कोई अन्य जाँच इतने प्रारम्भ में मलेरिया की सूचना नहीं दे सकती। रक्त जाँच भी नहीं। वैज्ञानिक सस्ता व विशिष्ट जैव-संवेदक विकसित करने में भी लगे हैं जो रोग तीव्र होने के पहले ही मलेरिया संक्रमण की जानकारी दे देगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन से प्राप्त जानकारी के अनुसार वर्ष 2013 में मलेरिया संक्रमण के 20 करोड़ प्रकरण सामने आए तथा 5 लाख लोगों के प्राण मलेरिया ने लिए थे।

हथेली से जान सकेंगे अपनी सेहत का हाल

कहते हैं कि हथेली देखकर भविष्य जाना जा सकता है। पर एक शोध में पाया गया है कि हथेली से किसी की सेहत का हाल भी जाना जा सकता है क्योंकि कई तरह की बीमारियों का असर हथेली पर भी पड़ता है। केयरिंग डॉट कॉम में प्रकाशित रिपोर्ट में मेलानी हेकेन ने दावा किया है कि हथेली से आठ रोगों के लक्षणों के बारे में जाना जा सकता है। वे हैं-

हथेली लाल मतलब लीवर खराब- अगर हथेलियाँ गहरे रंग की हो जायें तो उसे चिकित्सकीय भाषा में पाल्मर इर्थीमिया कहा जाता है। यह लीवर की बीमारी का एक संकेत है। इससे फैटी लीवर या जिगर की सिरोसिस जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। गर्भवती महिलाओं को इससे डरने की जरूरत नहीं है क्योंकि यह रक्त प्रवाह की वजह से होता है।

डायबिटीज का लक्षण भूरे और लाल धब्बे- मधुमेह होने पर नसें और रक्तनलियाँ कमजोर हो जाती हैं। इससे आंतरिक रक्तस्राव और हैमरेज हो जाता है जिससे हाथों पर लाल रंग के चकत्ते दिखने लगते हैं।

नीली उंगली खराब रक्त प्रवाह की निशानी-भूरी या नीले रंग की अंगुलियाँ खराब रक्त प्रवाह की निशानी हैं। इस बीमारी के कारण अंगुली सुन्न भी हो सकती है।

मोटी और गोल अंगुलियाँ- अगर अंगुलियाँ मोटी होकर गोल रूप ले लें और बाहर की ओर मुड़ जाएँ तो इस हालत को फेफड़ों या दिल की बीमारियों का संकेत समझा जा सकता है। इसे कभी नजर अंदाज न करें।

नाखूनों के नीचे छोटी लाल धारियाँ- नाखूनों के नीचे की त्वचा लाल हो जाए तो इसे स्पिलिंटर हैमरेज कहते हैं। यह रक्त संक्रमण या दिल की बीमारियों का संकेत सकते हैं।

नाखूनों का पीलापन- अगर नाखूनों में पीलापन है और उन्हें दबाने के तुरंत बाद ही वह सफेद हो जाते हैं तो हो सकता है कि आपको एनीमिया हो गया हो।

अंगुलियों की लंबाई- महिलाओं में अगर अनामिका अंगुली तर्जनी से अधिक लंबी है तो वह ऑस्टियोपोरेसिस के खतरे का संकेत है।

ISSN 2231 - 2455

खट्टा मीठा 'अमरख'

जगनारायण*

अमरख के फल

खट्टे-मीठे स्वाद से युक्त पाँच धारियों वाला 'अमरख' का फल भारतीय जनमानस में गहराई से जुड़ा हुआ है। भारतीय मूल के इस फल की चर्चा रामायण जैसे ग्रन्थ में भी मिलती है। यह आनुष्ठानिक कार्यों में भी प्रयुक्त होता है। आधुनिक युग में समुद्री आहारों को सजावटी रूप देने में भी इसे प्रयोग किया जाता है। इसके कच्चे फल को काट कर मूली, सेलेरी और सिरका के साथ मसाला मिलाकर बने स्वादिष्ट व्यंजन के रूप में भी खाया जाता है। इसके फल के गूदे से जैम-जेली बनाई जाती है। इसे काटकर बनने वाला अचार और मुरब्बा अत्यन्त स्वादिष्ट और जायकेदार होता है। यद्यपि अमरख का मूल स्थान भारतीय उप महाद्वीप का श्रीलंका या हिन्देशिया है, लेकिन विश्व के अनेक देशों में इसका वृक्ष उगाया जाता है। दुनिया के अनेक क्षेत्रों के निवासी भी कई तरह के व्यंजनों में इसका इस्तेमाल करते हैं। आस्ट्रेलिया के लोग कच्चे अमरख की सब्जी बनाकर खाते हैं। चीन के लोग मछली के साथ पके इसके व्यंजन को बड़ी रुचि से खाते हैं। थाई लोग इसके फल को काटने के बाद उबालकर झींगा मछली के साथ तलकर खाते हैं। जमैका में इसके पके फल को आम के कच्चे फल की तरह सुखाकर खटाई के लिए संरक्षित कर लिया जाता है, जिसे बाद में आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाता है। मलेशियाई लोग इसे अकेले या सेव, चीनी और लौंग के साथ उबालकर खाते हैं। भारत में इसके फल को पतला-पतला काटने के बाद उसकी चटनी बनाकर भोजन के साथ खाया जाता है। भारतीय बच्चे इसके फल को चटकारे लेकर खूब खाते हैं।

स्वाद और जायके के साथ ही इसके फल में विटामिन एंटिआक्सीडेटिक तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। विश्लेषकों ने अमरख के 100 ग्राम खाने योग्य गूदे में 9.38 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 1.04 ग्राम प्रोटीन, 0.33 ग्राम लिपिड तथा 2.80 ग्राम खाद्य रेशे की उपस्थिति पाई है। इसके फल में मानव के लिए जरूरी सभी तरह के एमीनों अम्ल पाये जाते हैं। इसके फल में एलानिन, लाइसिन और सेरीन के साथ ही विटामिन सी और पोटैशियम तथा कई तरह के खनिज तत्वों की भरपूर मात्रा पाई जाती है। इसके फल के रस में रोगकारी एस्किरीचिया, क्लेबसियेल्ला, स्यूडोमोनास और स्टैफिलोकोकस श्रेणी के बैक्टीरियारोधी गुण भी पाये जाते हैं। इसके कच्चे और पके फल में साधारण जैविक अम्ल के अतिरिक्त ऑक्सैलिक अम्ल, टार्टरिक अम्ल, मेलिक अम्ल, फाइटोग्लुटेरिक अम्ल तथा सुकिनिक अम्ल जैसे विशिष्ट श्रेणी के अम्ल भी पाये जाते हैं।

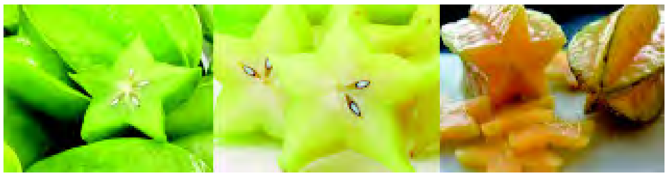

अमरख के विभिन्न अवस्थाओं के फल

सामान्यतया हिन्दी भाषी क्षेत्रों में कमरख नाम से चर्चित इस फल को अंग्रेजी में स्टार फ्रूट (Star Fruit) कहा जाता है। इसका वानस्पतिक नाम *एबेरोवा केरम्बोलालिन* (Aberroa carambolalimn) है। यह आक्जैलिडेसी (Oxalidaceae) परिवार की वनस्पति है। इसे तेलगू में अंबानमकाया, तमिल में थनबरथम, मराठी और कोकणी में कारमबुल, मलयाली में चतुर पल्ली-वैरापुल्ली, कन्नड़ में करपक्षी हनु, गुजराती में कमरख, बंगला और उड़िया में इसे कामरंगा कहते हैं।

अमरख मुख्य रूप से उपोष्ण और उष्ण कटिबन्धीय जलवायु की वनस्पति है। वनस्पति वैज्ञानिकों का मत है कि इसका प्रौढ़ पेड़ कुछ समय हिमबिन्दु (शून्य डिग्री सेल्शियस) की ठण्डक को भी सह लेता है। भारत के मैदानी हिस्सों में चलने वाली लू जैसी गर्म हवा में भी इसका वृक्ष फलता-फूलता और विकास करता है। इसका पेड़ समुद्र से 1200 मीटर की ऊँचाई तक हिमालय की तलहटी वाले क्षेत्र में सफलता पूर्वक उगने के साथ फलता-फूलता है।

*विज्ञान संचारक, श्री विश्वनाथ मन्दिर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

पेड़ों पर लदे अमरख के फल

अमरख का वृक्ष पोषक तत्वों से युक्त जलोढ़ मिट्टी में विकसित होकर अच्छा विकास पाता है। बाढ़ के पानी की रुकावट वाली भूमि इसके लिए उपयुक्त नहीं होती। यह मन्द गति से बढ़ने वाला पर्णपाती श्रेणी का 6 से 9 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ने वाला वृक्ष है। इसके तने से ढेरों शाखाएँ निकलती है। इसकी ऊपरी पत्तियों वाला हिस्सा झाड़ की तरह गोलाई लिए हुए होता है। इसके पौधे में चार से पाँच साल की आयु में फल आने लगते हैं। इसकी पत्तियाँ सर्पिल, व्यवस्थित, एकान्तर क्रम में 15 से 20 सेमी. लम्बी और शिखर पर घनी हो जाती हैं। इसके पुष्प गुच्छों में लम्बे छरकीनुमा छड़ीदार पतली शाखाओं पर अगल-बगल से निकलते हैं। इसके पुष्प 6 मिमी. चौड़े बैंगनी धारीयुक्त गुलाबी रंग के अत्यन्त आकर्षक होते हैं।

यद्यपि कमरख के पेड़ पर फूल पूरे वर्ष भर आते रहते हैं लेकिन उपोष्ण कटिबन्ध वाले क्षेत्र में जहाँ इसमें अप्रैल से जून तक फल लगते हैं, वहीं उष्ण कटिबन्धीय जलवायु में अक्टूबर से दिसम्बर के बीच इसमें फल आते हैं। इसके फल की लम्बाई 6 से 15 सेमी. और चौड़ाई 9 सेमी. तक की होती है।

इसके फल लम्बाई में पाँच पहल वाली पहलदार या उठी हुई नुकीली धारी वाले होते हैं। इसके फल की धारियों को कोणीय दिशा में पतला काटने पर उनका आकार तारों के जैसा पंचकोणीय या षटकोणीय दिखाई पड़ता है। इसके इसी आकार के कारण ही कई लोग इसे 'स्टार फ्रूट' भी कहते हैं। इसका कच्चा फल हरे रंग का चमकदार होता है जो पकने पर पीला या नारंगी रंग का हो जाता है। इसके फल के ऊपर अत्यन्त पतले छिलके का आवरण होता है। इसी पतले छिलके के नीचे रसदार कुरकुरा हल्का और गाढ़ा पीला पारभासी गूदा होता है। इसके गूदे में रेशा नहीं होता। कमरख के फल के गूदे से आक्सैलिक अम्ल सरीखी गन्ध आती है। इसका स्वाद अत्यधिक खट्टा होने के साथ ही मीठा भी होता है। इसके खट्टे और मीठे और छोटे-बड़े आकार के फलों वाली अलग-अलग प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इसका बड़े आकार वाला फल छोटे आकार वाले फल की अपेक्षा कम खट्टा होता है। छोटे आकार के इसके फल में अम्ल अधिक मात्रा में पाया जाता है जबकि बड़े आकार वाले फल में अम्ल कम होता है। मीठा कहे जाने वाले इसके फल में भी चीनी की मात्रा चार प्रतिशत से अधिक नहीं होती।

यद्यपि भारत सहित भारतीय उपमहाद्वीप के मैदानी क्षेत्र में मुख्य रूप से इसका फल सितम्बर से जनवरी तक तैयार हो जाता है। लेकिन दक्षिण एशिया, आस्ट्रेलिया और अमेरिका में इसकी फलत बारह मास होती है। इन क्षेत्रों के फल उत्पादक इसके फल का संग्रह सितम्बर से नवम्बर के बीच कर लेते हैं। इसके अच्छी तरह पके फल स्वतः पेड़ों से गिर पड़ते हैं लेकिन उत्पादक बिक्री के लिए इसके पुल को तोड़कर एकत्र करते हैं।

विभिन्न प्रकार के भोज्य उपयोगिता के साथ ही दुनिया के कई भागों के लोग इसके पेड़ के विभिन्न हिस्सों को औषधीय कार्य में भी प्रयोग करते हैं। ब्राजील के लोग एक्जिमा और सोरायेसिस के उपचार के लिए इसे प्रयोग में लेते हैं। कम्बोडियाई लोग इसके फूल और मुलायम पत्ते को पीसकर बनाये गये लेप का प्रयोग त्वचा रोगों के साथ ही दर्द निवारण में भी करते हैं। चीनी लोग इसकी मुलायम पत्तियों और फलियों को पीसकर चेचक के दानों पर लगाते हैं। दुनिया के कई हिस्सों में दाद और खुजली से निजात पाने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है।

भारत में आयुर्वेदिक चिकित्सक अमरख के फल को मूत्राशय और गुर्दे की समस्याओं में मूत्रवर्द्धक के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके सूखे फल और रस का प्रयोग ज्वर निवारण के लिए होता है। इसके फल का पित्त सम्बन्धी समस्याओं, पेट के फूलने और दस्त में भी प्रयोग होता है। बवासीर की शिकायत में इसके सूखे फल को पानी के साथ पीसकर लेते हैं।

इसके फल के प्रयोग से लार का प्रवाह बढ़ जाता है जिससे भोजन के पूर्व इसके सेवन से भूख बढ़ती है। शराब और भाँग के नशे की खुमारी को उतारने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसका फूल पेट के कीड़ों को खत्म कर देता है। इसके ताजे बीज के प्रयोग से छोटे बच्चों वाली महिलाओं में दूध की मात्रा बढ़ जाती है। यह पेडू और गर्भाशय के रक्त प्रवाह में वृद्धि करता है।

इसके फल के उपयोग में सावधानी बरतने की आवश्यकता है। इसमें पाया जाने वाला आक्सैलिक अम्ल गुर्दे के रोगी और गुर्दे में पथरी की समस्या वाले व्यक्ति को हानि पहुँचा सकता है। इसके फल का रस कई दवाओं के अलावा कोशिकाओं के एंजाइमों पर विपरीत प्रभाव डालता है।

"सच्चे तप का भाव उस देश भक्त में है जो अपने देश एवं अपनी जाति के गौरव और प्रतिष्ठा, कीर्ति और मान, सम्पत्ति और ऐश्वर्य की वृद्धि के लिए दृढ़ इच्छा रखता है तथा अनेक प्रकार के दुःखों, संकटों और कष्टों को सहन करने, कठिन से कठिन मेहनत और श्रम को उठाने और विघ्नों से मुकाबला करने को उद्यत रहता है।"

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

फल एवं सब्जियों के उपोत्पादों का करें सदुपयोग

डॉ0 राम रोशन शर्मा*

तुड़ाई किए गए सेब

विकासशील देशों में तुड़ाई उपरान्त कुप्रबंधन से फल एवं सब्जियों के उत्पादन का काफी हिस्सा यों ही क्षतिग्रस्त हो जाता है। विभिन्न संस्थानों, संस्थाओं एवं वैज्ञानिकों द्वारा तैयार आंकड़ों के अनुसार यह बात सामने आई है कि फल एवं सब्जियों में तुड़ाई के उपरान्त क्षति 20-40 प्रतिशत के बीच है (सारणी-1)। कहने का तात्पर्य है कि इतने कड़े परिश्रम से पैदा किए गए फल एवं सब्जियाँ तुड़ाई उपरान्त कुप्रबंधन के कारण व्यर्थ ही चले जाते हैं।

सारणी -1 : विकासशील देशों में फलों एवं सब्जियों में अनुमानित तुड़ाई के उपरान्त क्षति का ब्यौरा

फल	**अनुमानित क्षति (प्रतिशत)**	**सब्जी**	**अनुमानित क्षति (प्रतिशत)**
सेब	14	प्याज	16-35
आम	17-37	टमाटर	5-50
केला	20-80	बंदगोभी	37
पपीता	70-100	फूलगोभी	49
एवोकेडो	43	सलाद	62
खुबानी	28	गाजर	44
नींबू वर्गीय फल	20-85	आलू	5-40
अंगूर	27		

परन्तु, अब इस दिशा में वैज्ञानिकों के प्रयास निरन्तर जारी हैं और आए दिन शोधकार्यों से तुड़ाई/कटाई के उपरांत प्रौद्योगिकी दिन-दूनी व रात चौगुनी तरक्की कर रही है। अब ऐसी फल एवं सब्जियों जिन्हें ताजा न बेचा जा सके, उनसे कई मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जा रहे हैं जो देश व विदेशों में काफी लोकप्रिय भी हो रहे हैं। फल एवं सब्जियों का प्रसंस्करण कर जैम, जैली, जूस, नेक्टर, सुरा, अचार, मुरब्बे एवं डिब्बाबंदी आदि उत्पाद बनाए जाते हैं, लेकिन जब फलों एवं सब्जियों से ऐसे उत्पाद बनाए जाते हैं तो उनसे भारी मात्रा में व्यर्थ अपशिष्ट सामग्री निकलती है (सारणी-2)।

जल व वायु को दूषित करती सेब की पोमस : एक व्यर्थ सामग्री
रस निकालने के बाद बचे सेब के बीज एवं अन्य सामग्री

सेब के गूदे से बने उत्पाद

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012.

सारणी-2 : भारत में फलों एवं सब्जियों के प्रसंस्करण के उपोत्पाद

फल/सब्जी	व्यर्थ सामग्री	व्यर्थ सामग्री का उत्पादन (हजार टन)	अनुमानित व्यर्थ की मात्रा (प्रतिशत)
आम	छिलका एवं गुठली	6,988	45
केला	छिलका	2,378	35
नींबू वर्गीय फल	छिलका, रैग व बीज	1,212	50
अंगूर	छिलका व बीज	20	20
अमरूद	छिलका, क्रोड, बीज	656	10
सेब	छिलका, पोमेस, बीज	1,376	35

बड़े काम की है मौसम्बी, मौसम्बी के छिलके : तेल का स्रोत

मौसम्बी का रस निकालने हेतु छिली मौसम्बी

प्रसंस्करण उद्योगों से इस तरह से भारी मात्रा में निकली सामग्री को ठिकाने लगाना एक बहुत बड़ी चुनौती है। अक्सर यह देखा गया है कि यह सामग्री इन उद्योगों के आस-पास ही रखी जाती है जो वहाँ सड़कर वातावरण को दूषित करके जन साधारण के स्वास्थ्य को कुप्रभावित करती है। कभी-कभी कुछ प्रसंस्करण उद्योग इसे नदियों या नालों में बहा देते हैं, जो जल का प्रदूषित करती हैं। अतः प्रसंस्करण उद्योग मानव के जीवन के लिए अति आवश्यक वायु एवं जल को प्रदूषित करते हैं। हालाँकि जल संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण नियमावली (1974) एवं पर्यावरण संरक्षण एक्ट (1986) के अनुसार प्रसंस्करण उद्योगों को ऐसी सामग्री को समुचित एवं मानकीकृत ठिकाने लगाना होता है या कुछ मानकीकृत प्रौद्योगिकियों को अपनाकर प्रयोग करना होता है। क्योंकि यह सामग्री जिसे हम व्यर्थ समझकर नदियों या नालों में बहा देते हैं, कई चीजों के प्रचुर स्रोत होती हैं (सारणी-3)।

सारणी-3 : फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण के कुछ उपोत्पादों का संघटनमान (प्रति 100 ग्राम)

व्यर्थ सामग्री	नमी (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट्स (ग्राम)	रेशा (ग्राम)	पोषक तत्व (ग्राम)
सेब की पोमेस	12	3.0	1.7	17.4	16.2	1.7
आम की गुठली	8.2	8.5	8.9	74.5	-	3.7
कटहल की गुठली	8.5	7.5	11.8	30.8	14.2	6.5
केले का छिलका	79.2	0.8	0.8	1.7	5.0	2.1
मौसम्बी के बीज	4.0	15.8	36.9	14.0	-	4.0
तरबूज के बीज	4.3	34.1	52.6	0.8	4.5	3.7
खरबूज के बीज	6.8	21.0	33.0	30.0	-	4.0
कद्दू के बीज	6.0	29.5	35.4	12.0	12.5	4.6

कटाई/तुड़ाई उपरान्त प्रौद्योगिकी के संबंध में आए दिन हुए अनुसंधान कार्यों से अब यह संभव है कि फलों एवं सब्जियों के अवशेषों एवं प्रसंस्करण उद्योगों से उत्पन्न हुई व्यर्थ सामग्री का समुचित उपयोग कर कई प्रकार के मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। ऐसे ही कुछ प्रमुख उत्पादों का वर्णन निम्नलिखित हैः

रस निकालने के बाद निकलती मौसम्बी की व्यर्थ सामग्री

प्रसंस्करण-उपोत्पादों के मूल्यवर्धित उत्पाद

बहुमूल्य तेल

हमारे देश में विभिन्न प्रकार के नींबू वर्गीय फल जैसे नारंगी, संतरा, नींबू, लेमन, चकोतरा आदि पैदा किए जाते हैं। इन फलों का उपयोग मुख्यतः ताजे फल के रूप में करते हैं, परन्तु इन फलों से रस, स्क्वैश आदि उत्पाद भी तैयार किए जाते हैं। ऐसी प्रसंस्करण यूनिटों से भारी मात्रा में ऐसी सामग्री निकलती हैं जो साधारणतः व्यर्थ हो जाती हैं। लेकिन इस सामग्री में पैक्टिन एवं तेल काफी मात्रा में पाए जाते हैं। हमारे देश में भी नींबू वर्गीय फलों की इस व्यर्थ सामग्री से बैंगलोर, नागपुर, अबोहर एवं सिक्किम में तेल निकाला जाता है (सारणी-4)। परन्तु अन्य जगहों पर ऐसी बहुमूल्य सामग्री व्यर्थ ही चली जाती है।

पैक्टिन

संसारभर में पैक्टिन नींबू वर्गीय फलों के छिलके से निकाली जाती है। हमारे देश में भी इसकी बहुत माँग है और हम इसे विदेशों से आयतित करते हैं। पैक्टिन को जैम, जैली, मार्मेलेड़ एवं कई अन्य औद्योगिक उपयोग हैं। हमारे देश में प्रतिवर्ष लगभग 180 टन (15 करोड़ रुपए) पैक्टिन का आयात करता है। अतः हमें नींबू वर्गीय फलों के छिलकों से पैक्टिन निकालने हेतु उद्योग लगाने चाहिए। इसके अतिरिक्त आम, सेब एवं अमरूद के छिलके से भी पैक्टिन निकाली जा सकती है, परन्तु अफसोस की इन सभी फलों के छिलके हमारे देश में व्यर्थ सामग्री हैं। हालाँकि, उतरायन एवं कोडूर में जरूर कुछ मात्रा में संतरे के छिलके से पैक्टिन निकाली जाती है।

स्टार्च

केले का तना स्टार्च का बहुत अच्छा स्रोत माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि केले के 1000 पौधों से लगभग 20-25 टन तना ही होता है जिससे लगभग 5 प्रतिशत खाद्य स्टार्च मिलती है। इसी प्रकार आम की गुठलियों से अच्छी मात्रा में स्टार्च मिलती है। आम पर आधारित भारत की विभिन्न प्रसंस्करण फैक्टिरियों से कई टन गुठलियाँ यों ही व्यर्थ चली जाती हैं एवं सड़कर वातावरण को दूषित करती हैं जिनका प्रयोग स्टार्च निकालने हेतु कर सकते हैं। केले के तने एवं आम की गुठलियों से स्टार्च निकालने की विधियाँ मानकीकृत कर ली गई हैं जिन्हें व्यावसायिकतौर पर अपनाने की आवश्यकता है।

केले का छिलका : स्टार्च का स्रोत

कुदरती रंग

विभिन्न प्रकर के प्रसंस्कृत उत्पादों में आकर्षक रंग हेतु विभिन्न प्रकार के बनावटी रंग प्रयोग किए जाते हैं। ऐसे रंग स्वास्थ्य हेतु काफी हानिकारक होते हैं। अब यह सिद्ध हो चुका है कि ये रंग मनुष्य में कैंसर

सारणी-4 : कुछ अल्पदोहित फलों एवं सब्जियों के अवशेषों से मूल्यवर्धित उत्पाद

फल/सब्जी	उत्पादन क्षेत्र	उत्पाद जो तैयार किए जा सकते हैं
जंगली आंवला, हरड़ व बहेड़ा	उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र	आर्युवेदिक औषधियाँ जैसे च्यवनप्राश, त्रिफला आदि।
कैशू एपल	महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा	जूस, सीरप, कैंडी, फैनी, गोंद आदि।
जंगली खुबानी (चूली)	जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश	बेकरी हेतु टूटी फ्रूटी एवं आईसक्रीम आदि।
जंगली अनार के बीज	जम्मू, हिमाचल प्रदेश	मसाला।
इमली के बीज	आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक	स्टार्च जिसे कपड़ा उद्योग में प्रयोग करते हैं।
कुकुरबिटेसी कुल की सब्जियों के बीज	उत्तर प्रदेश, गुजरात	मगज, जिसे दुग्ध पेय एवं बेकरी में प्रयोग करते हैं।
तरबूज के छिलके	लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	टूटी फ्रूटी हेतु।

आदि रोगों के जनक हैं। अतः अनुसंधान कार्य फलों में व्यापत कुदरती रंगों के प्रयोग पर केन्द्रित हैं। कई फलों जैसे जामुन, अंगूर, कोकुम, फालसा एवं काली गाजर आदि में कुदरतीतौर पर व्याप्त रंग को निकालने एवं उनके प्रयोग की विधियाँ एवं प्रौद्योगिकियाँ मानकीकृत कर ली गई हैं। अब भारत सरकार कोकुम एवं साफोलर से पीले रंग के खाद्य उत्पादों में प्रयोग की अनुमति देने पर विचार कर रही है।

साईड़र

साईड़र एक ऐसा उत्पाद है जिसे सेब के रस को किण्वन द्वारा तैयार किया जाता है। इसमें 1-8 प्रतिशत तक एल्कोहल होती है। विदेशों में साईडर काफी लोकप्रिय है। हमारे देश में सेब से जूस निकालने के कई कारखाने हैं। इन कारखानों से लगभग 10,000 टन 'पोमेस' पैदा होती है। यह पोमेस कुछ दिनों में सड़ जाती है जिससे वातावरण में विशेष प्रकार की दुर्गंध फैलती है। इसके अतिरिक्त इसे नदियों में बहा दिया जाता है जो पहाड़ों में वायु एवं जल प्रदूषण का प्रमुख स्रोत है; जबकि इस पोमेस से विदेशों में कई उद्योग हैं जो तरह-तरह के अनेक बहुमूल्य उत्पाद तैयार करते हैं। अतः सेब पर आधारित प्रसंस्करण उद्योगों से उत्पादित 'पोमेस' का प्रयोग 'साईड़र' तैयार करने हेतु किया जा सकता है।

सिरका

सिरके को भी फलों की व्यर्थ सामग्री से तैयार किया जाता है। यह कई उद्योगों में प्रयोग होता है परन्तु अचार, सॉस आदि में इसका भरपूर उपयोग होता है। अनन्नास, सेब, संतरे आदि के अपशिष्टों से सिरका तैयार करने की विधियाँ विकसित कर ली गई है, जिनका प्रयोग व्यापारिक स्तर पर होना चाहिए।

उपोत्पादों से तैयार सिरका

इथेनॉल

फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण उद्योगों से निकली व्यर्थ सामग्री में सेलूलोज, हेमीसेलूलोस एवं लिग्निन आदि प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं जिनसे किण्वन द्वारा इथेनोल तैयार किया जा सकता है। इथेनॉल के कई प्रयोग हैं परन्तु इसे ईंधन या प्रयोगशालाओं में मुख्यतः प्रयोग किया जाता है। सेब जिसे हम मुख्यतः विदेशों से आयात करते हैं। नाशपाती एवं चेरी की पोमेस से इथेनॉल तैयार करने की विधि मानकीकृत कर ली गई है। इसी प्रकार संतरे एवं अंगूर की व्यर्थ सामग्री से भी इथेनॉल तैयार किया जा सकता है, जिससे भारत विदेशी मुद्रा बचा सकता है।

खुमानी की गिरी का तेल, उपोत्पादों से तैयार इथेनॉल

एन्जाइम

प्रसंस्करण उद्योग, बेकरी, औषधियों एवं प्रयोगशालाओं में एन्जाएमों की भारी आवश्यकता होती है। इस माँग की पूर्ति हेतु हम इन्हें विदेशों से आयात करते हैं जिससे काफी मुद्रा व्यर्थ चली जाती है। जबकि इस मुद्रा को आसानी से बचाया जा सकता है यदि हम फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण उद्योगों से निकली व्यर्थ सामग्री को किण्वन द्वारा सड़ाकर एन्जाएम तैयार करें। किण्वन द्वारा ऐसी सामग्री से कई प्रकार के एन्जाएम तैयार किए जा सकते हैं (सारणी-5)।

सिट्रिक अम्ल

सिट्रिक अम्ल का प्रयोग प्रसंस्करण उद्योग में जैम, जैली, स्कवैस, नेक्टर आदि तैयार करने में होता है। इसे हम प्रसंस्करण उद्योग से प्राप्त व्यर्थ सामग्री से किण्वन द्वारा तैयार कर सकते हैं। सेब की पोमेस को *एस्परजिलस नाइजर* से किण्वन द्वारा तैयार करने की विधि व्यावहारिकतौर पर अपनाई जा रही है। इसके अतिरिक्त अनन्नास के जूस, गन्ने के बैगास एवं शकरकंदी, अंगूर एवं संतरे की व्यर्थ सामग्री से किण्वन द्वारा सिट्रिक अम्ल तैयार कर सकते हैं।

किण्वनी सुस्वाद एवं गोंद

सूक्ष्मजीवों द्वारा किण्वन करा के फलों एवं सब्जियों की व्यर्थ सामग्री से कुदरती सुस्वाद एवं गोंद प्राप्त किया जा सकता है जिसे प्रसंस्कृत उत्पादों (जूस, जैम, जैली आदि) में विशेष आकर्षक स्वाद एवं उन्हें टिकाऊ बनाने हेतु प्रयोग किया जा सकता है। अब सूक्ष्मजीवों का प्रयोग 'वैनीलिन' (वेनिला सुस्वाद) तैयार करने हेतु किया जा रहा है। इसी प्रकार

सारणी-5 : खाद्य प्रसंस्करण से प्राप्त व्यर्थ सामग्री से किण्वन द्वारा तैयार एन्जाइम

व्यर्थ सामग्री	किण्वन में प्रयुक्त सूक्ष्मजीव	एन्जाइम जो तैयार हुआ
सेब की पोमेस	*ट्राईकोडर्मा विरड़ी*	सेलूलेज
	एस्परजिलस जाति	जाइलानेज
गन्ने का बैगास	*ट्राईकोडर्मा रीसई*	सैलूलेज
अंगूर के सोमरस से बची करतने	*सेरीना यूनिकलर*	सैलूलेज, लाइनानेज, लिग्नीनेज
बंदगोभी के अचार से प्राप्त व्यर्थ सामग्री	*कैंडिडा यूटिलिस*	इंवरटेज
चुकुन्दर का गूदा	*एस्परजिलस फीनीसिस*	बीटा-ग्लूकोसीडेज
चाय पत्ती के अवशेष	*सेरीना यूनिकलर, प्लूरोटस ओस्ट्रीऐटस*	जाइलानेज
बंदगोभी से प्राप्त व्यर्थ सामग्री	*स्यूडोमोनास जाति*	एमाईलेज, प्रोटीएज, सेलूलेज

किण्वनी गोंद, 'जैंथिन' को तैयार करने हेतु *जेंथोमोनास कंपेस्ट्रिस* नामक जीवाणु को बंदगोभी एवं नींबू वर्गीय फलों के अवशेषों से प्राप्त करने की प्रौद्योगिकी विकसित की गई है, जिसे व्यावसायिक स्तर पर अपनाने की आवश्यकता है।

अमीनो अम्ल

फल एवं सब्जियों की व्यर्थ सामग्री पर सूक्ष्मजीवों के प्रयोग से किण्वन द्वारा अमीनो अम्ल भी तैयार किए जा सकते हैं। ये अम्ल फलों से तैयार प्रसंस्कृत उत्पादों के मूल्यवर्धन हेतु डाले जाते हैं। फल एवं सब्जियों के अवशेषों से 'ग्लूटेमिक अम्ल' एवं 'लाईसीन' आदि एमीनो अम्ल को तैयार किया जा सकता है।

विटामिन

हमारे भोजन में विटामिन की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए क्योंकि इनकी कमी से हमें कई रोग लग सकते हैं। फलों एवं सब्जियों के अवशेषों से हमें कई प्रकार के विटामिन मिल सकते हैं। विटामिन $बी_{12}$ का व्यावसायिक उत्पादन सोयाबीन एवं मक्का के आटे से सूक्ष्मजीवों के उपयोग द्वारा किया जा रहा है। इसी प्रकार विटामिन $बी_1$, $बी_2$ व बीटा कैरोटीन का उत्पादन मक्का की व्यर्थ सामग्री से *ऐशवया गोसीपी* नामक सूक्ष्मजीव द्वारा किण्वन से व्यापारिक स्तर पर किया जा रहा है।

आर्युवैदिक औषधियाँ

हमारे देश में कई ऐसे फल जैसे जामुन, आंवला, हरड़ एवं बहेड़ा आदि उगाए जाते हैं, जिनके अवशेषों को कई औषधियाँ को तैयार में प्रयोग किया जा सकता है। जैसे जामुन से रस निकालने के बाद बचे बीजों एवं अन्य सामग्री को 'शुगर' के रोगियों हेतु औषधि बनाने में प्रयोग किया जाता है। हरड़, बहेड़ा एवं आँवला के अवशेषों से त्रिफला, च्यवनप्राश, अरोग्यवर्धनी एवं अशोकारिष्ट आदि बहुमूल्य औषधियाँ तैयार की जाती हैं।

हमारे देश में काजू के प्रसंस्करण के बाद 'कैशू एपल' का उत्पादन लगभग 3 लाख टन के लगभग होता है। इसे व्यर्थ समझकर बर्बाद कर दिया जाता है जो हमारे वातावरण को प्रदूषित करता है। परन्तु इस व्यर्थ सामग्री से वैज्ञानिकों ने कई बहुमूल्य उत्पादों को तैयार करने की प्रौद्योगिकियाँ विकसित की हैं। इस सामग्री से जूस, सीरप एवं कैंडी आदि उत्पादों के अतिरिक्त 'फैनी' सुरा एवं 'ब्रांडी' (सूरा) आदि तैयार कर सकते हैं (सारणी-4)। जंगली खुबानी (चूली) के बीजों से तेल एवं गूदे से सुरा एवं 'ब्रांडी' सुरा तैयार की जाती हैं पपीते के कच्चे फलों से पपेन तैयार किया जाता है। शेष बचे फलों को ना बेचा जा सकता है और ना ही ताजा खाया जा सकता है। अतः ऐसे फलों को सीरप में डालकर इनसे 'टूटी फ्रूटी' तैयार की जा सकती है। हमारे देश में लगभग 5-6 हजार टन 'टूटी फ्रूटी' तैयार की जाती है जिसमें मुख्य हिस्सा पपीते का होता है।

बायोगैस

हमारे देश में बायोगैस मुख्यतः पशुओं के गोबर से तैयार की जाती है, परन्तु कुछ फलों के ठोस एवं तरल सामग्री से बायोगैस एवं गुणों से भरपूर देशी खाद तैयार की जा सकती है। फलों की सामग्री को सड़ाने हेतु चूने की कुछ मात्रा भी डालनी पड़ती है क्योंकि फलों के अवशेषों में अम्ल होते हैं जो सड़ाने वाले सूक्ष्मजीवों को मार देते हैं। परन्तु सब्जियों के अवशेषों को आसानी से बायोगैस व देशी खाद तैयार करने हेतु प्रयोग कर सकते हैं।

पशुओं के चारे की सामग्री, सेब की पोमेस एवं नींबू वर्गीय फलों के छिलकों को सुखाकर पशुओं हेतु चारे की सामग्री में प्रयोग किया जा सकता है। ये सूखे उत्पाद प्रोटीन की मात्रा, रेशे व वसा से भले ही कम हों परन्तु कार्बोहाइड्रेट्स में भरपूर होते हैं।

उपरोक्त उदाहरणों से पता चलता है कि जिस सामग्री को हम व्यर्थ समझकर ना केवल फेंक देते हैं अपितु, पर्यावरण को दूषित करते हैं, उसी सामग्री के समुचित उपयोग से कई बहुमूल्य उत्पाद तैयार कर सकते हैं जिससे स्वयं ना केवल हम, अपितु अपने देश की आर्थिक समृद्धि में भारी योगदान कर सकते हैं और 'आम के आम गुठलियों के दाम' नामक कहावत को सच सिद्ध कर सकते हैं।

देश में कैंसर से हर दो मिनट में तीन मौत

भारत में हर मिनट कैंसर के दो नए मामले सामने आते हैं और हर दो मिनट में तीन व्यक्तियों की मृत्यु कैंसर से होती है। यह बड़ा खतरा है जिससे निपटना बड़ी चुनौती है। स्वास्थ्य मंत्रालय के 2015 के आंकड़ों के मुताबिक अगले पाँच साल में भारत में 20 फीसदी कैंसर मामलों में वृद्धि होगी। पुरुषों के मुकाबले महिलाओं में इसका खतरा ज्यादा है। पुरुषों में 2020 तक कैंसर के 19 प्रतिशत और महिलाओं में 23 प्रतिशत मामले बढ़ेंगे। पुरुषों में मुँह का कैंसर तो महिलाओं में पित्ताशय का कैंसर ज्यादा होता है।

भारत में 30 लाख प्रचलित कैंसर के मामले हैं, हालाँकि वास्तविक संख्या तिगुनी हो सकती है। दरअसल बहुत से मामले पता ही नहीं चलते या रिपोर्ट नहीं किए जाते। भारत में चिंताजनक बात यह है कि 70 फीसदी नए कैंसर मरीजों की मौत बीमारी का पता लगने से पहले साल में ही हो जाएगी। जबकि अमेरिका और अन्य देशों में इसके उलट स्थिति है।

बेहतर भोजन, उत्तम स्वास्थ्य और सुदीर्घ जीवन के लिए गृह वाटिका

डॉ0 कुमार भारत भूषण[1], डॉ0 रविशंकर एम.[2], मनीष मोहन गोरे[3] एवं देवेन्द्र पाल कौर[4]*

आधुनिक समाज में सब्जियों और फल-फूल के वैज्ञानिक महत्वों को समझा जा रहा है और दैनिक आहार में ताजा फल-सब्जियों को प्राथमिकता दी जा रही है। रासायनिक कीटनाशकों से हमारे स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचता है, इस चिंता को दूर करने के लिए और अपने घर-आंगन में ताजा सब्जियों व फलों को उगाने के आनंद को पाने के लिए लोग गृह वाटिका (Kitchen garden) बना रहे हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि देश में गृह वाटिका की महत्ता को छोटे-बड़े सभी वर्ग के लोग अब प्राथमिकता देने लगे हैं।

गृह वाटिका पौष्टिक आहार पाने का एक आसान साधन है जिसमें विविध प्रकार की सब्जियों एवं फलों को एक सुनियोजित फसल चक्र एवं प्रबंधन विधि के द्वारा उगाया जाता है। यह कृषि की प्राचीन विधि और समुदाय के विकास का एक अभिन्न अंग है। गृह वाटिका को विभिन्न वैज्ञानिकों ने अपने मतानुसार परिभाषित किये हैं। सामान्यतः गृह वाटिका घर के आस-पास बनायी गई एक ऐसी जगह होती है जहाँ विविध प्रकार की फसलों की गहन उत्पादन प्रणाली का उपयोग कर एक परिवार की वार्षिक पोषण आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

गृह वाटिका में उगाये गये सब्जियों से विभिन्न प्रकार के विटामिन, खनिज लवण और पादप रसायन प्राप्त होते हैं। इससे शरीर को रोगों से बचाव के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है, साथ ही आयु के बढ़ते प्रभाव को कम किया जा सकता है जिससे युवा दिखने में मदद मिलती है तथा उच्च रक्तदाब, हृदय रोग आदि जैसे रोगों से रोकथाम होती है। सब्जियों में पाये जाने वाले आहारीय रेशों, खनिज-लवण, विटामिन और अन्य लाभदायक तत्वों की पूर्ति किसी भी दवा के माध्यम से नहीं की जा सकती है।

मौसमी सब्जियाँ ना केवल खनिज तत्वों से भरपूर होती हैं, बल्कि इनमें मौसम की प्रतिकूलताओं से लड़ने की क्षमता भी निहित होती है। मौसम के मुताबिक सब्जियाँ शरीर को ठंढ़क और गरमाहट देती हैं। विटामिन और खनिज तत्वों का सबसे बेहतरीन स्रोत सलाद होता है।

गृह वाटिका का स्वरूप

गृह वाटिका का स्वरूप व्यक्ति विशेष के जीवन स्तर, रुचि, आवश्यकता एवं स्थान की उपलब्धता पर निर्भर करता है। यहाँ सब्जियों पर आधारित गृह वाटिका के एक आदर्श स्वरूप एवं प्रबंधन के बारे में जानकारी दी गयी है। इस प्रकार के गार्डेन में पोषक सब्जियों को प्राथमिकता दी जाती है। इसे प्रायः मकान के पिछवाड़े अथवा बगल की खाली जमीन पर बनाया जाता है लेकिन जगह के अभाव में इसे किसी भी ऐसे स्थान पर बनाया जा सकता है जहाँ सूर्य की रोशनी पर्याप्त समय तक पहुँचती है। इस प्रकार की विशिष्ट गार्डनिंग का मुख्य उद्देश्य वर्ष पर्यन्त भिन्न-भिन्न प्रकार की ताजी एवं पौष्टिक सब्जियाँ उगाना है, इसलिए फसल चक्र और उनका नियोजन इसमें बहुत जरूरी हो जाता है।

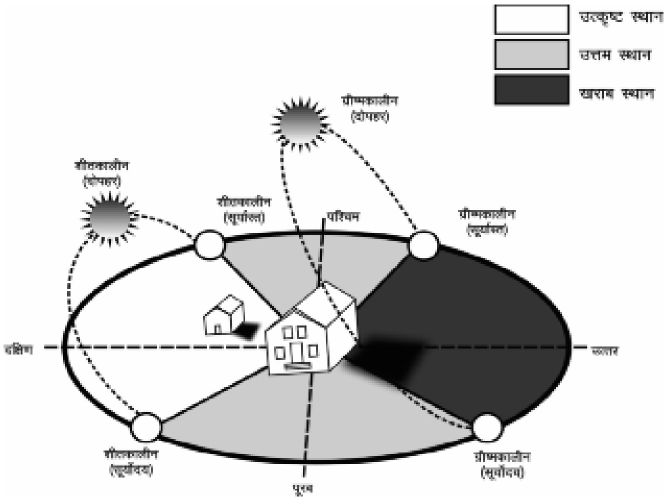

एक सफल एवं सुनियोजित गृह वाटिका के लिए हमें आगे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए -

गृह वाटिका का स्वरूप स्थान की उपलब्धता एवं परिवार के सदस्यों की संख्या पर भी निर्भर करता है। गृह वाटिका के लिए स्थान का चयन करते समय हमें इस बात का विशेष ध्यान देना चाहिए कि वहाँ सूर्य की रोशनी पर्याप्त हो। घर का दक्षिणी भाग गृह वाटिका के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। गृह वाटिका का रसोई की दृष्टि से उपयोगी भाग घर का पिछवाड़ा होता है। पिछवाड़ा होने के कारण घर एवं बाग के अवशेष गृह वाटिका के किसी कोने में बने एक छोटे से कम्पोस्ट गड्ढे में डाले जा सकते हैं। इससे बनी खाद को गार्डेन के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

गृह वाटिका के लिए दोमट मिट्टी जिसका मान 6-7.5 हो सबसे उत्तम समझा जाता है। गृह वाटिका का प्रबंधन करना आसान होता है क्योंकि इसका क्षेत्रफल कम होने से भूमि में किसी तरह की कमी हो तो उसे सुधारा जा सकता है। भूमि सुधारने के लिए यदि भूमि चिकनी या बलुई है तो ऐसी भूमि में आवश्यकतानुसार गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करना चाहिए। यदि भूमि क्षारीय है तो उसमें आवश्यक मात्रा में जिप्सम मिलाना चाहिए। कुछ दिनों तक भूमि में पानी भर कर छोड़ने से भी भूमि की क्षारीयता कम हो जाती है। यदि भूमि अम्लीय है तो उसमें आवश्यकतानुसार चूना डालना चाहिए।

*[1,3]वैज्ञानिक, विज्ञान प्रसार, ए-50, सेक्टर-62, नोएडा, उत्तर प्रदेश; [2]विशेष परियोजना वैज्ञानिक, [4]परियोजना वैज्ञानिक AVRDC-RCSA पतेनचेरू, हैदराबाद, तेलंगाना.

ISSN 2231 - 2455

गृह वाटिका का चुनाव करते समय यह अवश्य ध्यान देना चाहिए की पास में कोई बड़ा मकान या बड़ा वृक्ष न हो ताकि गृह वाटिका को पूरी धूप मिलती रहे। इसके साथ ही गृह वाटिका के लिए उपयुक्त सिंचाई एवं जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। रसोई से निकलने वाले पानी का उपयोग सिंचाई के लिए किया जा सकता है। समय से पानी निकालने और क्यारियों में न ठहरने पर पौधों की वृद्धि अच्छी होती है और उनमें रोग लगने की संभावना कम होती है। इसके अलावा वाटिका का घेराव, मौसम, वायु प्रवाह की दिशा पर भी ध्यान देना जरूरी है।

गृह वाटिका की रूपरेखा

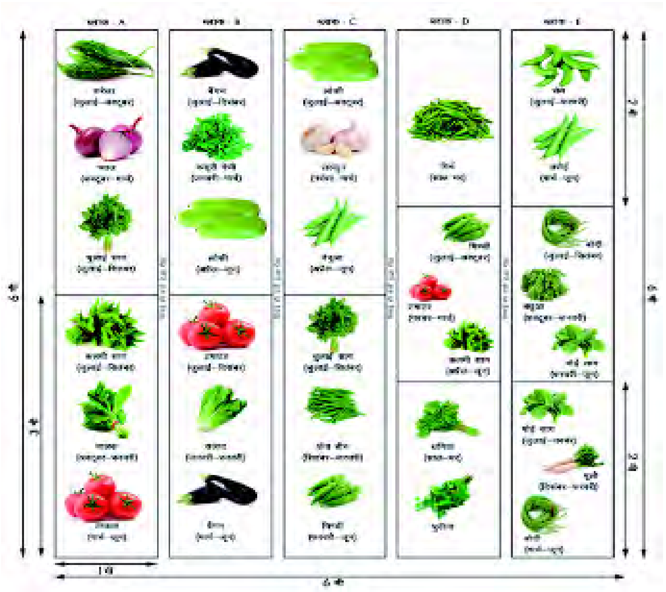

गृह वाटिका की रूपरेखा एवं फसल चक्र

गृह वाटिका की रूपरेखा अलग-अलग परिस्थितियों जैसे कि जगह की उपलब्धता, परिवार में सदस्यों की संख्या, रुचि इत्यादि पर निर्भर करता है। एक आदर्श गृह वाटिका (जो कि पूर्वी/उत्तरी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं) का नमूना आगे दिया जा रहा है जिसमें आवश्यकतानुसार संशोधन भी किया जा सकता है। इस मॉडल को 6 m x 6 m (36 m^2) क्षेत्रफल में बनाया जा सकता है। इस प्रकार की गृह वाटिका 4-5 सदस्य वाले परिवार के लिए उपयुक्त है एवं इससे प्रत्येक मौसम में 10-15 तरह की अलग-अलग पौष्टिक सब्जियाँ प्राप्त होती हैं। गृह वाटिका की रूपरेखा जिसे पूर्वी एवं मध्य भारत में अपनाया जा सकता है एवं मौसम के अनुसार फसलों का चक्र आगे दी गई तालिका के अनुसार सुनिश्चित किया जा सकता है।

सामान्यतः गृह वाटिका की लम्बाई एवं चौड़ाई 6 m 6 m रखी जाती है। पूरे भाग को चित्रानुसार 5 ब्लाक (A, B, C, D, E - सबकी चौड़ाई 1m और बीच में सिंचाई के लिए 0.5 m की नली) में बाँटा जाता है। ब्लाक A, B, C को दो आधे-आधे भागों और ब्लाक D एवं E को तीन भागों में बाँटा जाता है। इस प्रकार हमें पूरे क्षेत्रफल में 3 × 1 m के 6 एवं 2x1 m के 6 प्लाट मिलते हैं। प्रत्येक प्लाट में सब्जियों की संख्या आगे तालिका में दी गयी है।

सब्जियों का चयन

सब्जियों की किस्मों का चुनाव करते समय हमें यह ध्यान रखनी चाहिए कि वे उन्नत, स्वस्थ एवं प्रतिरोधी हो। किस्में अगर देशी हों तो हमें अगले मौसम में बीज खरीदने की जरूरत नहीं पड़ेगी। सब्जियों का चयन करते समय हमें वर्ग के अनुसार फसल चक्र अपनानी चाहिए। एक ही वर्ग की फसलों को लगातार नहीं लगाना चाहिए। फसल चक्र अपनाने से बीमारियों का प्रकोप कम होता है। सब्जियों के अनुसार उसकी बुआई या रोपाई करनी चाहिए। मौसम के अनुसार सब्जियों को निम्न प्रकार से बाँटा जा सकता है -

मौसम के अनुसार सब्जियों को निम्न प्रकार से बाँटा जा सकता है :

1. **गर्मी :** पेठा, करेला, परवल, झींगा, टिंडा, टमाटर, चुलाई, खीरा, भिण्डी आदि।
2. **बरसात :** शिमला मिर्च, बैगन, बीन, तरोई, भिण्डी, चुलाई, करेला, लौकी, गोभी, बोदी, खीरा, टिंडा आदि।
3. **सर्दी :** चुकंदर, ब्रोकली, गाजर, पत्तागोभी, मटर, फ्रेंच बीन, शलजम, प्याज, मूली, टमाटर, पालक आदि।
4. **वर्ष पर्यन्त :** टमाटर, बैगन, बोदी, चुलाई, पालक, भिण्डी, कलमी साग (कैंग कोंग), बसेला

गृह वाटिका का प्रबंधन

सामान्यतः सब्जियों की बुआई दो तरीकों से की जा सकती है - पौधशाला तैयार करके (टमाटर, बैंगन, मिर्चा, प्याज, गोभी वर्गीय सब्जियाँ, सलाद) एवं सीधे बुआई (खीरा वर्गीय सब्जियाँ, मूली, बीन, कलमी साग, बोदी इत्यादि)। जब भी गृह वाटिका में खरपतवार दिखे, तो उसे हाथ से निकाल देना चाहिए। पलवार लगाने से भी खरपतवार की रोकथाम होती है और मिट्टी में नमी भी बरकरार रहती है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

गृह वाटिका से अस्वस्थ पौधों को तुरंत निकालकर नष्ट कर दें। फसल चक्र अपनाना लाभदायक होता है। बुआई के लिए प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करें। स्वस्थ पौधशाला तैयार करें। गार्डेन को साफ रखें, खर-पतवार निकलते रहें तथा रसायन का उपयोग कम से कम करने की कोशिश करें।

बीज उत्पादन

बीजों का उत्पादन हमें स्वस्थ एवं सशक्त फलों से करनी चाहिए। बीजों का निष्कर्षण फलों/फलियों के अनुसार उपयुक्त तकनीक से करनी चाहिए। बीजों को एकत्रित कर उसे अच्छी तरह से सुखा लें और वायुरुद्ध बर्तन में संग्रहित कर लें।

गृह वाटिका का विकास करके खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति, स्वास्थ्य और पर्यावरण सुरक्षा जैसी तीनों महत्वपूर्ण उद्देश्यों को एक साथ पूरा किया जाना संभव है। गृह वाटिका के विकास से जुड़े मानकों का सही-सही अनुपालन कर आप अपने घर में एक आदर्श गृह वाटिका का निर्माण कर सकते हैं जिसके उचित रख-रखाव द्वारा आप मौसम के अनुसार फल-सब्जियों को उगा सकते हैं और पर्यावरण का संरक्षण भी कर सकते हैं।

तालिका 1 : प्लॉट के अनुसार पौधों की संख्या

क्र.सं.	फसल (क्षेत्रफल m^2)	पंक्ति/प्लाट	पौधे/पंक्ति	पौधे/प्लाट
1	चुलाई (3 × 1)	7	30	210
2	करेला (3 × 1)	2	3	6
3	लौकी (3 × 1)	2	2	4
4	बैगन (3 × 1)	3	5	15
5	मिर्च (2 × 1)	3	6	18
6	धनिया (1 × 1)	5	10	50
7	बोदी (2 × 1)	3	9	27
8	फ्रेंच बीन (3 × 1)	4	13	52
9	लहसुन (3 × 1)	7	30	210
10	कलमी साग (3 × 1)	4	15	60
11	कलमी साग (2 × 1)	4	10	40
12	कसूरी मेथी (3 × 1)	7	-	-
13	बीन (2 × 1)	4	10	40
14	सलाद (3 × 1)	7	30	210
15	पुदीना (1 × 1)	7	7	49
16	भिण्डी (3 × 1)	4	9	36
17	भिण्डी (2 × 1)	4	6	24
18	प्याज (3 × 1)	7	30	210
19	बसेला (2 × 1)	4	15	60
20	मूली (2 × 1)	6	20	120
21	झिंगी (3 × 1)	1	7	7
22	झिंगी (2 × 1)	1	5	5
23	पालक (3 × 1)	7	30	210
24	तरोई (3 × 1)	1	7	7
25	टमाटर (3 × 1)	3	6	18
26	टमाटर (2 × 1)	3	4	12
27	बथुआ (2 × 1)	7	-	-

जैविक खेती में उपयोगी है वर्मीवाश

प्रतीक सनोड़िया[1], प्रो० मनोज कुमार सिंह[2] एवं डॉ० राम स्वरूप मीना[3]*

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी दो तिहाई आबादी गाँवों में बसती है एवं अपना जीविकोत्पार्जन करती है। हमारे देश में हरित क्रान्ति सन् 1966-67 में शुरू हुई जिसके फलस्वरूप उन्नत किस्मों के बीज एवं रासायनिक उर्वरकों का अंधाधुँध प्रयोग कृषि में उत्पादन बढ़ाने के लिए हुआ। इन रसायनों के लगातार उपयोग से भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों का ह्रास हुआ है। रसायनों के अधिक उपयोग से अन्न की गुणवत्ता में गिरावट दर्ज की गयी यही नहीं, खाद्य पदार्थों में जहरीलापन बढ़ने से मनुष्यों में विभिन्न घातक बीमारियाँ देखी जा रही हैं। विभिन्न वैज्ञानिक रिर्पोटों में यह साबित हो चुका है कि ये रसायन हमारे पर्यावरण को भी प्रदूषित करते हैं।

वर्मीवाश के उपयोग हेतु केचुओं की उचित प्रजाति आइसीनिया फोटिडा

उपरोक्त समस्याओं से निदान पाने के लिए रासायनिक उत्पादों का उपयोग कम करके उनके स्थान पर जैविक उत्पादों का उपयोग एक अच्छा विकल्प है। भारत में कृषि के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के स्रोत जिनका प्रयोग अन्न की गुणवत्ता बढ़ाने एवं किसानों को उनकी फसलों का अधिक दाम प्रदान करने के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, वर्मीवाश इत्यादि इन सभी उत्पादों को कम लागत में किसान स्वयं उत्पादित कर सकते हैं। आज के युग में वर्मीवाश जिसे केंचुआ द्वारा स्रावित किया जाता है, जिसमें विभिन्न हार्मोन्स, पोषक तत्व एवं एंजाइम पाए जाते हैं। यह तरल पदार्थ पर्णीय छिड़काव के लिए प्रयोग होता है। वर्मीवाश पूर्णतः जैविक उत्पाद है जिसका प्रयोग अनाज एवं दलहनी फसलों में होता है सब्जियों में पुष्पन एवं फलन की प्रक्रिया वर्मीवाश से अधिक होती है एवं इनकी गुणवत्ता भी बढ़ती है। फसलों एवं सब्जियों में विभिन्न रोगों की रोकथाम भी वर्मीवाश से की जाती है क्योंकि यह एक अच्छा रोगरोधी पदार्थ होता है। वर्मीवाश से मृदा की सेहत भी अच्छी होती है क्योंकि इसका कोई भी अवशेष मृदा के लिए हानिकारक नहीं होता। यह सस्ता एवं सुरक्षित होता है। अतः कृषि में वर्मीवाश का उपयोग करना बहुत ही लाभदायक है।

वर्मीवाश क्या है ?

वर्मीवाश एक तरल पदार्थ है जो केंचुआ द्वारा स्रावित हार्मोन्स, पोषक तत्वों एवं एंजाइमयुक्त होता है जिसमें रोगरोधक गुण पाए जाते है। दूसरे शब्दों में यह एक भूरे रंग का तरल जैव उर्वरक है जिसमें ऑक्सिन एवं साइटोकाइनिन हार्मोन्स उपस्थित होते है और विभिन्न एंजाइम जैसे- प्रोटीएज, एमाइलेज, यूरीएज एवं फॉस्फेटेज भी पाए जाते हैं। माइक्रोबॉयोलोजिकल अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि वर्मीवाश में नाइट्रोजन फिक्सिंग बैक्टीरिया जैसे- एजोटोबैक्टर स्पीशीज, एग्रोबैक्टीरियम स्पीशीज एवं फॉस्फोरस घोलक बैक्टीरिया पाए जाते हैं।

वर्मीवाश इकाई

वर्मीवाश इकाई

वर्मीवाश इकाई को प्लास्टिक या लोहे की 200 लीटर क्षमता वाली टंकी में तैयार किया जाता है। टंकी के निचले हिस्से में एक छिद्र किया जाता है। अब एक उर्ध्वाधर टी आकार की नली जिसका आधा इंच टंकी के अंदर डूबा रहना चाहिए, स्थापित किया जाता है। उर्ध्वाधर नली के एक हिस्से को टेप से जोड़कर दूसरी तरफ डमी नट से कस दिया जाता है और इस पूरे सेट को एक उचित चौकी के ऊपर रख दिया जाता है।

टेप को खुला रखकर बाल्टी में छोटे-छोटे ईंट के टुकड़े एवं कंकड़ लगभग 25-30 सेन्टीमीटर तक भरते हैं, फिर इसके ऊपर 20-30 सेमी. मोटी बालू भरते हैं।

अब इस मूल इकाई के ऊपर गोबर भरकर केचुओं को भरा जाता है, फिर मिट्टी की परत डालने के बाद धान की पुआल ऊपर चढ़ाकर छायादार स्थान में रख दिया जाता है। इसपर प्रतिदिन पानी का छिड़काव किया जाता है।

वर्मीवाश तैयार करने हेतु आवश्यक सामग्री

वर्मीवाश तैयार करने के लिए 20 लीटर क्षमता वाली बाल्टी, ईंट की गिट्टी, मोटी बालू 1 से 1.5 किलोग्राम, मिट्टी 2 किलोग्राम, गोबर 7

*[1]शोध छात्र, [2]आचार्य एवं [3]सहायक आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय - 221 005.

किलोग्राम, केंचुआ 60 से 80, पुआल, मिट्टी का घड़ा और एक बाल्टी पानी की आवश्यकता पड़ती है।

वर्मीवाश तैयार करने की विधि

वर्मीवाश तैयार करने के लिए उचित छायादार स्थान का चुनाव किया जाता है क्योंकि सूर्य प्रकाश का प्रभाव केचुओं पर विपरीत होता है, साथ ही बारिश से भी केचुओं को बचाया जाता है। वर्मीवाश तैयार करते समय हम सर्वप्रथम एक बाल्टी (20 लीटर) एवं जग लेते हैं बाल्टी के निचले हिस्से में एक स्टॉप कार्क लगा होना चाहिए जिससे बाल्टी के तल में एकत्रित वर्मीवाश को निकालने में आसानी रहे। अब बाल्टी में टूटे हुए ईंट एवं पत्थर के टुकड़ों की सहायता से 10-15 सेमी. की मोटी परत भरते हैं इसके ऊपर 10-15 सेमी. की दूसरी परत मोटी बालू की भरते हैं, इसके पश्चात गाय के आंशिक विघटित गोबर की 30-40 सेमी. एक परत चढ़ाते हैं। इस गोबर की परत पर 2-3 सेमी. मोटी नम मिट्टी की एक परत चढ़ा दी जाती है। जब सभी सामग्री बाल्टी में ले लेते हैं, उसके बाद 60-80 की संख्या में केचुए बाल्टी में भरते हैं, फिर बाल्टी के ऊपरी हिस्से में 6 सेमी. मोटाई की धान की पुआल भरते हैं अब स्टॉप कार्क खुला रखके 7-8 दिनों तक प्रतिदिन पानी का हल्का छिड़काव करते हैं जिससे केचुओं के लिए उपयुक्त नमी बनी रहे। अब 10 दिनों के पश्चात तरल वर्मीवाश बाल्टी के तल में इकट्ठा होता जाता है। अब प्रत्येक सप्ताह 5-6 लीटर वर्मीवाश तैयार हो जाता है इसको हम स्टॉप कार्क की सहायता से किसी बर्तन व बोतल में निकाल लेते हैं एवं फसलों में छिड़काव करने से पूर्व पानी से द्रवित करते हैं जिससे इसकी अधिक सांद्रता से पौधों को नुकसान न होंवे। इस प्रकार किसान स्वयं ही वर्मीवाश का उत्पादन एवं गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं।

तैयार वर्मीवाश

वर्मीवाश एकत्रण

टैप बंद करके बर्तन के ऊपर पानी का छिड़काव करते हैं। पानी धीरे-धीरे कम्पोस्ट से प्रवाहित होते हुए सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ फिल्टर होता है। अगले दिन टैप से वर्मीवाश को एकत्रित करते हैं जिसका उपयोग पौधों में पर्णीय छिड़काव के लिए किया जाता है। वर्मीवाश को पानी के साथ 1:1 अनुपात में मिलाया जाता है या इसे 10% गोमूत्र से द्रवित किया जाता है। यह एक प्रभावी रोगनाशक की तरह उपयोग किया जाता है। वर्मीवाश तैयार होते ही इकाई से पुराने अवशिष्ट को समय-समय पर हटा दिया जाता है। अब एकत्रित वर्मीवाश का उचित संग्रहण किया जाता है एवं उपयोग के पहले द्रवित किया जाता है।

वर्मीवाश में पोषक तत्वों की माँग

पी0एच0	7.480 ± 0.03
इलेक्ट्रो कंडक्टिविटी (डेसी साइमन/मीटर)	0.25 ± 0.03
आर्गेनिक कार्बन (प्रतिशत)	0.008 ± 0.001
कुल जेलडाल नाइट्रोजन (प्रतिशत)	0.01 ± 0.005
उपस्थित फॉस्फेट (प्रतिशत)	1.69 ± 0.05
पोटैशियम (पी पी एम)	25 ± 2
कैल्शियम (पी पी एम)	3 ± 1
कॉपर (पी पी एम)	0.01 ± 0.001
फेरस (पी पी एम)	0.06 ± 0.001
मैग्नीशियम (पी पी एम)	158.44 ± 0.03
मैगनीज (पी पी एम)	0.58 ± 0.040
जिंक (पी पी एम)	0.02 ± 0.001
कुल हेटेरोट्रॉप्स (सी एफ यू / मिली.)	1.79 x 103
नाइट्रोसोमोनास (सी एफ यू / मिली.)	1.01 x 103
कुल फंजाई (सी एफ यू / मिली.)	1.46 x 103
स्रोत : रामस्वामी, 2004 (पी पी एम)	

वर्मीवाश का उपयोग

वर्तमान कृषि परिवेश में अधिक लाभ प्राप्त करने एवं फसलों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए धान्य फसलों जैसे - चावल एवं मक्का आदि में वर्मीवाश का छिड़काव किया जा सकता है। वर्मीवाश का प्रयोग सब्जियों जैसे मुख्य रूप से भिण्डी, पालक, बैंगन, प्याज एवं आलू में इनकी गुणवत्ता एवं स्वाद बढ़ाने के लिए हो रहा है। वर्मीवाश के द्वारा इन फसलों में पौधों की लम्बाई, पत्तियों का आकार एवं फलों का आकार बढ़ता है एवं बाजार में वर्मीवाश से उत्पादित सब्जियों का दाम किसानों को अधिक प्राप्त होता है।

ISSN 2231 - 2455

वर्मीवाश का फसल उत्पादकता पर प्रभाव

कृषि वैज्ञानिकों द्वारा अध्ययन में यह पाया गया है कि वर्मीवाश के छिड़काव से पालक में 5 से 5.5 टन/हेक्टेयर, प्याज में 6 से 6.5 टन/हेक्टेयर एवं आलू में 7 से 7.5 टन/हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है जो कि सामान्य उत्पादन से 15-20 प्रतिशत अधिक हुई। मिर्च पर किये गये अध्ययन में पाया गया कि जैसे थ्रिप्स एवं माइट्स के नियन्त्रण हेतु वर्मीवाश का छिड़काव करके उचित प्रबन्धन किया जा सकता है। यह एक अच्छा रोगरोधी एवं कीटनाशक की भाँति कार्य करता है साथ ही इसमें उपस्थित विभिन्न हार्मोन्स पौधों में वृद्धि बढ़ाकर इसका उत्पादन बढ़ाते हैं।

वर्मीवाश का अनुप्रयोग

1. एक लीटर वर्मीवाश को 7-10 लीटर पानी में मिलाकर पत्तियों पर शाम के समय छिड़काव करते हैं।
2. एक लीटर वर्मीवाश को एक लीटर गोमूत्र में मिलाकर उसमें 10 लीटर पानी मिलाया जाता है फिर इसे रातभर के लिए रखकर ऐसे 50-60 लीटर वर्मीवाश का छिड़काव एक हेक्टेयर क्षेत्र में फसलों में विभिन्न बीमारियों के रोकथाम हेतु करते हैं।
3. ग्रीष्मकालीन सब्जियों में शीघ्र पुष्पन एवं फलन के लिए पर्णीय छिड़काव किया जाता है जिससे उनके उत्पादन में वृद्धि होती है।

वर्मीवाश छिड़काव के समय सावधानियाँ

वर्मीवाश का छिड़काव शाम के समय करना चाहिए। वर्मीवाश एवं पानी का उचित अनुपात में घोल तैयार करना चाहिए। गोमूत्र के साथ वर्मीवाश का उपयोग रोगनाशी के रूप में उचित अनुपात में करना चाहिए। 4. छिड़काव करते समय हवा के विपरीत छिड़काव नहीं करना चाहिए। वर्षा के मौसम में यह ध्यान रखें कि बारिश होने की सम्भावना न हो।

वर्मीवाश तैयार करते समय सावधानियाँ

वर्मीवाश तैयार करने हेतु कभी भी ताजा गोबर का उपयोग नहीं करना चाहिए, इससे केंचुए मर जाते हैं। वर्मीवाश ईकाई हमेशा छायादार स्थान पर होना चाहिए जिससे केंचुए धूप से बच सकें। केंचुओं को साँप, मेंढ़क एवं छिपकली से बचाव का उचित प्रबन्ध करना चाहिए। स्वच्छ पानी का प्रयोग 20 दिनों तक नमी बनाए रखने हेतु करना चाहिए। वर्मीवाश इकाई को उचित स्टैण्ड पर रखना चाहिए जिससे वर्मीवाश एकत्र करने में आसानी हो। केंचुओं की उचित प्रजातियों का उपयोग करना चाहिए जैसे- *आइसीनिया फोटिडा*।

कैंसर के अंतिम चरण का भी इलाज संभव

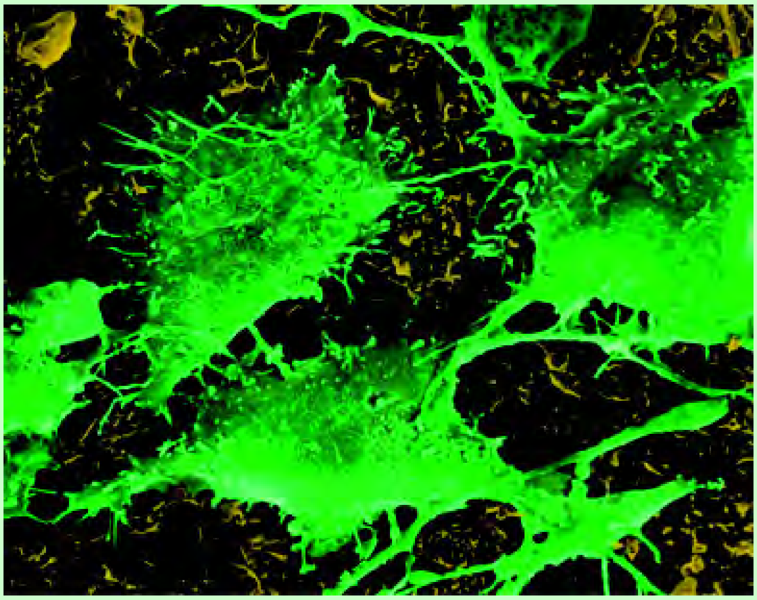

वैज्ञानिकों ने एक ऐसी दवा विकसित करने का दावा किया है जो कैंसर के अंतिम चरण से जूझ रहे मरीजों को न केवल सामान्य जीवन जीने का मौका मुहैया करायेगा, बल्कि उन्हें ज्यादा दिनों तक जीवित रखने में मदद भी करेगा। उनका कहना है कि यह दवा उन मरीजों के लिए भी कारगर हो सकती है जिन्हें डॉक्टर कुछ महीने का मेहमान बता चुके हों।

निवोलमैब नामक इस दवा का इस्तेमाल किडनी के कैंसर के लिए किया जाता है, जिसका उपचार काफी कठिन है। वास्तव में यह एक तरह की एंटीबॉडी है जो किडनी के कैंसर का नया उपचार है। शोधकर्ताओं ने इस दवा का इस्तेमाल कैंसर से पीड़ित कुछ ऐसे लोगों पर किया जो इस घातक बीमारी के अंतिम चरण में पहुँच चुके थे। उन्हें यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि दवा दिए जाने के बाद उन मरीजों की हालत में न केवल सुधार देखा गया, बल्कि उनमें से कई तो अपने काम पर भी लौटने में सक्षम हो गए।

इस दवा का इस्तेमाल कैंसर के वैसे कुछ मरीजों पर भी किया गया जो डॉक्टरों के अनुसार केवल कुछ ही महीने जीवित रहने वाले थे। लेकिन दवा ने इन मरीजों की हालत में भी काफी सुधार किया जिससे वे अपनी दिनचर्या में लौट सके। इन मरीजों के फेफड़ों तक ट्यूमर फैल चुका था। इनके लीवर खराब हो चुके थे और इन्हें हर दो सप्ताह पर अस्पताल जाकर उपचार के लिए सूई लेने की जरूरत थी। शोधकर्ताओं ने कहा कि फिलहाल यह कहना जल्दबाजी होगी कि निवोलमैब कैंसर का एक मुकम्मल उपचार है या नहीं। लेकिन उन्होंने उम्मीद जताई यह दवा मरीजों को कम से कम छह सात साल तक का अतिरिक्त जीवन प्रदान करेगी।

विज्ञान कथा : बाल पाठकों के लिए विशेष

प्रोजेक्ट स्पेस एलीवेटर-स्वर्ग की सीढ़ी

विजय चित्तौरी*

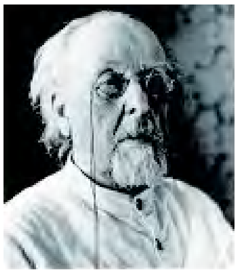

पितामह कोसैंटिन सिवोल्कोवस्की

22वीं सदी का पहला दिन याने 01 जनवरी सन् 2100, कोलम्बिया का एलीवेटर सीटी आज अंतरिक्ष जगत की एक महान उपलब्धि का साक्षी होने जा रहा है। इस घटना के अवलोकन हेतु कोलंबिया निवासी ही नहीं बल्कि दुनियाभर के हजारों मीडियाकर्मी, वैज्ञानिक, तकनीशियन एवं राजनीतिक हस्तियाँ यहाँ एकत्र हुई हैं।

मैं बात कर रहा हूँ स्वर्ग तक पहुँचने वाली उस लिफ्ट की जिसकी कल्पना लगभग दो सौ वर्ष पूर्व सन् 1903 में रूसी राकेट विज्ञान के पितामह कोसैंटिन सिवोल्कोवस्की ने की थी। धरती से 36000 किलोमीटर की ऊँचाई पर स्थित स्वर्ग जैसी सुन्दर अंतरिक्ष बस्ती 'स्पेस हेवेन' तक पहुँचने के लिए अब अंतरिक्ष यानों की खर्चीली और तकलीफदेह यात्रा से मुक्ति मिलेगी और लोग लिफ्ट केबिन में बैठकर आराम से यह यात्रा कर पायेंगे।

'प्राजेक्ट स्पेस एलीवेटर' की इस अति महत्वाकांक्षी परियोजना की शुरुआत 23 मार्च 2070 को हुई थी। तब शीर्ष अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' और भारतीय अंतरिक्ष संगठन 'इसरो' ने न्यूयार्क के राष्ट्र संघ भवन में दुनिया भर के शीर्ष अंतरिक्ष विज्ञानियों की एक बैठक बुलाई थी। बैठक में अंतरिक्ष बस्तियों के विस्तार में A आने वाली कठिनाइयों पर गहन विचार विमर्श हुआ। आम राय बनी कि अंतरिक्ष यानों का विकल्प खोजा जाना चाहिए। क्योंकि अंतरिक्ष बस्तियों की सामग्रियों और मानव को ढोने की इनकी क्षमता अत्यन्त सीमित है। इन यानों के विकल्प में बार-बार वैज्ञानिकों का ध्यान सिवोल्कोवस्की की परिकल्पना 'स्पेस एलीवेटर' पर केन्द्रित हुआ। अंत में सर्वसम्मति से 'प्रोजेक्ट स्पेस एलीवेटर' को हरी झंडी दे दी गयी। प्रोजेक्ट का जिम्मा 'इसरो' अध्यक्ष डॉ0 राजीव रंजन को दिया गया।

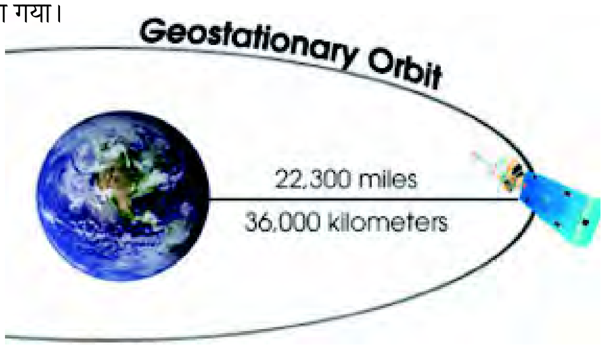

भूस्थैतिक कक्षा

इसमें पहली समस्या थी प्रोजेक्ट के लिए स्थान चयन की। काफी विचार विमर्श के बाद यह स्थान कोलंबिया में तय किया गया। इसके पीछे कारण यह था कि कोलंबिया भू-मध्य रेखा पर स्थित है। भू-मध्य रेखा पर पृथ्वी की गति सबसे ज्यादा होती है। यहाँ खड़ी की गयी लिफ्ट की केबल पृथ्वी की गति के कारण अपने आप ऊपर की ओर खिंची रहेगी। ऊपर खिंची रहने के बावजूद उसे स्थिर बनाने के लिए 36000 किलोमीटर की ऊँचाई पर भूस्थिर कक्ष में केबल को एक खूँटी में बँधा होना चाहिए। इसके लिए डॉ0 राजीव रंजन करीब दस किलोमीटर व्यास वाले किसी धूमकेतु अथवा क्षुद्रग्रह (एस्टेरॉयड) को वहाँ स्थापित करना चाहते हैं। ऐसे किसी आकाशी पिण्ड की खोज का काम आसान नहीं था। धूमकेतु तो कभी-कभी आते हैं। लेकिन क्षुद्रग्रह अक्सर अपनी कक्षा से छिटककर मंगल अथवा पृथ्वी की कक्षा में आ जाते हैं। डॉ0 रंजन ने ऐसे ही किसी पिण्ड को खोजने का निश्चय किया और इसका जिम्मा मशहूर खगोल वैज्ञानिक तथा अनुभवी अंतरिक्ष यात्री डॉ0 सलीम को सौंप दिया।

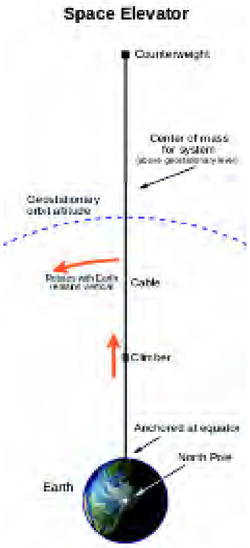

स्पेश एलीवेटर

दूसरी और सबसे बड़ी समस्या थी 36000 किलोमीटर लम्बी केबल के निर्माण की जिस पर स्पेस लिफ्ट दौड़ेगी। इसके लिए डॉ0 राजीव रंजन ने चन्द्रबस्ती के निदेशक जान मूर से विचार विमर्श किया। दरअसल चन्द्रमा पर टाइटेनियम धातु बहुतायत मात्रा में मौजूद है। यह लोहे या स्टील से काफी हल्की और उनकी अपेक्षा काफी मजबूत होती है। जॉन मूर चन्द्रमा पर पहले ही टाइटेनियम उत्पादन का एक विशाल कारखाना लगा चुके हैं। अंतरिक्ष बस्तियों के निर्माण में इसी कारखाने से टाइटेनियम उपलब्ध करवाया गया है।

स्पेस केबल के निर्माण में बहुत धन की आवश्यकता थी। इसके लिए राष्ट्रसंघ ने स्पेस एलीवेटर कोष की स्थापना की। दुनिया भर के राष्ट्रों से दिल खोलकर उसमें दान देने की अपील की गयी। सभी राष्ट्रों ने मुक्तहस्त से कोष में दान किया भी। चन्द्रमा पर विशाल टाइटेनियम कारखाने की स्थापना की गयी। कारखाने के लिए आवश्यक ऊर्जा के लिए चन्द्रमा के अंतरिक्ष में विशाल सोलर प्लांट स्थापित किया गया। इस तरह एलीवेटर केबल का निर्माण जोर-शोर से चालू हो गया।

*विज्ञान कथाकार, विज्ञान परिषद प्रयाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद-211 002.

टाइटेनियम

कल्पना चावला अंतरिक्ष वेधशाला' का नियंत्रण कक्ष। खगोल वैज्ञानिक डॉ0 सलीम कम्प्यूटर स्क्रीन पर आँखें गड़ाये किसी 'आकाशी पिण्ड' का सूक्ष्म निरीक्षण कर रहे हैं। इसी समय कक्ष में महिला रोबो रीना ने प्रवेश किया। डॉ0 सलीम का ध्यान भंग हो गया। उन्होंने रीना पर निगाह डाली। वह हाथ में ट्रे लिए खड़ी मुस्कुरा रही थी। सलीम ने उसे सामने कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। रीना मेज के हुक में ट्रे को फँसा कर कुर्सी पर बैठ गयी।

ट्रे में दो ट्यूब थीं, एक पानी की दूसरी चाय की। दोनों टयूब ट्रे से बँधी थीं ताकि दोनों शून्य गुरुत्वाकर्षण में ट्रे से निकलकर कक्ष में तैरने न लगें। सलीम ने पानी की ट्यूब का ढक्कन खोला और ट्यूब को मुँह में लगाकर सारा पानी चूस लिया। खाली ट्यूब को उन्होंने रीना की तरफ बढ़ा दिया। अब डॉ0 सलीम चाय वाली ट्यूब का ढक्कन खोलकर उसे चुसुआ आम की तरह चूसने लगे। अवकाश के इन क्षणों के उपयोग तथा मन को हल्का करने की दृष्टि से उन्होंने रीना से कहा : 'रीना, काश तुम मानव होती?'

'मतलब सर...?' रीना ने कहा।

'मतलब ये कि तब तुम भी मेरे साथ चाय पीती। तब कितना अच्छा लगता।'

'ओह यस, लेकिन सर, तब चाय और पानी का खर्च कितना बढ़ जाता?'

'तुम ह्यूमनॉयड रोबो के साथ यही दिक्कत है। हमेशा नफा नुकसान की बात करने लगते हो। भावनाएँ क्या होती हैं इसे तुम लोग क्या जानो?'

'मुझसे कोई गलती तो नहीं हुई सर?'

'अरे नहीं रीना, तुमसे गलती हो ही नहीं सकती। तुम्हारी जैसी होशियार और जानकार महिला रोबो धरती पर भी नहीं हैं।'

रीना ने मुस्कुरा कर धन्यवाद दिया और बात की दिशा बदली। बोलीः 'सर आपके प्रोजेक्ट का क्या हुआ। किस क्षुद्रग्रह को पकड़ने की योजना है?'

डॉ0 सलीम ने अपनी बात को जरा विस्तार दिया। बोले-

'रीना, मैंने तुम्हें पहले ही बताया था कि मेरे निशाने पर तीन क्षुद्रग्रह हैंः AS 7031, AS 5001 तथा AS 9332, इसमें पहले का व्यास 5 किलोमीटर दूसरे का 25 किलोमीटर तथा तीसरे का 33 किलोमीटर है। इसमें दूसरा याने Aए 5001 हमारे निशाने पर है। सोच रहा हूँ कि इसे ही दो टुकड़ों में तोड़कर एक को खींच लाऊँ।

'बहुत अच्छा सर, हमारी हार्दिक शुभकामनाएँ।' कहती हुई रीना वहाँ से चली गयी। डॉ0 सलीम पुनः Aए 5001 के अध्ययन में जुट गये। अब तक डॉ0 सलीम धरती से करीब चार लाख किलोमीटर दूर स्थित इस पिण्ड की संरचना, आकार, आयतन, वजन आदि ज्ञात कर चुके हैं। िए 5001 बेडौल चट्टानी पिण्ड है जिसका आकर एक ऐसे बेलनाकार लम्बे आलू जैसा है जिसका बीच का हिस्सा धँसा हुआ है।

डॉ0 सलीम को अब Aए 5001 के उस बिन्दु को चिन्हित करना था जहाँ लेसर मिसाइल दाग कर उसे दो भागों में बाँटना था। क्षुद्रग्रह Aए 5001 को धरती की भू-स्थिर कक्षा में स्थापित करने के लिए कल्पना वेधशाला को आवश्यक उपकरणों से लैस किया गया है। वेधशाला में क्षुद्रग्रह को तोड़ने के लिए लेसर मिसाइल तो है ही। वहाँ से उपयुक्त टुकड़े को भूस्थिर कक्षा तक लाने के लिए अलग-अलग क्षमता वाले राकेटों से युक्त स्पेस क्रेन भी मौजूद हैं।

डॉ0 सलीम क्षुद्रग्रह के उस बिन्दु को पहले ही चिन्हित कर चुके थे जिस बिन्दु पर लेसर मिसाइल दागना हैं इस कार्य के लिए उन्हें स्पेस एलवेटर प्रोजेक्ट के डाइरेक्टर डॉ0 राजीव रंजन के आदेश की प्रतीक्षा थी।

डॉ0 राजीव रंजन 'इसरो' स्थित अपने दफ्तर से डॉ0 सलीम के संपूर्ण क्रिया कलाप पर निगाह रखे हुए थे। सब कुछ ठीक-ठाक देख उन्होंने अभियान को हरी झंडी दे दी।

डॉ0 रंजन की हरी झंडी मिलते ही सलीम ने लेसर मिसाइल दाग दिया। इस समय सलीम ही नहीं 'इसरो' स्थित अंतरिक्ष केन्द्र के वैज्ञानिक भी इस ऑपरेशन को अपने-अपने स्क्रीन पर देख रहे थे। प्रकाश की चाल से चलने वाली लेसर किरणों को क्षुद्रग्रह तक पहुँचने में समय ही कितना लगता। पलक झपकते ही एक विस्फोट के साथ क्षुद्रग्रह दो टुकड़ों में बँट गया था। अपने-अपने स्क्रीन पर इस दृश्य को देख रहे वैज्ञानिकों ने खुशी से तालियाँ बजाई। वे एक दूसरे को बधाई देने लगे। डॉ0 राजीव रंजन सहित दुनिया भर के तमाम वैज्ञानिकों के बधाई संदेश डॉ0 सलीम को मिलने लगे।

अब बारी आयी आपरेशन के अंतिम चरण की। डॉ0 सलीम को क्षुद्रग्रह के दोनों खण्डों का बारीकी से अध्ययन करना था और उनमें से एक का चुनाव करना था जिसे पृथ्वी के भू-स्थिर कक्षा में लाया जाये।

अंतरिक्ष में छोटे धूमकेतुओं और क्षुद्रग्रहों को पकड़ने और उन्हें इच्छित स्थान तक खींच कर ले जाने की तकनीक 21वीं सदी के मध्य तक विकसित हो चुकी थी। खनिज बहुल ऐसे कई पिण्डों को चन्द्रबस्ती और मंगल बस्ती तक ले जाया जा चुका था। यह कमाल स्पेस क्रेन की बदौलत हुआ था।

स्पेस क्रेन वास्तव में एक विशेष प्रकार से डिजाइन किया हुआ अंतरिक्ष यान है। इसमें विशाल रोबोटिक भुजाएँ और बहुत सारे कम और अधिक क्षमता वाले राकेट होते हैं। मानव रहित इस स्पेस क्रेन को पिण्ड तक भेजा जाता है। पृथ्वी, अंतरिक्ष, चन्द्रमा अथवा मंगल स्थित नियंत्रण कक्ष से स्पेस क्रेन और वांछित पिण्ड की गतिविधि पर नजर रखी जाती है। जब स्पेस क्रेन पिण्ड तक पहुँच जाता है तब क्रेन की रोबोटिक भुजाओं से पिण्ड को अच्छी तरह पकड़ लिया जाता है। अब क्रेन में मौजूद राकेटों की मदद से पिण्ड और स्पेस क्रेन को वांछित स्थान तक लाया जाता है।

स्पेस क्रेन को Aए 5001 की ओर रवाना कर दिया गया। सलीम ही नहीं चन्द्रबस्ती के अंतरिक्ष केन्द्र से भी उस पर निगाह रखी गयी। स्पेस क्रेन ने तय योजनानुसार ही कार्य किया। Aए 5001 के एक पिण्ड को सफलतापूर्वक पृथ्वी की भूस्थिर कक्षा तक लाया गया और उसे अंतरिक्ष कालोनी 'स्पेस हेवेन' सटाकर स्थापित कर दिया गया।

आखिरकार, वह ऐतिहासिक दिन आ ही गया जिसका सपना दो सौ वर्ष पूर्व रूसी राकेट विज्ञान के पितामह कोसैंटिन सिवोल्कोवस्की ने देखा था। स्पेस लिफ्ट बनकर तैयार हो गयी। आज इसका उद्घाटन है। कोलंबिया के एलवेटर सिटी मे आज स्पेस लिफ्ट और उद्घाटन समारोह को देखने के लिए दुनिया भर का अपार जन समूह उमड़ पड़ा है। नाच-गाने और धूम-धड़ाके के साथ समारोह सम्पन्न हुआ। स्पेस लिफ्ट से स्पेस हेवन याने स्वर्ग की यात्रा के लिए लिफ्ट के पहले यात्री के रूप में दुनिया की पन्द्रह शीर्ष हस्तियाँ सवार हुई हैं। उनमें प्रोजेक्ट स्पेस एलवेटर के प्रधान डॉ0 राजीव रंजन, राष्ट्र संघ अध्यक्ष डॉ0 इरान जोरोविच, खगोलविद और अंतरिक्ष यात्री डॉ0 सलीम भी हैं। लिफ्ट आपरेटर ने लिफ्ट का बटन दबाया। हलकी सी सूँ....की आवाज हुई और लिफ्ट तीर की तरह आकाश में जाती दिखी और थोड़ी ही देर में लुप्त हो गयी। उपस्थित विशाल जनसमुदाय देर तक हर्षोलास से तालियाँ बजाता रहा।

हमें अपना हक अदा करना है

पिछले कुछ वर्षों से निश्चित रूप से पर्यावरण के बारे में जागरूकता बढ़ी है और यह शुभ संकेत है। विशेषकर भारत जैसे आबादी बहुल देश के लिए जहाँ कृषि और उद्योगों के कारण धरती पर बहुत अधिक दबाव पड़ता है और इस दबाव के दुष्प्रभाव खतरनाक होते हैं। ऐसी स्थिति में पर्यावरण के मुद्दे को गंभीरता से लने की जरूरत है, ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए हम अपने इस सबसे सुंदर ग्रह यानी पृथ्वी को सुरक्षित रख सकें।

कहा जाता है कि धरती हमारे पुरखों की अमानत नहीं है, बल्कि हमारे अपने बच्चों का कर्ज है हम पर। हमारा हर एक छोटा कदम हमारी धरती और इसके भविष्य को प्रभावित करता है। अगली पीढ़ी के प्रति यह हमारा कर्तव्य है कि अपनी पीढ़ी द्वारा पैदा की गई समस्याओं को हम सुलझाएँ।

आमतौर पर, पर्यावरण पर हमारी चर्चा शहरों के प्रदूषण और स्वच्छता को लेकर शिकायत के तहत होती है कि कैसे हर छोटी-बड़ी जगह कूड़े-कचरे से भरी पड़ी है। हम फुटपाथ पर चल रहे हैं और उस पर केले-संतरे छिलके, कागज और चॉकलेट, बिस्कुटों के रैपर हवा में उड़ रहे हैं। रिहायशी इलाकों में सड़क के किनारे कूड़े-कचरे का गंधाता ढ़ेर लगा हुआ है। सरकार और म्यूनिसिपैलिटियाँ इसे नियंत्रित करने के कितने कम प्रयास कर रही हैं और हम नाक पर रुमाल दबाकर आगे बढ़जाते हैं। अगर हम एक पल रुककर इस पर सोचें, तो पाएँगे कि ऐसा बहुत कुछ है, जिसे एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में हम स्वयं करके स्थिति को बेहतर बना सकते हैं।

ISSN 2231 - 2455

इसरो का भावी मिशन
एक नई पृथ्वी 'अर्थ-2' की खोज

शशांक द्विवेदी*

क्या हमारी पृथ्वी की तरह कोई और पृथ्वी इस ब्रह्माण्ड में है जहाँ जीवन की संभावना हो सकती है? इस सवाल का जवाब लगता है अब मिल गया है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के केप्लर मिशन ने पृथ्वी जैसा एक दूसरा ग्रह खोजने का दावा किया है। नासा के वैज्ञानिकों ने एक तारे की कक्षा में घूम रहे पृथ्वी के आकार के ग्रह को ढूँढ लिया है। ये ग्रह सौरमंडल के अंदर ही हैं और इस पर पानी की मौजूदगी होने की संभावना है। खगोल वैज्ञानिकों ने वैसे तो पिछले कुछ सालों के दौरान हमारे सौरमंडल से बाहर अनेक नए ग्रहों का पता लगाया है और इनमें से कुछ ग्रहों को संभावित पृथ्वी के रूप में भी देखा गया है, लेकिन यह पहला मौका है जब किसी ग्रह में पृथ्वी जैसे गुण देखे गये हैं।

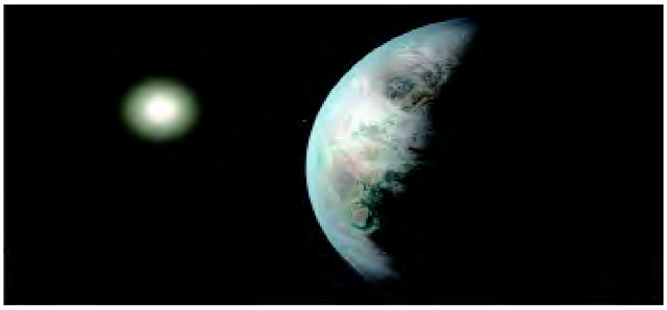

एक नई पृथ्वी यानी केप्लर-452बी, स्रोत-नासा द्वारा जारी ग्राफिक्स

केप्लर अंतरिक्ष दूरबीन से मिले ग्रह को केप्लर 452बी नाम दिया गया है। सौरमंडल से बाहर मिला यह ग्रह हमारी धरती की तरह है। केप्लर-452बी नाम का यह ग्रह जी2 जैसे सितारे की परिक्रमा जीवन के लायक क्षेत्र में कर रहा है। जी2 तारा भी हमारे सूर्य के जैसा है। पृथ्वी की तरह ही इसका अपना सूरज है। शोध के मुताबिक, 'केप्लर 452बी' पृथ्वी की ही तरह चट्टानी है। यह अपने तारे से यह उतना ही दूर है, जितना सूरज से पृथ्वी। यह न ज्यादा गर्म है और ना ही ज्यादा ठंढ़ा। इस कारण इस पर पानी और जिंदगी होने की उम्मीद है। पृथ्वी की तरह वहाँ जीवन होने की उम्मीद के कारण इसे 'अर्थ-2' के नाम से भी पुकारा जा रहा है। इस ग्रह की परिस्थितियाँ जीवन के अनुकूल हैं और खास बात यह है कि यह ग्रह अपने सूरज जैसे तारे के जीवन-अनुकूल क्षेत्र में ही चक्कर काट रहा है।

पृथ्वी से बाहर जीवन ढूँढने की नासा की कोशिशों में इस खोज को बहुत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। नासा के स्पेस टेलीस्कोप केप्लर ने इस ग्रह की खोज की है। इसे 2009 में लान्च किया गया था। इसने 2015 में गोल्डिलॉक जोन (जीवन की संभावना वाले) में आठ नए ग्रहों की खोज की है। 0.95 डायमीटर वाला ये टेलीस्कोप करीब एक लाख तारों पर

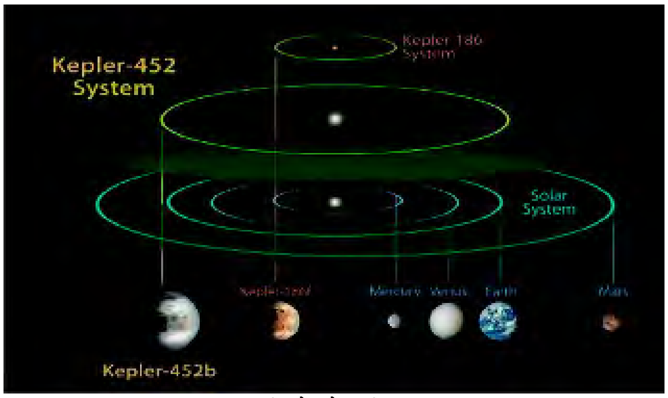

नासा की ओर से जारी ग्राफिक्स

नजर रखता है। नासा ने कहा है कि धरती के जैसी नई दुनिया में जीने की पर्याप्त परिस्थिति मौजूद है। बताया गया है कि यदि पौधों को वहाँ ले जाया जाए तो वे वहाँ भी जिंदा रह सकते हैं। नासा के मुताबिक हमारी धरती के जैसी परिस्थिति में अपने सितारे का चक्कर काट रहा ग्रह जीवन की सभी परिस्थितियों और संभावनाओं को समेटे हुए है।

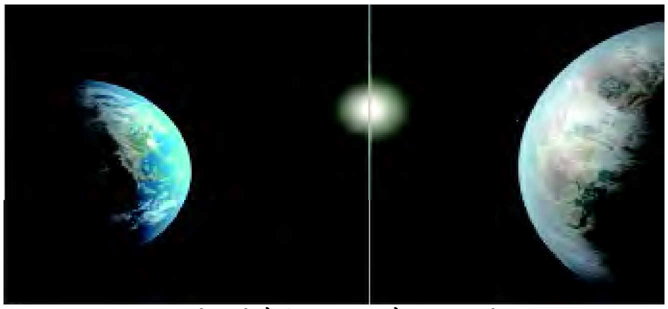

हमारी पृथ्वी से मिलता-जुलता केप्लर-452बी

यह भी पृथ्वी की तरह अपने ग्रह का चक्कर लगाता है जिसमें 385 दिन लगते हैं। इसकी परतें भी पृथ्वी की तरह चट्टानी हैं। 'अर्थ-2' का तापमान भी पृथ्वी की तरह है। अनुमान है कि अगर यहाँ ऐसा धरातल है तो फिर जीवन संभव है। यह पृथ्वी से 1400 प्रकाश वर्ष दूर है। यह आकार में पृथ्वी से डेढ़ गुना बढ़ा हो सकता है। केप्लर 452बी का पैरेंट स्टार केप्लर 452 छह अरब साल पुराना है। यह हमारे सूरज से भी 1.5 अरब साल बड़ा है और 20 प्रतिशत ज्यादा चमकीला है। नए ग्रह पर बहुत सारे बादल और सक्रिय ज्वालामुखी होने की संभावना है। अब तक खोजे गये ग्रहों में यह ग्रह पृथ्वी से सबसे ज्यादा मेल खाता है। इसी वजह से वैज्ञानिक इसे पृथ्वी की बहन और पृथ्वी-2 भी कह रहे हैं।

* उप-निदेशक (अनुसंधान), मेवाड़ यूनिवर्सिटी, चित्तौड़गढ़, राजस्थान.

गोल्डीलाक क्षेत्र

केप्लर 452बी, अरबों सालों से अपने तारे से उचित दूरी पर है, गोल्डीलाक क्षेत्र में अर्थात् जीवन के योग्य क्षेत्र में है। केप्लर 452बी पर जीवन के लिए सबसे महत्वपूर्ण तत्व पानी होने की सबसे ज्यादा संभावना मौजूद है। वैज्ञानिकों का कहना है कि इसकी सतह के नीचे ज्वालामुखी भी हो सकते हैं। गोल्डीलाक क्षेत्र तारे से उस दूरी वाले क्षेत्र को कहा जाता है जहाँ पर कोई ग्रह अपनी सतह पर द्रव जल रख सकता है तथा पृथ्वी जैसे जीवन का भरण-पोषण कर सकता है। यह निवास योग्य क्षेत्र दो क्षेत्रों का प्रतिच्छेदन (intersection) क्षेत्र है जिन्हें जीवन के लिये सहायक होना चाहिए; इनमें से एक क्षेत्र ग्रहीय प्रणाली का है तथा दूसरा क्षेत्र आकाशगंगा का है। इस क्षेत्र के ग्रह और उनके चन्द्रमा जीवन की संभावना के उपयुक्त हैं और पृथ्वी के जैसे जीवन के लिये सहायक हो सकते हैं। सामान्यतः यह सिद्धांत चन्द्रमाओं पर लागू नहीं होता, क्योंकि चन्द्रमाओं पर जीवन उसके मातृ ग्रह से दूरी पर भी निर्भर करता है तथा हमारे पास इस बारे में ज्यादा सैद्धांतिक जानकारी नहीं है।

निवासयोग्य क्षेत्र (गोल्डीलाक क्षेत्र) ग्रहीय जीवन क्षमता से अलग है। किसी ग्रह के जीवन के सहायक होने की परिस्थितियों को ग्रहीय जीवन क्षमता कहा जाता है। ग्रहीय जीवन क्षमता में उस ग्रह के कार्बन आधारित जीवन के सहायक होने के गुण का समावेश होता है; जबकि निवासयोग्य क्षेत्र (गोल्डीलाक क्षेत्र) में अंतरिक्ष के उस क्षेत्र के कार्बन आधारित जीवन के सहायक होने के गुण का। यह दोनों अलग-अलग हैं। उदाहरण के लिये हमारे सौरमंडल के गोल्डीलाक क्षेत्र में शुक्र, पृथ्वी और मंगल तीनों ग्रह आते हैं लेकिन पृथ्वी के अलावा दोनों ग्रह (शुक्र और मंगल) में जीवन की सहायक परिस्थितियाँ अर्थात् ग्रहीय जीवन क्षमता नहीं है।

मील का पत्थर

नासा ने अभी तक रहने लायक 12 ग्रहों की खोज की है और दूसरी पृथ्वी की खोज इस दिशा में एक मील का पत्थर है। नासा के साइंस मिशन डाइरेक्टरेट के सहायक प्रशासक जॉन ग्रुंसफेल्ड ने कहा कि इस उत्साहवर्द्धक परिणाम ने हमें अर्थ 2.0 की खोज के काफी करीब पहुँचा दिया है। नया ग्रह ऐसे क्षेत्र में है जिसे रहने योग्य या गोल्डीलॉक्स जोन के रूप में जाना जाता है। तारे के आसपास का यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ परिक्रमा करने वाले ग्रह की सतह पर तरल पानी काफी मात्रा में मौजूद रह सकता है। अगर कोई ग्रह अपने तारे से ज्यादा नजदीक होगा तो काफी गर्म होगा और ज्यादा दूर होगा तो काफी ठंडा। केप्लर 452बी, अरबों सालों से अपने तारे से उचित दूरी पर है। यह ग्रह हमारी पृथ्वी से थोड़ा ज्यादा बड़ा है। माना जा रहा है कि इसकी ग्रैविटी पृथ्वी के मुकाबले दोगुनी होगी। वैज्ञानिकों का कहना है कि इतने गुरुत्वाकर्षण में इंसान जिंदा रह सकते हैं। यह भी माना जा रहा है कि ऐसे मौसम में पौधे भी अपना जीवन जी सकते हैं। इस ग्रह का तारा हमारी पृथ्वी के तारे यानी सूरज की तरह ही प्रकाश देता हैं। अगर यहाँ पर चट्टानें हुई और वातावरण विकसित हुआ तो आप धूप भी सेक सकते हैं।

ज्यादातर जो बातें सामने आई हैं उनसे यह साफ होता है कि वहाँ भी जीवन की भरपूर संभावनाएँ हैं। केप्लर 452बी यानी हमारी नई पृथ्वी या अर्थ 2.0 हमसे 1400 प्रकाश वर्ष दूर है (एक प्रकाश वर्ष यानी प्रकाश एक वर्ष में जितनी दूरी तय करता है) जिसे यहाँ पहुँचने में ही अरबों साल लग जायेंगे। इसलिए फिलहाल यहाँ जाना असंभव लगता है लेकिन नासा की यह खोज भविष्य के लिए महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

केप्लर अन्तरिक्ष यान

केप्लर अंतरिक्ष यान अमेरिकी अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान, नासा का एक अंतरिक्ष यान है, जिसका काम सूर्य से भिन्न किन्तु उसी तरह के अन्य तारों के इर्द-गिर्द ऐसे गैर-सौरीय ग्रहों को ढूँढ़ना है जो पृथ्वी से मिलते-जुलते हों और उन पर जीवन की संभावना हो। केप्लर को 7 मार्च 2009 में अंतरिक्ष में भेजा गया था, जहाँ यह अब पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है और अन्य तारों पर अपनी नजरें रखे हुए है।

केप्लर अंतरिक्ष में जाने वाला अब तक का सबसे बड़ी टेलीस्कोपिक कैमरा है। यह हमारे सूर्य जैसे एक लाख तारों पर नजर रखते हुए अंतरिक्ष में रहेगा। इसे फ्लोरिडा के केप कनैवरल एयरफोर्स स्टेशन से प्रक्षेपित किया गया था। इसे कॉलराडो के बॉल एयरोस्पेस टेक्नॉलजीस ने बनाया है। इस मिशन पर लगभग 30 अरब रुपये के बराबर खर्च आया है। केप्लर तारों के सामने से ग्रहों के गुजरने के दौरान तारों की चमक में आई कमी को दर्ज करके इन ग्रहों को खोज रहा है। केप्लर अंतरिक्ष वेधशाला अपने अभियान में सफल रहा है और इसने जनवरी 2015 तक 1000 से ज्यादा ग्रह खोज निकाले हैं। केप्लर से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार हमारी आकाशगंगा में पृथ्वी के जैसे 40 अरब ग्रह होने चाहिए।

इसरो के भावी मिशन

मंगलयान एवं चन्द्रयान-1

मंगल यान और चंद्रयान-1 की सफलता के साथ-साथ अंतरिक्ष में प्रक्षेपण का शतक लगाने के बाद इसरो चार और महत्वपूर्ण मिशनों पर कार्य तेज करने जा रहा है। इनमें पहल कदम है अंतरिक्ष में मानव मिशन भेजना। दूसरा मिशन चंद्रमा की सतह पर एक रोवर उतारना और तीसरा मिशन सूर्य के अध्ययन के लिए आदित्य उपग्रह का प्रक्षेपण करना है। चौथा मिशन रीयूजेबल लॉन्च वेहिकल है। इन सभी महत्वपूर्ण मिशनों को अगले चार सालों के भीतर अंजाम दिया जाएगा। मंगल की कक्षा में सफलतापूर्वक मंगलयान के पहुँचने के बाद इसरो के वैज्ञानिक अभियान की सफलता को लेकर काफी आश्वस्त हैं।

इसरो का मानवयुक्त अंतरिक्ष कार्यक्रम

चन्द्रयान-1 व मंगल यान की कामयाबी के बाद भारत की निगाहें अब आउटर स्पेस पर हैं। इसरो ग्रहों की तलाश के लिए मिशन भेजने की योजना बना रहा है। खास बात यह है कि इसमें एक मानव मिशन भी शामिल है। मानव स्पेस फ्लाइट कार्यक्रम का उद्देश्य पृथ्वी की निचली कक्षा (Leo) के लिए दो में से एक चालक दल को ले जाने और पृथ्वी पर एक पूर्वनिर्धारित गंतव्य के लिए सुरक्षित रूप से उन्हें वापस जाने के लिए एक मानव अंतरिक्ष मिशन शुरू करने की है। कार्यक्रम इसरो द्वारा तय चरणों में लागू करने का प्रस्ताव है। वर्तमान में पूर्व परियोजना गतिविधियाँ

क्रू मॉड्यूल, पर्यावरण नियंत्रण और लाइफ सपोर्ट सिस्टम (ECLSS), क्रू एस्केप सिस्टम, आदि महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों के विकास पर इसरो ध्यान दे रहा है।

पृथ्वी की निचली कक्षा के लिए मनुष्य को ले जाने और उनकी सुरक्षित वापसी सुनिश्चित करने के लिए मानव अंतरिक्ष उड़ान शुरू करने के लिए एक अध्ययन इसरो द्वारा किया गया है।

देश की क्षमता का निर्माण और प्रदर्शन करने के उद्देश्य से साथ मानव मिशन उपक्रम से संबंधित तकनीकी और प्रबंधकीय मुद्दों का अध्ययन इसरो कर रहा है। कार्यक्रम के बारे में 300 किलोमीटर पृथ्वी की निचली कक्षा और उनकी सुरक्षित वापसी के लिए 2 या 3 चालक दल के सदस्यों को ले जाने के लिए एक पूरी तरह से स्वायत्त कक्षीय वाहन के विकास की परिकल्पना की गई है। इसके लिए वैज्ञानिक अध्ययन का कार्य करीब-करीब पूरा कर लिया गया है। कुछ आवश्यक मंजूरियाँ मिलने के बाद अंतरिक्ष यान के निर्माण की प्रक्रिया शुरू की जाएगी। अंतरिक्ष में जाने वाली इसरो की पहली मानव फ्लाइट में दो यात्री होंगे। यह फ्लाइट अंतरिक्ष में सौ से नौ सौ किलोमीटर ऊपर तक जाएगी।

चंद्रयान-2 मिशन

जीएसएलवी प्रक्षेपण यान द्वारा प्रस्तावित इस अभियान में भारत में निर्मित एक लूनर ऑर्बिटर (चन्द्रयान), एक रोवर एवं एक लैंडर शामिल होंगे। इसरो के अनुसार यह अभियान विभिन्न नयी प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल तथा परीक्षण के साथ-साथ नए प्रयोगों को भी करेगा। पहिएदार रोवर चन्द्रमा की सतह पर चलेगा तथा ऑन-साइट विश्लेषण के लिए मिट्टी या चट्टान के नमूनों को एकत्र करेगा। आँकड़ों को चंद्रयान-2 ऑर्बिटर के माध्यम से पृथ्वी पर भेजा जायेगा। इस अभियान को श्रीहरिकोटा के सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से जियोसिंक्रोनस सेटेलाइट लॉन्च वेहिकल एमके-II द्वारा भेजे जाने की योजना है। उड़ान के समय इसका वजन लगभग 2,650 किग्रा. होगा।

ऑर्बिटर को इसरो द्वारा डिजाइन किया जायेगा और यह 200 किलोमीटर की ऊँचाई पर चन्द्रमा की परिक्रमा करेगा। इस अभियान में ऑर्बिटर को पाँच पेलोड के साथ भेजे जाने का निर्णय लिया गया है। तीन पेलोड नए हैं, जबकि दो अन्य चंद्रयान-1 ऑर्बिटर पर भेजे जाने वाले पेलोड के उन्नत संस्करण हैं। चन्द्रमा की सतह से टकराने वाले चन्द्रयान-1 के लूनर प्रोब के विपरीत, लैंडर धीरे-धीरे नीचे उतरेगा। लैंडर तथा रोवर का वजन लगभग 1250 किग्रा. होगा। रोवर सौर ऊर्जा द्वारा संचालित होगा। रोवर चन्द्रमा की सतह पर पहियों के सहारे चलेगा, मिट्टी और चट्टानों के नमूने एकत्र करेगा, उनका रासायनिक विश्लेषण करेगा और डाटा को ऊपर ऑर्बिटर के पास भेज देगा जहाँ से इसे पृथ्वी के स्टेशन पर भेज दिया जायेगा।

पहले यह अभियान इसरो और रूसी अंतरिक्ष एजेंसी (रोसकोसमोस) द्वारा संयुक्त रूप से किया जाना था जिसमें तय किया गया था कि ऑर्बिटर तथा रोवर की मुख्य जिम्मेदारी इसरो की होगी तथा रोसकोसमोस लैंडर के लिए जिम्मेदार होगा। लेकिन अब यह पूरा अभियान इसरो ही संभालेगा जिसमें आर्बिटर, रोवर तथा लैंडर के लिए जिम्मेदार होगा। लेकिन अब यह पूरा अभियान इसरो ही संभालेगा जिसमें ऑर्बिटर, रोवर तथा लैंडर तीनों ही इसरो डिजाइन करेगा।

इसरो का 'आदित्य' (मार्स मिशन के बाद सन मिशन)

मंगल यान और चंद्रयान-1 की सफलता से उत्साहित इसरो के वैज्ञानिकों ने 'आदित्य' नामक मिशन की योजना तैयार की है। अंतरिक्ष सम्बंधी वृहद् योजना से जुड़े इस आदित्य मिशन को अगले एक-दो सालों में प्रारम्भ किए जाने की योजना है। आदित्य एक उपग्रह है, जो सोलर 'कोरोनाग्राफ' यन्त्र की मदद से सूर्य के सबसे भारी भाग का अध्ययन करेगा। इससे कॉस्मिक किरणों, सौर आँधी और विकिरण के अध्ययन में मदद मिलेगी।

अभी तक वैज्ञानिक सूर्य के भारी भाग कोरोना का अध्ययन केवल सूर्यग्रहण के समय में ही कर पाते थे। इस मिशन की मदद से सौर वालाओं और सौर हवाओं के अध्ययन में जानकारी मिलेगी कि ये किस तरह से धरती पर इलेक्ट्रिक प्रणालियों और संचार नेटवर्क पर असर डालती हैं। इससे सूर्य के कोरोना से धरती के भू-चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले बदलावों के बारे में घटनाओं को समझा जा सकेगा। इस सोलर मिशन की मदद से तीव्र और मानव निर्मित उपग्रहों और अन्तरिक्षयानों को बचाने के उपायों के बारे में पता लगाया जा सकेगा। इस उपग्रह का वजन 100 किग्रा होगा। ये उपग्रह सूर्य कोरोना का अध्ययन कृत्रिम ग्रहण द्वारा करेगा। इसका अध्ययन काल 10 वर्ष रहेगा। ये नासा द्वारा सन् 1995 में प्रक्षेपित 'सोहो' के बाद सूर्य के अध्ययन में सबसे उन्नत उपग्रह होगा।

आदित्य सूर्य के कोरोना की गर्मी और उससे होने वाले उत्सर्जन के रहस्य को भी सुलझाने में मदद करेगा। सूर्य कोरोना का टेंपरेचर लाखों डिग्री है। पृथ्वी से कोरोना सिर्फ पूर्ण सूर्यग्रहण के दौरान ही दिखाई देता है। यह भारतीय वैज्ञानिकों की इस तरह की पहली कोशिश होगी। कोरोना के अध्ययन से सोलर एक्टिविटी कंडीशंस के बारे में अहम जानकारियाँ मिल सकेंगी। अब तक सिर्फ अमेरिका, यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी और जापान ने सूरज के अध्ययन की लिए स्पेसक्राफ्ट भेजे हैं। 'आदित्य' के प्रक्षेपण के बाद निसंदेह अंतरिक्ष के क्षेत्र में भारत की दखल और बढ़ जाएगी। सूर्य मिशन बहुत महत्वपूर्ण है और वैश्विक अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में अपनी तरह का एक विशिष्ट मिशन है इसलिए इसरो के वैज्ञानिकों को इस मिशन से भारी उम्मीदें हैं।

रीयूजेबल लाँच वेहिकल

पुनः प्रयोज्य प्रक्षेपण प्रणाली या रीयूजेबल लाँच वेहिकल (या पुनः प्रयोज्य प्रक्षेपण यान, RLV) एक से अधिक बार अंतरिक्ष में प्रक्षेपण लाँच करने में सक्षम है। पुनः प्रयोज्य प्रक्षेपण वाहन-प्रौद्योगिकी प्रदर्शक (आरएलवी-टीडी) पूरी तरह से पुनः उपयोग के योग्य प्रक्षेपण वाहन को साकार करने की दिशा में पहला कदम है। इस उद्देश्य के लिए एक पुनः प्रयोज्य प्रक्षेपण वाहन पंखों वाला प्रौद्योगिकी प्रदर्शक (आरएलवी-टीडी) कॉन्फिगर किया गया है। आरएलवी-टीडी विभिन्न प्रौद्योगिकियों मसलन हाइपरसोनिक उड़ान, स्वायत्त लैंडिंग, संचालित क्रूज की उड़ान और हाइपरसोनिक उड़ान के लिए एक टेस्ट बेड की तरह काम करेगा जो हवा में प्रणोदन का उपयोग कर सकेगा। अंतरिक्ष के लिए उपयोग की लागत अंतरिक्ष अन्वेषण और अंतरिक्ष उपयोग में बड़ी बाधा है। एक पुनः उपयोग योग्य प्रक्षेपण यान कम लागत, विश्वसनीय और जरूरत के समय अंतरिक्ष तक पहुँच रखने के लिए एक अच्छा विकल्प है।

डिजिटल इण्डिया बदलेगा देश की तस्वीर

डॉ0 संयुक्ता कुमारी*

भारत वर्ष के क्षेत्रफल, जनसंख्या, भाषाओं और अन्य विविधताओं के चलते समस्त सुविधाओं और कार्यक्रमों की जानकारी प्रत्येक नागरिक तक पहुँचाना एक दुरूह कार्य था। मिजोरम में बैठे मरीज के लिए बिना बड़े शहर जाऐ यह जान पाना एक अंसभव कार्य था कि कहीं उसे कैंसर तो नहीं है, और अगर है, तो किस स्तर का है? डिजिटल क्रान्ति ने उसकी इस समस्या का निदान किया; हाल ही में कैंसर इलाज के लिए विख्यात टाटा मेमोरियल अस्पताल के डाक्टरों ने ऐसे मोबाइल एप्लीकेशन को तैयार किया है, जिसे मोबाइल में डाउनलोड करने के बाद, एप्लीकेशन द्वारा माँगी गयी सूचनाओं को भरने पर यह जाना जा सकता है कि मरीज को कैंसर है कि नहीं, और अगर है तो उसका स्तर क्या है और कैंसर बढ़ने वाली प्रवृत्ति का है या नहीं। यही नहीं, अपनी इस सफलता से उत्साहित होकर अस्पताल के चिकित्सकों ने फरवरी 2016 तक इस एप्लीकेशन में उन जानकारियों को जाड़ने की तैयारी कर ली है, जो मरीजों और उनके परिजनों के लिए अति-लाभप्रद होगी।

टाटा मेमोरियल की ये डिजिटल पहल इस बात को दर्शाती है कि डिजिटल क्रांति किस तरह से भारत की तस्वीर बदल रही है। डिजिटल पहल का दूसरा सुखद पहलू यह भी है कि इसके चलते पर्यावरण की भी रक्षा हो रही है। सिर्फ इस कैंसर डिटेक्शन एप्लीकेशन को बनाने से टाटा मेमोरियल अस्पताल ने उस हजारों टन कागज की बचत कर ली है, जिस पर कैंसर डिटेक्शन से संबन्धित जानकारी देने हेतु किताबें छापी जाती थीं। इसके साथ ही इन किताबों को लाने और देश के विभिन्न कोनों में भेजने की झंझट और खर्च भी समाप्त हो गया।

'डिजिटल इंडिया' भारत सरकार की वह दूरद्रष्टा योजना है, जिसके तहत कश्मीर से कन्याकुमारी तक के नागरिकों को सरकारी सेवाओं की ऑनलाइन सुविधा के माध्यम से घर बैठे पहुँच होगी। डिजिटल इण्डिया वस्तुतः इंटरनेट, नेटवर्किंग, हार्डवेयर, मोबाइल, कंप्यूटर, सॉफ्टवेयर के समन्वय से बनाया गया एक ऐसा मंच है, जो नागरिकों को सरकार से सीधा जोड़ता है, सुविधाओं के उपयोग को सरल बनाता है और सरकारी सेवाओं की जानकारी देता है। इस सुविधा से देश का कोई हिस्सा छूट ना जाए, इसके लिए देश के ग्रामीण क्षेत्रों को तीव्र गति के इंटरनेट नेटवर्क से जोड़ा जाएगा। इस योजना को सफल बनाने के लिए डिजिटल इंडिया के तीन मुख्य अवयव हैं।

1. देश में एक प्रभावी डिजिटल ढाँचे की स्थापना
2. सेवाओं व सुविधाओं का डिजिटल प्रदान
3. डिजिटल साक्षरता

इस योजना के तहत एक दोतरफा डिजिटल प्लेटफार्म का निर्माण किया जाएगा जिससे सेवा-प्रदाता और उपभोक्ता, दोनों एक दूसरे से जुड़ सकेंगे और लाभान्वित होंगे। इसकी सफलता सुनिश्चित करने के लिए इसे ''डिजिटल इण्डिया सलाहकार समूह'' द्वारा संचालित और नियंत्रित किया जाएगा, जो एक अंतर-मंत्रालयीय पहल है। इसके तहत सभी मंत्रालय व विभाग, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा, बैंकिंग, वाणिज्य, न्यायिक इत्यादि सेवाओं को डिजिटल रूप में उपलब्ध करायेंगे। इस सुविधा का लोग अधिकाधिक प्रयोग कर सकें, इसके लिए पूरे देश के 4 लाख इंटरनेट केंद्र, 2.5 लाख गाँवों में ब्रॉडबैंड सुविधा, 2.5 लाख विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में वाई-फाई सुविधा, नागरिकों के लिए सार्वजनिक वाई-फाई क्षेत्र उपलब्ध कराये जायेंगे। इस योजना के नौ प्रमुख स्तम्भ हैं।

1. ब्रॉडबैंड हाइवे

इसे तीन प्रमुख भागों में बाँटा गया है।

अ. सबके लिए ब्रॉडबैंड-ग्रामीण- इस योजना में वर्ष 2016 तक

*महिला वैज्ञानिक, रसायन शास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

ISSN 2231 - 2455

देश की 2.5 लाख ग्राम पंचायतों को नेशनल ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क के तहत ब्रॉडबैंड से जोड़ने की योजना है।

ब. सबके लिए ब्रॉडबैंड-शहरी- इस योजना के तहत शहरों में इंटरनेट संजाल में बढोत्तरी की जायेगी और भविष्य में होने वाले शहरी विकास और इमारतों में संचार के बुनियादी ढाँचे को अनिवार्य किया जाएगा।

स. राष्ट्रीय सूचना संरचना- इससे देश में नेटवर्क और कलाउड संरचना के एकीकरण का काम किया जाएगा। जिससे सरकारी विभागों से लिए पंचायत स्तर तक तीव्र गति की इंटरनेट सुविधा सुनिश्चित सके।

2. मोबाइल सेवाओं की सर्वसुलभता

डिजिटल इंडिया योजना की सफलता के लिए ये आवश्यक है कि देश में मोबाइल कनेक्टिविटी निरन्तरता बनी रहे। इसके तहत देश के सभी भागों को मोबाइल नेटवर्क से जोड़ा जायेगा। फिलहाल 55.619 गाँव ऐसे हैं, जो मोबाइल की सुविधा से वंचित हैं। इस समन्वित विकास योजना के तहत देश के उत्तर-पूर्व के गाँवों में कार्य प्रारम्भ किया जा चुका है।

3. जन इंटरनेट उपलब्धता योजना

सार्वजनिक सेवा केंद्र एवं डाकघर इस कार्यक्रम के दो उप-घटक हैं, जो बहुउद्देशीय सुवधि केन्द्रों के रूप में कार्य करेंगे। इसके तहत जहाँ इंटरनेट केन्द्रों की संख्या बढ़ कर 2,50,000 कर दी जायेगी, वहीं देश भर में फैले 1,50,000 डाकघरों को बहुउद्देशीय सुविधा केन्द्रों में बदल दिया जाएगा। ये दोनों घटक सरकारी और व्यापारी सेवाओं के बहु-कार्यात्मक केन्द्रों के रूप में काम करेंगे।

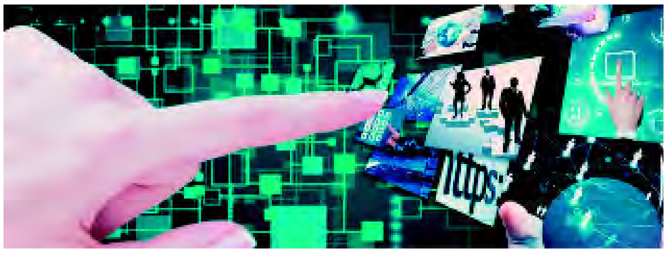

4. ई गवर्नेन्स

इसके तहत सरकार को जवाबदेह बनाया जाएगा और काम-काज में पारदर्शिता लायी जायेगी। सरकारी काम-काज के सुधार की दिशा में ये एक प्रभावी पहल है। इससे सरकारी प्रक्रमों के सरलीकरण और सेवाओं को जन-सुविधाजनक बनाने की योजना है। इसके लागू होने से सरकारी कार्यालयों में अनावश्यक फाइलों की संख्या में कमी होगी और कागज का कम उपयोग होगा; इसके चार प्रमुख बिन्दु हैं।

अ. सरकारी आवेदन-पत्रों व प्रपत्रों का सरलीकरण और उनकी प्रविष्टियाँ कम कर सिर्फ आवश्यक जानकारियों का माँगा जाना।

ब. आवेदन-पत्रों का ऑनलाइन भरा जाना और भरने वालों को आवेदन की स्थिति के विषय में ऑनलाइन जानकारी प्रदान करना।

स. नागरिकों के लिए उनके शिक्षा, पहचान व अन्य प्रमाण-पत्रों को ऑनलाइन कोष में जमा किया जाने को अनिवार्य किया जाना, ताकि उन्हें हर बार इनको व्यक्तिगत रूप से जाकर ना दिखाना पड़े और संबन्धित विभाग इन्हें ऑनलाइन देख सके।

द. आधार योजना, भुगतान गेटवे, मोबाइल सेवा मंच, डाटा आदान-प्रदान इत्यादि सभी सेवाओं का एकीकरण करना और राष्ट्रीय एवं राज्य डिलिवरी गेटवे को एकीकृत व अंतर-उपयोगी सेवाओं को नागरिकों को और व्यापारिक कार्यों हेतु देना अनिवार्य किया जाना।

5. ई-क्रांति

यह कार्यक्रम डिजिटल का सर्वाधिक मजबूत स्तम्भ है। इसके तहत लोगों को विभिन्न सेवाओं को इलेक्ट्रॉनिक रूप में मुहैया कराया जाएगा। इसके लागू होने से सभी कार्यरत व नयी ईगवर्नेंस परियोजनाओं के साथ ही उन सभी परियोजनाओं को जो अस्तित्व में हैं, ई-क्रांति के, 'अनुवाद नहीं परिवर्तन' और 'व्यक्तिगत नहीं, एकीकृत सेवा'' के सिद्धांत का पालन करना होगा। इस कार्यक्रम के तहत सभी मिशन मोड परियोजनाओं को 'गवर्नमेंट प्रोसेस इंजीनियरिंग' पालन करना अनिवार्य होगा। वर्तमान में ई-क्रांति के तहत 44 मिशन मोड परियोजनाएँ हैं। यह सरकारी सेवाओं ओर परियोजनाओं में पारदर्शिता लाने और उन्हें निष्पक्ष व प्रभावी बनाने की सशक्त पहल है।

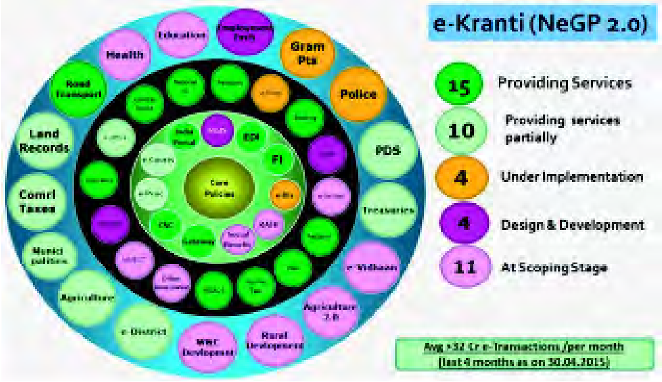

6. सूचनाओं की सर्वसुलभता

सरकारी जानकारियों को जनसामान्य को सुलभ कराने के उद्देश्य से सरकार ने वेब साइट बनायी हैं। जिसमें ओपन डाटा प्लेटफार्म एक ऐसा ही पोर्टल है। इस पर विभिन्न मंत्रालयों और विभागों द्वारा खुले प्रारूप में आँकड़े व जानकारियाँ डाली जाएगी जिनका सामान्य नागरिक भी उपयोग, पुनर्युपयोग या पुनर्वितरण कर सकता है। इसके अलावा सोशल मीडिया और वेब आधारित मंचों पर सूचना देने और वार्तालाप के उद्देश्य से mygov.in नाम से पोर्टल बनाया गया है। यह शासकीय व्यवस्था के सुधार में नागरिकों की भागीदारी कराने की एक अनूठी पहल है। इसके द्वारा नागरिक सरकार से विचारों और सुझावों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त ऑनलाइन संदेशों के माध्यम से सरकार विभिन्न अवसरों पर नागरिकों से संपर्क बनाये रखेगी।

7. इलेक्ट्रानिक उत्पाद निर्माण

विश्व में इलेट्रॉनिक उत्पादों की माँग 22 प्रतिशत वार्षिक से बढ़ रही है और संभावना है कि ये माँग वर्ष 2020 तक 400 खरब अमेरिकी डॉलर की हो जायेगी। इस माँग का एक बड़ा हिस्सा भारत आयात करता है, जिससे ना सिर्फ विदेशी मुद्रा कोष कम होता है, अपितु अर्थव्यवस्था पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बाजार और माँग को देखते हुए सरकार ने

देश के अंदर इलेक्ट्रानिक उत्पादों के निर्माण को प्रोत्साहन और वर्ष 2020 तक इसके आयात को शून्य करने का निर्णय लिया है। इसके तहत सरकार सेट-टॉप बॉक्सेस, वीसैट, मोबाइल, कैमरा, चिकित्सीय व अन्य उपभोक्ता इलेक्ट्रानिक उपकरणों, स्मार्ट एनर्जी मीटर, स्मार्ट कार्ड, माइक्रो एटीएम इत्यादि के निर्माण पर विशेष जोर देगी।

8. नौकरियों के लिए सूचना-प्रौद्योगिकी

डिजिटल इण्डिया यह एक और मजबूत स्तम्भ है। इसके तहत युवाओं को सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रशिक्षित कर उन्हें नौकरियों के लिए तैयार किया जाएगा। बेरोजगारी दूर करने की दिशा में यह एक प्रभावी कदम है। इस कार्यक्रम की विशेष बात यह है कि इसमें छोटे नगरों और गाँवों के युवकों को केंद्रित किया गया है। इसके अंतर्गत पाँच साल में छोटे नगरों ओर गाँवों के 1 करोड़ युवकों आईटी के क्षेत्र में प्रशिक्षित करना है। इसके अतिरिक्त 3 लाख ट्रेनिंग डिलिवरी सर्विस एजेंट तैयार करने हैं और पाँच लाख युवकों की ऐसी कार्यकुशल फौज तैयार करनी है, जो आने वाले समय में दूरसंचार और दूरसंचार से संबन्धित सेवाओं की माँगपूर्ति कर सके। इसके साथ ही उत्तर-पूर्व के राज्यों में काल-सेंटरों की स्थापना पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

9. अर्ली हार्वेस्ट कार्यक्रम

इस कार्यक्रम के महत वे योजनाये शामिल हैं, जिन्हें सीमित अवधि में लागू कर दिया जाना है। जिसमें सर्वाधिक प्रमुख गुमशुदा और लावारिस पाये गए बच्चों की पूरी जानकारी देने वाली वेबसाइट निर्माण है। जिससे इन बच्चों को उनके घर वालों से मिलाया जा सके। इसके अतिरिक्त इसमें सरकारी शुभकामना संदेशों को पूर्णतः इलेक्ट्रानिक तरीके से भेजा जाना, बायोमेट्रिक उपस्थिति, विश्वविद्यालयों और सार्वजनिक क्षेत्रों में वाईफाई, सरकारी ई-मेल और सुरक्षित करना, सरकारी ई-मेल डिजाइनों का मानकीकरण, विद्यालयों में ई-बुक्स को लागू करना, मौसम, आपदा आदि की जानकारी ई-संदेशों से दिया जाना इत्यादि शामिल है।

भारत वर्ष क विस्तार को देखते हुए डिजिटल इण्डिया एक ऐसी पहल है जो विषमता समाप्त करते हुए ना सिर्फ सुदूर क्षेत्रों में बसे लोगों को विकसित शहरों के नागरिकों के साथ समान क्षितिज पर ले आएगा, अपितु उन्हें उन जानकारियों और सुविधाओं को घर उपलब्ध करायेगा, जिनके लिए उन्हें उन मंत्रालयों और विभागों के चक्कर काटने पड़ते थे। जिसके चलते नागरिकों का समय और पैसा दोनों बर्बाद होता था। रोचक तथ्य यह है कि देश के जो लोग जो साक्षर नहीं है, वे भी अपनी उँगलियों मोबाइल पर चलाना और उससे जानकारियाँ निकालना बखूबी जानते हैं। डिजिटल साक्षरता अभियान उनकी कुशाग्रता को सही रूप देगा और वे अब अपने कार्यो के लिए दूसरों पर निर्भर नहीं रहेंगे। इस योजना में तरह से उत्तर-पूर्व के राज्यों का विशेष ध्यान रखा गया है, उससे देश का समग्र विकास होना तय है। इस योजना से सर्वाधिक लाभान्वित वे बुजुर्ग होंगे, जो अस्वस्थता और उम्र चलते दौड़-भाग नहीं कर पाते थे और अपने अधिकारों से वंचित रह जाते थे। अब ऐसे करोड़ों लोग बस अपनी उँगलियों का इस्तेमाल कर अपना हक प्राप्त सकेंगे। इसलिए यह यकीन के साथ कहा जा सकता है कि डिजिटल इण्डिया योजना ना सिर्फ देश की तस्वीर बदल देगी, बल्कि भारत की उस पुरानी कहावत को भी चरित्रार्थ करने जा रही है, जिसमें कहा जाता है कि ''हमारे लिए तो सारी सुविधाएँ उँगलियों पर उपलब्ध हैं।''

''शरीर से अर्थात् शरीरवयवों, हस्तपादादि कर्मेन्द्रियों द्वारा दूसरों की सहायता और सेवा करना, गिरे हुओं को उठाना, देश और जाति की सेवा के लिए अपने शरीर के कष्ट और दुख की परवाह न करना, बल्कि यदि आवश्यक हो तो धर्म और परोपकारार्थ शरीर अर्पण कर देना, यह काया का सात्विक तप है।''

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

ISSN 2231 - 2455

कृषि विज्ञान केन्द्र : किसानों की प्रगति में सहायक

स्नेहा सिंह[1] एवं डॉ0 ओम प्रकाश मिश्र[2]*

कृषि विज्ञान केन्द्र एक नवीनतम विज्ञान आधारित संस्था है जिसमें विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण दिये जाते हैं जो कि किसानों को स्वावलम्बी बनने में सहायता प्रदान करता है। ये किसानों को स्वावलम्बी बनाने के साथ उनको ज्ञान तथा तकनीकी ज्ञान भी प्रदान करता है। सन् 1962-1972 तक शिक्षा मंत्रालय, योजना आयोग और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने कृषि के प्रसार के लिए कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना का विचार किया था। अगस्त 1973 में एक समिति का गठन किया गया था जिसके अध्यक्ष डॉ0 मोहन सिंह मेहता थे। उनकी अध्यक्षता में किसानों के सामाजिक-आर्थिक उत्थान करने हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थाना का निर्णय लिया गया। समिति ने 1974 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। पहला कृषि विज्ञान केन्द्र पायलट आधार पर तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन पुडुचरी में 1974 में स्थापित किया गया था। क्षेत्र के अनुसार कृषि विज्ञान केन्द्रों की संख्या तालिका-1 में दी गयी है।

तालिका : 1 भारत में क्षेत्रानुसार कृषि विज्ञान केन्द्र की कुल संख्या

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	कृषि विज्ञान केन्द्र की संख्या
(क)	**क्षेत्र (Zone) 1**	**70**
	दिल्ली	1
	हरियाणा	18
	हिमाचल प्रदेश	12
	जम्मू और कश्मीर	19
	पंजाब	20
(ख)	**क्षेत्र (Zone) 2**	**83**
	अंडमान और निकोबार	3
	बिहार	38
	झारखण्ड	24
	पश्चिम बंगाल	18
(ग)	**क्षेत्र (Zone) 3**	**78**
	असम	25
	अरूणाचल प्रदेश	14
	मणिपुर	9
	मेघालय	5
	मिजोरम	8
	नागालैण्ड	9
	सिक्किम	4
	त्रिपुरा	4
(घ)	**क्षेत्र (Zone) 4**	**81**
	उत्तर प्रदेश	68
	उत्तराखण्ड	13
(ड़)	**क्षेत्र (Zone) 5**	**78**
	आन्ध्र प्रदेश	34
	महाराष्ट्र	44
(च)	**क्षेत्र (Zone) 6**	**70**
	राजस्थान	42
	गुजरात	28
(छ)	**क्षेत्र (Zone) 7**	**100**
	छत्तीसगढ़	20
	मध्य प्रदेश	47
	उड़ीसा	33
(ज)	**क्षेत्र (Zone) 8**	**81**
	कर्नाटक	31
	तमिलनाडु	30
	केरल	14
	गोवा	2
	पडुचेरी	3
	लक्ष्यद्वीप	1
	कुल संख्या	**641**

*[1]शोध छात्रा एवं [2]सह प्राध्यापक प्रसार शिक्षा विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

कृषि विज्ञान केन्द्र की बुनियादी अवधारणायें

कृषि विज्ञान केन्द्र निम्नलिखित तीन बुनियादी अवधारणाओं पर कार्य करता है।

1. कृषि विज्ञान केन्द्र ''कार्य अनुभव'' के माध्यम से शिक्षा प्रदान करेगा और इस प्रकार तकनीकी शिक्षा से संबंधित होगा, जिसे प्राप्त करने हेतु साक्षर होना अनिवार्य नहीं है।
2. केन्द्र केवल विस्तार कर्मियों जो कि कार्यरत है, और अभ्यासरत किसानो और मछुआरों को प्रशिक्षित करेगा। दूसरे शब्दों में कार्यरत तथा स्वरोजगार की चाहत रखने वालों की जरूरतों को पूरा करगा।
3. कृषि विज्ञान केन्द्र के लिए कोई समान पाठ्यक्रम नहीं होगा। पाठ्यक्रम और कार्यक्रम, आवश्यकता के आधार पर तथा प्राकृतिक संसाधन की उपलब्धता के अनुसार होगा।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के तहत 18 कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना की गई थी। सन् 1984 में 44 और कृषि विज्ञान केन्द्र स्थापित किये गये थे। 1 अप्रैल 1992 में आठवीं पंचवर्षीय योजना के तहत एक बैठक में 'नेशनल डेमोन्सट्रेशन' (48 जिलों में), 'ऑपरेशनल अनुसंधान कार्यक्रम', (152 केन्द्र) तथा 'लैब टू लैड' को कृषि विज्ञान केन्द्र में समाहित कर दिया गया था।

अगस्त 2005 में कृषि विज्ञान केन्द्र राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने 2007 तक प्रत्येक ग्रामीण जिलों में एक-एक कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना हो गयी थी। वर्तमान में देश में कुल 642 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं जो किसानों के विकास हेतु कार्यरत हैं।

अधिदेश (Mandates)

मूल्यांकन, परिष्करण और निरूपण के माध्यम से प्रौद्योगिक उत्पादों का अंगीकरण ही कृषि विज्ञान केन्द्र का मूल्य अधिदेश है। इस अधिदेश को प्रभावी ढंग से प्राप्त करने के लिए तथा किसानों के उन्नयन एवं विकास हेतु निम्नलिखित गतिविधियाँ प्रत्येक कृषि विज्ञान के द्वारा संचालित की जाती है।

1. कृषि प्रौद्योगिकियों की स्थानीय विशिष्टता की पहचान करने के लिए विभिन्न खेती प्रणालियों के तरह खेत पर परीक्षण किया जाता है।
2. उत्पादन क्षमता प्रमाणन हेतु किसानों के खेतों पर अग्रवर्ती प्रदर्शन किया जाता है।
3. किसानों और प्रसार कर्मिकों को आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी में अपने ज्ञान और कौशल को अद्यतन करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है।
4. जिले की कृषि अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु सार्वजनिक, निजी और स्वैच्छिक क्षेत्र की पहल के समर्थन से कृषि प्रौद्योगिकी के ज्ञान केन्द्र के रूप में कार्य करता है।
5. प्रौद्योगिकी उत्पादों जैसे बीज, रोपण सामग्री, जैविक घटकों, नवजात और युवा पशुधन आदि को किसानों को उपलब्ध कराता है तथा उनका उत्पादन भी करवाता है।
6. कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में उन्नत कृषि प्रौद्योगिकी के तेजी से वितरण और तकनीक के अंगीकरण के लिए जागरूकता पैदा करने हेतु प्रसार गतिविधियों का आयोजन करता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र के उद्देश्य

कृषि विज्ञान केन्द्र खेती किसानी तथा ग्रामीण विकास हेतु प्रतिपल कार्यरत है। इनके निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी के विकास एवं उसके त्वरित विस्तार और अंगीकरण के बीच के समय अंतराल को कम करने की दृष्टि से किसानों के साथ सरकारी विभागों जैसे कृषि/बागवानी/मत्स्य/पशु विज्ञान और गैर सरकारी संगठनों के कार्यकर्ताओं के समक्ष प्रदर्शन।
2. किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अनुसार प्रौद्योगिकियों का परीक्षण और सत्यापन तथा उत्पादन की कमी और प्रौद्योगिकियों के यथोचित संशोधन हेतु दृष्टिगत अध्ययन।
3. किसानों/खेत पर काम करने वाली महिलाओं, ग्रामीण युवकों और क्षेत्र स्तर पर कार्यरत प्रसारकों को ''क्रियामूलक शिक्षण'' और ''क्रियामूलक ज्ञान'' पद्धति से प्रशिक्षण प्रदान करना।
4. जिला स्तरीय विकास विभागों जैसे कृषि/बागवानी/मत्स्य/पशु विज्ञान और गैर सरकारी संगठनों और उनके प्रसार कार्यक्रमों को प्रशिक्षण कार्यों और संचार संसाधनों के साथ समर्थन देना।

कृषि विज्ञान केन्द्र, इस प्रकार कृषि शोध में खेत पर प्रशिक्षण, व्यावसायिक प्रशिक्षण और नवीनतम तकनीकों के हस्तानान्तरण के साथ जिले में समग्र ग्रामीण विकास के लिए प्रतिबद्ध आधार स्तर पर कार्य करने वाली अग्रणी संस्थान है। कृषि विज्ञान केन्द्र की गतिविधियाँ में प्रौद्योगिकी मूल्यांकन, शोधन और हस्तानान्तरण प्रमुख हैं। जो कि अनुसंधान संस्थानों और ग्रामीणों के बीच की खाई को पाटने में सहयोग करता है, यह संस्था नई विकसित प्रौद्योगिकी उत्पादों आदि को प्रदर्शन और किसानों, ग्रामीण युवाओं और प्रसार कर्मियों के बीच प्रशिक्षण के माध्यम से क्षेत्र स्तर पर अंगीकृत करने में सहायता प्रदान करती है।

वर्तमान में कृषि विज्ञान केन्द्र

वर्तमान स्थिति : वर्तमान में देश में 642 कृषि विज्ञान केन्द्र कार्यरत हैं, जिसमें भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत 55, गैर सरकारी संस्थानों के अंतर्गत 99, कृषि विश्वविद्यालयों के अधीन 435, व शेष अन्य संस्थानों के अधीन है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद 55 कृषि विज्ञान केन्द्रों के अतिरिक्त अन्य केन्द्रों के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। प्रशासनिक नियंत्रण की जिम्मेदारी संबंधित संस्थानों की होती है। कृषि विज्ञान केन्द्र जिला स्तर पर कृषि संबंधी विभागों के साथ मिलकर विभिन्न कृषि कार्यक्रमों व योजनाओं को लागू करने में तकनीकी समर्थन और सामयिक जानकारी उपलब्ध कराने का प्रमुख स्रोत हैं। कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा किसान मेला, किसान गोष्ठी, खेत दिवस आदि संपर्क कार्यक्रम नियमित रूप से आयोजित किये जाते है। जिसका लाभ किसानों को मिल रहा है। कृषि विज्ञान केन्द्र अग्रिम पंक्ति प्रसार के द्वारा किसानों को तकनीकी ज्ञान प्रदान करता है।

वर्तमान परिवर्तन : कृषि मंत्रालय द्वारा कृषि विज्ञान केन्द्रों के सशक्तिकरण के लिए 26 जुलाई, 2015 को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के 87 वें स्थापना दिवस पर महत्वपूर्ण कदम उठाए गये हैं जो निम्नवत् हैं—

- 45 नये जिलों व 645 बड़े जिलों में अतिरिक्त कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना की स्वीकृति दी गई है।
- कृषि विज्ञान केन्द्र के विषय वस्तु विशेषज्ञ (SMS) के पद को वैज्ञानिक के रूप में परिवर्तित करके कर्मचारियों को उपयुक्त सम्मान दिया गया है।
- कार्यक्रम समन्वयक के पद को प्रधान (हेड) कृषि विज्ञान केन्द्र के रूप में परिवर्तित करके जिलें की भूमिका में, कृषि विज्ञान केन्द्र की प्रमुख स्थिति को मजबूत करने का प्रयास किया है।
- कृषि विज्ञान केन्द्रों में वैज्ञानिकों की संख्या 6 से बढ़ाकर 10 की जायेगी। जिसमें मृदा व जल, एग्रीबिजनेस, पशुपालन, मत्स्य पालन, प्रसंस्करण विषयों के वैज्ञानिक एवं दो तकनीशियन के पद सृजित किये गये है। इस प्रकार कृषि विज्ञान केन्द्र में पदों की संख्या 16 से बढ़कर 22 हो जायेगी।
- 3 नये क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय (जोनल प्रोजेक्ट डायरेक्ट्रेट) जिनका परिवर्तित नाम कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग संस्था (एग्रीकल्चर टेक्नोलॉजी एप्लिकेशन रिसर्च, इंस्टीट्यूट) होगा, जिसे सृजित कराकर उनकी संख्या को 8 से 11 किया गया है जिससे कृषि विज्ञान केन्द्रों की मानिटरिंग अच्छी हो। पटना, पुणे व गुवाहटी में नये संस्थान स्थापित किये जायेंगे।
- कृषि विज्ञान केन्द्रों को अधिक किसान उपयोगी और आधुनिक बनाने के लिए मिट्टी एवं पानी की जाँच सुविधा, एकीकृत कृषि प्रणाली, आई.सी.टी. का उपयोग, उन्नत बीज उत्पादन एवं प्रसंस्करण, जल संचयन और सूक्ष्म सिंचाई तथा सौर ऊर्जा के उपयोग जैसी इकाइयाँ शामिल की जा रही हैं।
- प्रधानमंत्री जी द्वारा 'लैब टू लैंड' कार्यक्रम के तहत पानी, मिट्टी की उर्वरता, कृषि उत्पाद प्रसंस्करण पर विशेष बल दिया जा रहा है, जिसके लिये नये कार्यक्रम शुरू किये गये हैं, इनमें फार्मर-फर्स्ट, आर्या, स्टूडेन्ट रेडी, मेरा गाँव मेरा गौरव हैं।

कृषि विज्ञान केन्द्र से किसानों को लाभ

किसान भाई-बहन कृषि विज्ञान केन्द्र से निम्नलिखित लाभ उठा सकते हैं-

1. **प्रशिक्षण :** कृषि विज्ञान केन्द्र किसान भाईयों, बहनों एवं ग्रामीण युवाओं के लिए एक वर्ष में 30-50 आवश्यकता के आधार पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। यह केन्द्र की सबसे महत्वपूर्ण क्रिया है। प्रशिक्षण खास कर उन लोगों के लिए आवश्यक है जिन्होंने स्कूल छोड़ दिया है तथा बेरोजगार है। केन्द्र इन लोगों को स्वरोजगार देने के लिए मुर्गी पालन, बकरी पालन, डेयरी और मत्स्य पालन का प्रशिक्षण देता है और महिलाओं को सशक्त करने के लिए गृह विज्ञान से संबंधित प्रशिक्षण जैसे- सिलाई, बुनाई, अचार बनाना, पापड़ बनाना आदि दिया जाता है।
2. **खेत पर परीक्षण :** कृषि विज्ञान केन्द्र इसके माध्यम से किसानों की प्रमुख समस्या का उपचार करते है। कृषि वैज्ञानिक, किसानों को बताते है कि कौन सा बीज उत्कृष्ट है और कौन सी तकनीक सर्वश्रेष्ठ है, इसमें तुलनात्मकता को स्थान दिया जाता है। यहाँ किसानों की भागीदारी अध्ययन का एक रूप है।
3. **अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन :** इसके माध्यम से केन्द्र किसानों को नई तकनीक के बारे में बताते है जो कि उत्पादन की लागत को कम करने कीट व रोगों को नियंत्रित करने के लिए, पैदावार को बढ़ाने के लिए तथा महिलाओं के परिश्रम को कम करने के लिए, कृषि औजार तथा नवीनतम प्रौद्योगिकी उपकरण के उपयोग के बारे में बताया जाता है।
4. **अन्य विस्तार गतिविधियाँ :** कृषि विज्ञान केन्द्र अन्य विस्तार गतिविधियों जैसे किसान मेला, प्रखेत्र भ्रमण, किसान गोष्ठी, सेमिनार, कृषि प्रदर्शनी, साहित्य प्रकाशन, मोबाइल द्वारा वॉइस (Voice) मेसेज आदि द्वारा किसानों को नवीनतम तकनीकी जानकारी पदान कर उनकी कार्यक्षमता तथा कौशल को बढ़ाता है

प्रक्षेत्र भ्रमण

कृषि विज्ञान केन्द्र की गतिविधियों को चित्र के द्वारा आगे दर्शाया गया है।

कृषक प्रशिक्षण

संकर बीजों के उत्पादन का प्रदर्शन व पशुपालकों को पशुओं की दवा का वितरण

कृषि विज्ञान केन्द्र की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

1. **क्षमता विकास :** कृषि विज्ञान केन्द्र ने अपने प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से कृषकों, कृषक महिलाओं तथा ग्रामीण युवक व युवतियों की क्षमता विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। केन्द्र ने प्रसार कार्य कर्ताओं की क्षमता विकास के लिए इन सर्विस प्रशिक्षण की सुविधा दी है जिसके माध्यम से

प्रसार कार्यकर्ता विभिन्न तकनीकियों के बारे में जानते है तथा उनका प्रयोग करते है।

2. **संपोषणीय विकास**
कृषि तकनीकों को खेत पर परीक्षण कर उनकी उपयोगिता का पता लगाया जाता है जैसे मृदा संरक्षण तथा जल संरक्षण के लिए जैविक खाद तथा हरी खाद का प्रयोग करने की सलाह कृषि वैज्ञानिकों की तरफ से किसानों को दी जाती है।

3. **आय बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण :** कृषि विज्ञान केन्द्र कृषकों, महिलाओं तथा युवकों को आय बढ़ाने वाले विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण देते है जो उनको स्वालम्बी बनाता है तथा उनको सशक्त बनाता है और परिवार में निर्णयकर्ता के रूप में प्रदर्शित करता है।

4. **व्यापारिक विकास :** कृषि विज्ञान केन्द्र व्यापारिक फसलों जैसे- कपास, मशरूम, जूट आदि के उत्पादन पर जोर दे रहे है। जिसके माध्यम से किसान अपनी आमदनी बढ़ा सकता है।

कृषि विज्ञान केन्द्रों की मुख्य उपलब्धियाँ निम्न प्रकार हैं।

भारतीय कृषि पर कृषि विज्ञान केन्द्र का प्रभाव: कृषि विज्ञान केन्द्र ने भारतीय कृषि पर बहुत ही गहरा प्रभाव डाला है। इसकी आधुनिक तथा वैज्ञानिक गतिविधियों, प्रशिक्षण, प्रदर्शन और खेत पर परीक्षण ने भारत राष्ट्र को दलहनी फसलों तथा दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान प्राप्त करने में सहयोग किया है।

वर्ष 2012-13 में 25.21 मिलियन, हेक्टेयर से दलहन का कुल उत्पादन 19.78 मिलियन टन हुआ है। दुग्ध उत्पादन 2012-13 में 132.4 मिलियन टन था। वर्ष 2013-14 में यह उत्पादन 6 प्रतिशत बढ़कर 140 मिलियन टन हो गया है।

कृषि विज्ञान केन्द्र के उत्तम प्रयासों तथा सहायताओं के द्वारा, भारतीय किसान ने फसल उत्पादन, फल एवं सब्जी उत्पादन, मछली उत्पादन में द्वितीय स्थान तथा अण्डा उत्पादन में तृतीय स्थान प्राप्त किया है। वर्ष 2012-13 में फसल उत्पादन 257.13 मिलियन टन था तथा वर्ष 2014-15 में 264.2 मिलियन टन हो गया है। फल तथा सब्जी उत्पादन में भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। वर्ष 2013-14 में फल व सब्जी का उत्पादन 209.2 मिलियन टन था। जिसमें फल 73.53 मिलियन टन एवं सब्जी 136.9 मिलियन टन है। उत्पादों के अनुसार भारत का विश्व में स्थान तथा कुल उत्पादन तालिका-2 में प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष

कृषि विज्ञान केन्द्र किसानों के लिए ज्ञान का केन्द्र है जिसमें किसान प्रशिक्षण खेत पर परीक्षण, अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन तथा अन्य विस्तार गतिविधियों के माध्यम से कृषि के आधुनिक तकनीकियों की जानकारी प्राप्त करता है। कृषि विज्ञान केन्द्र किसानों को परंपरागत खेती के साथ वैज्ञानिक खेती की जानकारी भी प्रदान करता है जिसका उपयोग करके किसान अपनी सामाजिक-आर्थिक स्थिति से सुदृढ़ हो रहा है। कृषि विज्ञान केन्द्र क्षेत्रीय स्तर पर बहुत प्रभावशाली है ये किसानों को ऑन-कैम्पस तथा ऑफ-कैम्पस प्रशिक्षण देता है जो उनकी खेती से संबंधित क्षेत्रीय समस्या का समाधान करता है।

तालिका : 2 उत्पादों के अनुसार भारत का विश्व में स्थान तथा कुल उत्पादन

क्र.सं.	उत्पाद	भारत का विश्व में स्थान	कुल उत्पादन मिलियन टन में (वर्ष 2014-15 का आँकड़ा)
1.	फसल उत्पादन	द्वितीय	264.20
2.	दलहनी उत्पादन	प्रथम	19.78
3.	दुग्ध उत्पादन	प्रथम	140.00
4.	फल एवं सब्जी उत्पादन	द्वितीय	209.20
5.	मछली उत्पादन	द्वितीय	64
6.	अण्डा उत्पादन	तृतीय	250.00

स्रोत : 'द हिन्दू' समाचार पत्र.

चित्त शुद्धि, ईश्वर की आराधना, समाज के हित की कामना, लोक कल्याण में लगन, मनुष्यता से विभूषित शील, विनय पूर्वक सेवा, विवेकपूर्ण साहस, देश-भक्ति, सदाचार- नैतिक उत्कर्ष के साधन हैं।

–महामना पं. मदन मोहन मालवीय

सुंदर मस्तिष्क के गणितज्ञ-जॉन नैश को नमन

नवनीत कुमार गुप्ता*

जॉन नैश

गत 23 मई, 2015 को एक सड़क दुर्घटना में 86 वर्षीय महान गणितज्ञ जॉन नैश और 82 वर्षीय उनकी पत्नी एलीशिया की असमय मृत्यु विज्ञान और कला प्रेमियों के लिए दुखद घटना रही। भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने भी उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट किया था। उनके बहुमुखी व्यक्तित्व के कारण ही विभिन्न क्षेत्रों के लोगों में उनके प्रति ऐसी श्रद्धा देखी गयी। दुर्घटना से कुछ ही दिन पहले उन्हें एबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था। असल में नैश अंतिम समय तक उनका सुंदर दिमाग गणित की पहेलियों को सुलझाता रहा। यही कारण था कि उनके द्वारा प्रस्तुत गैम थ्यौरी और नॉन लीनियर पार्शियल डिफरेंशियल इक्वेसशंस पर उनके काम ने गणित, भौतिकी, जीवन विज्ञान सहित अर्थशास्त्र जैसे सामाजिक विषयों पर गहरी छाप छोड़ी। उनके समीकरणों ने जीवन से जुड़े ऐसे प्रश्नों को हल किया जो सिर्फ अटकलबाजी समझे जाते थे।

जॉन फोर्ब्स नैश जूनियर का जन्म संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिम वर्जीनिया स्थित शहर ब्लूफील्ड में 13 जून, 1928 को हुआ था। उनके पिता एक विद्युत इंजीनियर और उसकी माँ एक शिक्षिका थी। जॉन नैश ने पिट्सबर्ग में कार्नेगी प्रौद्योगिकी संस्थान में आरंभ में एक पूर्ण छात्रवृत्ति के साथ रसायनिक अभियांत्रिकी का अध्ययन किया लेकिन बाद में वह रसायन विज्ञान की ओर प्रेरित हुए। रसायन विज्ञान से भी उनका मन भटका और अंत में उन्होंने गणित का अध्ययन आरंभ किया। इसके साथ ही नैश ने वैकल्पिक कोर्स के रूप में अर्थशास्त्र की पढ़ाई भी की। अर्थशास्त्र के इस अध्ययन के आधार पर ही उन्होंने प्रिंस्टन विश्वविद्यालय में एक स्नातक छात्र के रूप में अपने पहले शोधपत्र 'सौदेबाजी की समस्या' का विचार सूझा। इस शोधपत्र से उनमें खेल सिद्धांत यानी निर्णय लेने के गणित संबंधी क्षेत्र के प्रति रुचि जाग्रत हुई। नैश का पीएच.डी. शोधग्रंथ खेल सिद्धांत के मूलभूत ग्रंथों में से एक है। उन्होंने इस क्षेत्र में ''नैश संतुलन'' की अवधारणा का विकास किया जिसका अर्थशास्त्र और सामाजिक विज्ञान में गहरा प्रभाव माना जाता है। प्रिंसटन में नैश ने शुद्ध गणित के क्षेत्र में पहली महत्वपूर्ण खोज की। उनके अनुसार यह प्रतिलिपि और वास्तवित बीज गणितीय असमरूपता से संबंधित एक सुंदर खोज थी। उनके साथियों द्वारा इस परिणाम को पहले से ही एक महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय कार्य के रूप में देखा जा रहा था। सन् 1950 में नैश ने आंशिक अवकल समीकरण के बारे में महत्वपूर्ण प्रमेयों को साबित किया। ''एसे ऑफ गेम थ्योरी'' उनकी प्रसिद्ध पुस्तक है। गणित के अलावा नैश को उनके खेल-सिद्धांत पर लिखे शोधपत्र, निर्णय-लेने के गणित के बारे में जाना जाता है। अंततः, अर्थशास्त्र के लिए उन्हें सन् 1994 का नोबेल पुरस्कार मिला।

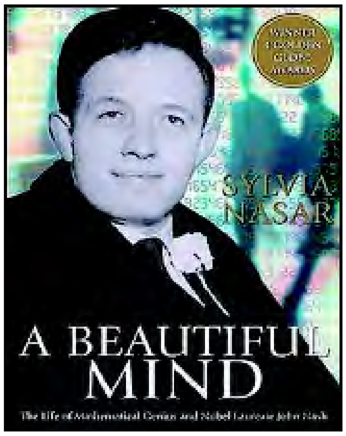

खेल सिद्धांत की महत्वपूर्ण खोज करने वाले महान गणितज्ञ ने अपनी एक दर्दनाक और दुखद यात्रा के बाद अंत में अर्थशास्त्र में नोबेल पुरस्कार जीता जिसे सन् 2001 में हॉलीवुड की एक फिल्म 'ए ब्यूटिफूल माइंड' में जोरदार ढंग से फिल्माया गया है। ''ए ब्यूटिफुल माइंड'' फिल्म महान गणितज्ञ जॉन एफ नैश जूनियर के कार्यों और जीवन पर थी जिन्होंने सन् 1994 में अर्थशास्त्र का नोबल पुरस्कार खेल-सिद्धांत के अन्य दो प्रसिद्ध सिद्धान्तकारों के साथ साझा किया था। हाल ही में उनका नाम वर्ष 2015 के एबेल सम्मान के लिए घोषित किया गया। 'ए ब्यूटिफुल माइंड' की कथा किसी भी व्यक्ति के जीवन की कहानी हो सकती है।

असल में द नार्वेजियन एकादमी ऑफ साइंस एंड लैटर्स ने 2015 के एबेल पुरस्कार के लिए दो अमेरिकी गणितज्ञों जॉन एफ नैश जूनियर और लुई निरनबर्ग को अरेखिय आंशिक अवकल समीकरणों और ज्यामितीय विश्लेषण में उनके असाधारण एवं मौलिक योगदान के लिए अपने आवेदन पत्र के सिद्धांत के मौलिक योगदान के लिए सम्मानित किया गया। इस प्रकार जॉन नैश ने गणित के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य कर गणित को व्यवहारिक समस्याओं के निराकरण का माध्यम बनाने में भी महत्वपूर्ण कोशिक की।

सबसे आश्चर्यजनक बात तो यह है कि उन्होंने यह सारा मौलिक काम सन् 1959 से पहले यानी स्किजोफ्रीनिया का दौरा पड़ने से पहले किया

*परियोजना अधिकारी, सी-24, विज्ञान प्रसार, कुतुब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली- 110 016.

जॉन नैश अपनी पत्नी के साथ

था। स्किजोफ्रीनिया एक मनोरोग है मानव चेतना बेतुकेपन के मकड़जाल में कैद हो जाती है। व्यक्ति यथार्थ जगत से संपर्क खो बैठता है और उसकी सोचने-समझने की क्षमता बेकार हो जाती है। अन्य मनोरोगों की तुलना में स्किजोफ्रीनिया व्यक्ति के निकटवर्ती लोगों के लिए उसे समझ पाना सर्वाधिक कठिन होता है। अधिकांश लोग जीवनभर इस बीमारी से ग्रस्त रहते हैं और वे करियर या आपसी संबंधों के सुअवसर खो देते हैं। इस रोग की समझ न होने के कारण समाज उन्हें अपनाने लायक नहीं समझता और इसी कारण वे अपना जीवन परेशानी से बिताते हैं। आरंभ में कुछ ऐसा ही जॉन नैश के साथ भी हुआ। बीमारी की अवस्था में वह अपनी पत्नी को काफी परेशान करते थे लेकिन उन्होंने उनकी सेवा करना नहीं छोड़ी। आखिर में सन् 1963 में उनके बीच तलाक भी हुआ लेकिन फिर 2001 में दोनों ने दोबारा शादी की और अपने अंतिम समय तक साथ निभाया। फिर सन् 1970 में बीमारी का असर कम होने पर नैश का ज्यादातर काम अपनी समीकरणों की सत्यता साबित करने, उनकी गुत्थियाँ सुलझाने और उनके अनुप्रयोगों से संबंधित रहा। परिवार का पूरा विश्वास, स्नेह, सहयोग एवं सेवा से रोग पर विजय पाई जा सकती है और उससे व्यक्ति सामान्य जीवन जी सकता है। उनका जीवन हमें सीख देता है कि शारीरिक, भावनात्मक और मानसिक स्तर के द्वंद्व में भी मानव अपने कार्यों की अमरता प्राप्त कर सकता है। जॉन नैश का जीवन सदैव हमें प्रेरित करता रहेगा कि विषम परिस्थितियों में भी मानव अपना श्रेष्ठ कार्य कर सकता है।

गंगा और हिमालय को बचायेंगे

गंगा को निर्मल बनाने संबंधी माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के वादे पर अमल करते हुए केंद्र सरकार ने इसे अपनी प्राथमिकताओं में प्रमुखता से शामिल किया है। सरकार का कहना है कि गंगा को निर्मल और अविरल बनाने के लिए सभी उपाय किए जायेंगे। हिमालय को बचाने के लिए राष्ट्रीय हिमालय मिशन की शुरुआत का एलान किया गया है। सरकार हिमालय के पर्यावरण का अध्ययन के लिए केंद्रीय विश्वविद्यालय भी स्थापित करेगी।

राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने 8 जून, 2014 को संसद के संयुक्त अधिवेशन को संबोधित करते हुए राजग सरकार का नीतिगत रोडमैप पेश किया था। राष्ट्रपति ने अभिभाषण में गंगा और हिमालय को बचाने के लिए सरकार की योजना का उल्लेख किया। उन्होंने कहा, गंगा नदी हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा है। यह करोड़ों लोगों के लिए जीवन रेखा और आस्था का प्रतीक है। लेकिन गंगा लगातार प्रदूषित होती जा रही है और शुष्क मौसम में कई स्थानों पर यह सूख भी जाती है। सरकार एक अविरल, स्वच्छ और शुद्ध गंगा-सुनिश्चित करने के लिए सभी जरूरी उपाय करेगी।

राष्ट्रपति ने कहा कि सरकार जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए सतत् प्रयास करेगी और वैश्विक समुदाय के साथ मिलकर इस दिशा में काम करेगी। हिमालय क्षेत्र की पारिस्थितिकी का संरक्षण सरकार की प्राथमिकता में होगा। हिमालय के लिए एक राष्ट्रीय मिशन शुरू किया जायेगा। राष्ट्रपति के अभिभाषण के बाद जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण मंत्री सुश्री उमा भारती जी ने पत्रकारों से कहा कि प्रधानमंत्री जी ने गंगा को हमेशा महत्व दिया है।

ISSN 2231 - 2455

दुर्लभ जल पक्षियों और जैव विविधताओं के संरक्षक हैं नम भूमि

जगनारायण*

भारत अपनी असाधारण जैव विविधताओं के लिए सारी दुनिया में एक विशेष स्थान रखता है। जैव विविधताओं के क्षेत्र में यह एशिया का दूसरा और विश्व का सातवें क्रम का देश है। यहाँ जलीय प्राकृतिक आवासों के संसाधन अत्यन्त समृद्ध और विस्तृत हैं। आज के तमाम विकसित संचार साधनों के बावजूद इसके बारे में देश के बहुत थोड़े लोगों को ही जानकारी है।

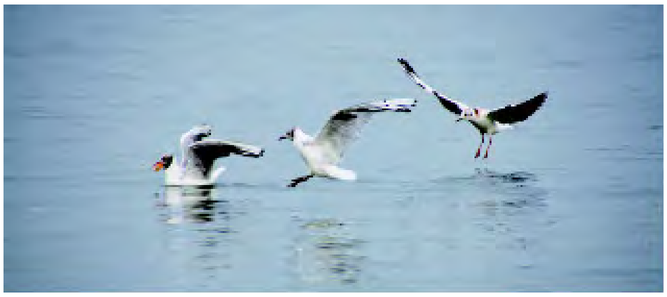

भारत में इस प्रकार की भूमि राष्ट्र की सकल भूमि के 3.4 प्रतिशत भू-भाग पर फैली हुई है। यद्यपि वैश्विक स्तर पर ये नम भूमि पृथ्वी की सतह के 6.4 प्रतिशत हिस्से पर काबिज हैं। भारत में प्राकृतिक नम भूमि हिमालय की ऊँचाइयों पर स्थित झीलों, मुख्य नदी प्रणालियों के बाढ़ वाले मैदानी क्षेत्रों, शुष्क एवं अर्द्धशुष्क इलाकों के दलदली क्षेत्रों 'लैगून तथा बैक वाटर श्रेणी तथा नदी मुखों पर स्थित सदाबहार दलदली क्षेत्रों, प्रवाल शैलमालाओं और समुद्री नम भूमि के रूप में पाई जाती हैं।

नम भूमि अनेक विशेषताओं से समृद्ध हैं। ये अद्विितीय जैविक सम्पदाओं से सम्पन्न होती हैं। इनमें उतले और आमतौर पर गतिशील जल की परिस्थितियों वाले विविध श्रेणी की वनस्पतियों और जीव-जन्तुओं की उपस्थिति पाई जाती है। नम भूमि की गणना सबसे समृद्ध पारिस्थितिक तंत्र की श्रेणी में होती है। पारिभाषिक रूप में भौमिक एवं जलीय प्रणाली के बीच की परिवर्ती भूमि, जिसमें मौलिक जलस्तर सतह के करीब पाया जाता है या जहाँ भूमि छिछले पानी से ढ़की रहती हैं, नम भूमि की श्रेणी में आती हैं।

पारिस्थितिकीय दृष्टि से नम भूमि का अपना विशेष महत्व है। पृथ्वी की सतह के मात्र छः प्रतिशत हिस्से पर फैलाव के बावजूद ये नम भूमि सामान्य भूमि से कहीं अधिक उत्पादक होती हैं। इस श्रेणी की भूमि का अपना एक समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र होता है। इसमें अनेकों तरह की उपयोगी वनस्पतियों के साथ ही कई प्रकार के जीव-जन्तु भी पाये जाते हैं।

सम्यक जानकारी के अभाव में नम भूमि को मच्छरों वाली अनुपयोगी भूमि के रूप में कूड़े-कचरे के निस्तारण वाले भूखण्ड के रूप में लिया जाता है। इस अव्यवहारिक सोच के चलते कई नम क्षेत्र खत्म हो गये हैं और कई समाप्त होने के कगार पर हैं। इस स्थिति के चलते कई नम क्षेत्रों की हालत अत्यन्त खराब है, जिससे पक्षियों और वनस्पतियों के ह्रास के चलते ऐसे क्षेत्रों की पर्यावरणीय स्थिति लगातार बिगड़ रही है। यद्यपि वैश्विक स्तर नम भूमि सम्बन्धी विशेषताओं के चलते बढ़ती चेतना ने हालात में बदलाव की आशाओं को भी बल प्रदान किया है।

नम भूमि क्षेत्रों में जल पक्षी भोजन, आवास के साथ ही अपने जीवन क्रम की अन्य प्रक्रियाएँ भी पूरी करते हैं। इनके प्रजनन, घोसला, निर्मोचन नम क्षेत्रों में ही सम्पन्न होते हैं। इन पक्षियों की प्राकृतिक बनावट नम और जलीय क्षेत्र में जीवन-यापन के लिए सर्वथा अनुकूल होती है।

इन जल पक्षियों की बनावट ताजे पानी से लेकर समुद्र तटीय आवासों तक रहने लायक होती है। इनके झिल्लीदार पैर के पंजे, पानी के भीतर से भोजन खोज लेने में सक्षम चोंच और शिकार पकड़ने के लिए पानी में डुबकी लगाने की क्षमता इनकी सामान्य विशेषताएँ होती हैं। इस प्रकार के पक्षियों में बत्तख, हंस, पनडुब्बी, मुर्गाबी, स्टार्क, हेरोन, बगुला, आइबिस, स्नूबिल, जलकौवा, पेलिकन, फ्लेमिंगों, सारस, जलकुक्कुट, कूट, जलमुर्गी और किंगफिशर इत्यादि जल पक्षी शामिल हैं।

हमारे देश में लगभग 310 प्रजाति के पक्षी नम भूमि क्षेत्र में निवास करते पाये जाते हैं। इनमें 130 प्रवासी और 130 जल पक्षी अप्रवासी हैं। इन जल पक्षियों में 173 अप्रवासी प्रजातियाँ हैं। इनमें से 53 स्थाई प्रवासी हैं। 38 आंशिक अप्रवासी और शीतकालीन प्रजातियाँ हैं।

*विज्ञान संचारक, श्री विश्वनाथ मन्दिर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी - 221 005.

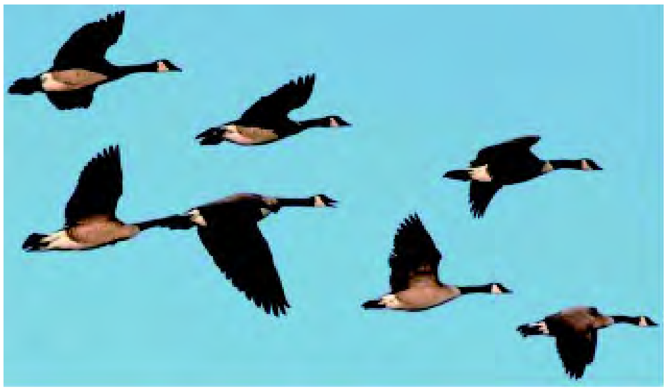

नम भूमि क्षेत्रों के लिए जलीय पक्षियों का अपना विशेष महत्व है। ये नम भूमि क्षेत्र के पारिस्थितिक तंत्र के महत्वपूर्ण घटक होने के साथ ही इस क्षेत्र के निवासियों के सामाजिक और सांस्कृति क्रिया-कलापों को भी प्रभावित करते हैं। ये जल पक्षी अपनी बनावट और झुण्डों में मनमोहक दृश्य उपस्थित करते हैं। वास्तव में नम भूमि क्षेत्र में पाये जाने वाले ये जल पक्षी प्रकृति की अनुपम कलाकृति के सदृश होते हैं।

इतनी विशेषताओं के बावजूद इन जल पक्षियों पर मानव दृष्टि अच्छी नहीं रही है, जो आज भी जारी है। मानवीय हस्तक्षेप के चलते ही कई जल पक्षियों का अस्तित्व आज खतरे में है। संकट में पड़े इन जल पक्षियों के सम्बन्ध में अध्ययन से पता चलता है कि 242 प्रजातियों में से 82 प्रजातियाँ एशिया में पाई जाती हैं, जिनमें से 39 भारत में हैं। इनमें प्रमुख हैं पेंटेड स्टॉर्क (माइक्टेरिया ल्यूकोसेफाला), डार्टर (एनहिंगा मेलानोगास्टर), स्पॉट बिल्ड बेलिकन (पेलेकेनस फिलिपेनिंसिस), लेसर एडजुटेंट (लेप्टोटिलोस जावानिकस) तथा भारतीय स्किमर जो पहले दक्षिण पूर्व एशिया के नम भू-क्षेत्रों में बड़ी संख्या में पाये जाते थे, लेकिन आज इनकी संख्या बहुत तेजी से घट रही है।

वर्तमान में नम भूमियाँ दुनिया की सबसे अधिक संकट वाली भूमियों में से है। इस स्थिति का प्रभाव भारतीय नम भूमियों पर भी पड़ा है। तेजी से बढ़ती मानव आबादी इसका सबसे बड़ा कारण है। विकास की अनियोजित दशा और दिशा जलग्रहण क्षेत्रों के अनुचित उपयोग के चलते नम भूमि का क्षेत्रफल लगातार घटता जा रहा है। नम भूमियों के घटाव में उद्योग, कृषि एवं शहरी विकास की भूमिका बहुत अधिक है। नम भूमि के घटाव के लिए प्राथमिक प्रदूषक, तलछट, उर्वरक, मानव-मल, जन्तु अवशिष्ट, कीटनाशक और भारी धातुएँ बड़े पैमाने पर जिम्मेदार हैं।

मंगल ग्रह पर पानी मिलने की पुष्टि

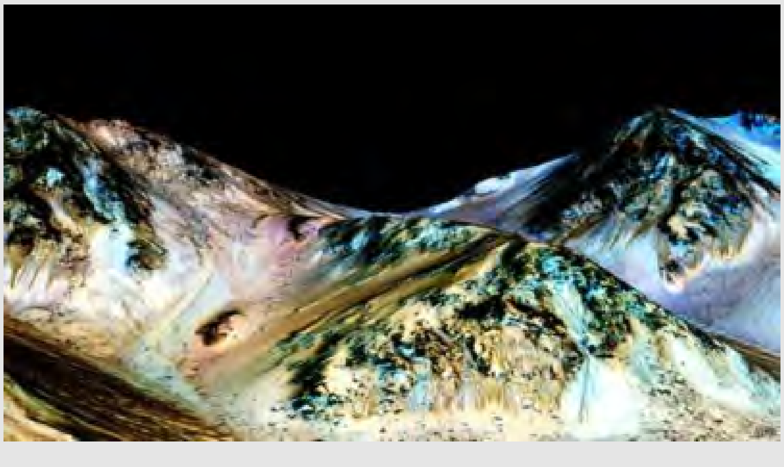

कई वर्षों की खोज के बाद आखिरकार मंगल ग्रह पर पानी खोज लिया गया है। नासा ने सोमवार (28 सितम्बर, 2015) को इसकी पुष्टि की। नासा ने दावा कि इस ग्रह पर खारे पानी की बहती धाराएँ मौजूद हैं। नासा ने शनिवार को एलान किया था कि वह दो दिन बाद बड़ा खुलासा करेगा। वैज्ञानिकों ने संवाददाता सम्मेलन में बताया, इस बात की पुख्ता जानकारियाँ मिली हैं कि गर्मी के दौरान कुछ खास जगहों पर पानी की धाराएँ बहती हैं। पानी में मिला नमक उस तापमान को कम कर देता है जिस पर पानी जमता है।

गर्मी बढ़ने के साथ ये धाराएँ बड़ी होती जाती हैं। बाकी समय ये गायब रहती हैं। वैसे पूर्व में भी मंगल पर जमा हुआ पानी मिलने का दावा किया जाता रहा है। वैज्ञानिकों ने बताया कि यह खोज इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि अब मंगल ग्रह पर जीवन की मौजूदगी की संभावनाएँ भी बढ़गई हैं। नासा द्वारा 27 सितंबर 2015 को जारी इस छायाचित्र में मंगल ग्रह पर मौजूद पहाड़ियों पर उन गहरे ढलाननुमा निशानों (स्लोप) को दर्शाया गया है जो पानी बहने से बने हैं। इसके साथ ही नासा मंगल ग्रह की मिट्टी को धरती पर लाने की कोशिश में लगा हुआ है। इस अभियान की शुरुआत सन् 2022 में हो सकती है। इस परियोजना का नाम 'रेड ड्रैगन' दिया गया है। वर्ष 2011 मंगल ग्रह पर पानी से बनी लकीरों को पहली बार देखा गया था। तब से पानी की खोज में तेजी आई है।

मुझसे परिचय बढ़ाओ

आइवर यूशियल*

मैं दूध हूँ

आपके जन्म लेते ही प्रकृति ने माँ के स्पर्श के साथ जो सबसे पहला आहार आपको दिया था, मैं वही दूध हूँ, ठीक माँ की ममता जैसा ही मीठा और उसकी भावनाओं जैसा ही स्वच्छ। केवल मानव ही क्यों, और भी बहुत से प्राणी हैं जो प्रकृति की इस उदारता का लाभ उठा रहे हैं और इन सबको ही स्तनपायी जीवों की श्रेणी में रखा जाता है।

दूध देने वाले पालतू पशु

पानी के साथ-साथ मुझमें प्रोटीन, वसा, लैक्टोज व लवणों जैसे कुछ ऐसे अन्य तत्व भी हैं जो आपके शरीर को पोषण देकर इसे विभिन्न रोगों से दूर रखते हैं और इसीलिए भिन्न-भिन्न देशों में मानव भिन्न-भिन्न प्रकार के जानवरों को मेरी लालच में पालता रहा है। जैसे इग्लैण्ड व यूरोप के कुछ भागों में गाय, स्पेन में भेड़, अरब के रेगिस्तानी भागों में ऊँट, मिस्र में भैंस, तिब्बत में याक व टुण्ड्रा के हिम प्रदेश में रेण्डियर आदि। पर इन सभी जानवरों से पाये जाने वाले मुझ दूध में पोषक तत्वों की मात्रा अलग-अलग होती है, यह बात निम्न सारणी से स्पष्ट हो जाएगी-

पशु	पानी	प्रोटीन	लैक्टोज प्रतिशत	लवण	वसा
गाय	87.0	3.5	4.0	0.7	3.0
बकरी	87.0	3.5	4.3	0.9	4.3
भेड़	82.0	5.8	4.8	0.9	6.0
भैंस	82.7	3.6	5.5	0.8	7.4
रेण्डियर	63.3	10.3	2.5	1.4	22.5

दूध से बने पदार्थ (क्रीम, पनीर, दही व घी)

इसी सिलसिले में मैं यह और बता दूँ कि एक प्रकार के सब जानवरों का दूध एक जैसा ही होता हो, ऐसा भी नहीं हैं। यह तो उनके स्वास्थ्य, नस्ल, खान-पान आदि बहुत सी बातों पर निर्भर करता है। पर कुछ भी हो मैं दूध रहूँगा, संसार का सर्वाधिक सम्पूर्ण आहार ही जिसके माध्यम से नवजात शिशु का अपनी माँ से प्रथम परिचय होता है।

मुझ दूध से बनी क्रीम, पनीर, दही मक्खन या घी आदि के बारे में तो आप सबको पता ही होगा। जो नहीं पता है वह मैं आपको बताये देता हूँ और वह है केसीन जिसका उपयोग फोटोग्राफी के पेपर विशेष प्रकार के आयल क्लॉथ, रंग-रोगन तथा इनेमिल आदि तैयार करने में बहुतायत से होता है। इससे बनाये गये एक विशेष प्रकार के प्लास्टिक से कंघे व बटन आदि तैयार किये जाते हैं। यूरोप में एक समय था जब केसीन से बने इनकी धूम मची हुई थी।

अधिकतर बच्चे मुझे प्यार नहीं करते, यह बात मैं अच्छी तरह जानता हूँ। पर क्रीम, खोया, पनीर, मक्खन, मलाई, दही आदि में से ये बच्चे किसी न किसी को जरूर पसन्द करते हैं और यह मेरे लिए बड़े सन्तोष की बात है क्योंकि ये सब भी तो आखिर मेरे ही विविध रूप हैं। क्यों, हैं न ? मानते हैं न ?

मैं मिट्टी हूँ

प्रकृति में एक ऐसा अजूबा मौजूद है जिससे मिलकर ही सब कुछ बना है और अन्त में सब कुछ इसमें ही मिल जाना है। यही अजूबा हूँ मैं मिट्टी। कहने को तो दो कौड़ी की चीज हूँ पर मेरी उपयोगिता के बारे में जरा ध्यान देकर सोचो तो आप पाओगे कि मैं न रहूँ तो पृथ्वी पर प्राणिमात्र का जीवन ही शायद खतरे में पड़ जाए।

*ज्ञाशिम, सी 203, कृष्णा काउण्टी, रामपुर - नैनीताल मिनी बाईपास, बरेली-243 122.

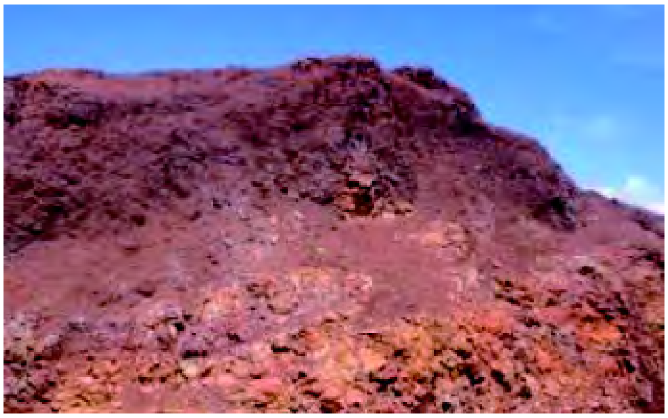

मिट्टी का ऊँचा टीला

प्राचीनकाल में तो मेरे महत्व को पाँच तत्वों 'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा' में सबसे पहले नम्बर पर शामिल कर दर्शा ही दिया गया था, पर आज भी मेरी उपयोगिता को भला कौन नकार पाया है। दवाइयों से लेकर भवन निर्माण तक मैं न जाने कहाँ-कहाँ काम आती हूँ। मेरी विभिन्न किस्मों का यदि आप विश्लेषण करोगे तो इनमें भिन्न-भिन्न खनिजों की उपस्थिति का पता चलेगा आपको।

मेरी एक किस्म ऐसी भी जिसको यदि गर्म किया जाये तो इसके कुछ अवयव पिघल जाते हैं और ठण्डा किये जाने पर अपने साथ दूसरे अवयवों को भी जकड़कर सीमेण्ट की भाँति मजबूती प्रदान कर देते हैं। यह गुण ईंट व बर्तन आदि बनाने के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है। ऐसी किस्म के उपयोग से ईंटे बनाते समय मुझे केवल थोड़े ताप तक पकाने की जरूरत होती है क्योंकि ये ईंटें अधिक ताप सहने में असमर्थ होती हैं।

साधारणतः मेरी वह किस्म ईंट बनाने के लिए सबसे उपयुक्त है जिसमें 45 प्रतिशत एल्यूमिनियम सिलिकेट, 35 प्रतिशत तक लोहा, 3 से 8 प्रतिशत तक चूना, 3 से 4 प्रतिशत तक मैग्नीशिया, 3 से 6 प्रतिशत तक पोटास अथवा सोडा तथा 4 से 6 प्रतिशत तक जल की मात्रा हो। आप खुश किस्मत हो कि आपके देश में ईंट बनाने लायक मेरी किस्म तो प्रायः हर स्थान पर ही प्राप्य है। हाँ, यह बात और है कि उन स्थानों पर जहाँ यह अधिकता से मिलती है ईंटों और खरपरैलों का निर्माण बड़े पैमाने पर शुरू कर दिया जाता है।

मिट्टी से बने ईंट

आपके देश के लिए वैसे भी मेरा महत्व कुछ अधिक ही है। जानते हो क्यों? अरे भई! इतना बड़ा कृषि प्रधान देश है आपका और कृषि का तो मुझ मिट्टी के साथ बिल्कुल सीधा और नजदीकी सम्बन्ध रहा है- यह बात भला कौन नहीं जानता? फिर आपके देश में मुझे वैसे भी हमेशा पूरा सम्मान मिला है। इस देश का इतिहास गवाह है कि मुझ मिट्टी के एक-एक कण के लिए यहाँ के देशभक्त सदैव अपने प्राणों को न्योछावर करने के लिए तत्पर रहे हैं।

इतने पर भी जरा सोचो कि क्या आपका यह फर्ज नहीं बनता कि अपने देश की प्राणस्वरूपा मुझ मिट्टी के बारे में अधिक से अधिक जितना हो सके जानो और मुझे दिलोजान से प्यार करो। क्यों ठीक कह रही हूँ न मैं?

इंसान खुद उगा सकेगा अपना दाँत

एक शोध में दावा किया गया है कि इंसान खुद अपने दाँतों को फिर से उगाने में सक्षम हो सकता है। शोध के अनुसार, दाँत उगाने की यह प्रक्रिया उसी तरह होगी जैसी मलावी झील में पाई जाने वाली सिक्लिड मछली अपने दाँत उगाती है। अटलांटा में जॉर्जिया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के वैज्ञानिकों ने छोटी मछली के दाँतों और स्वाद ग्रंथियों की कोशिकाओं के रासायनिक परिवर्तन का अध्ययन किया। वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि उनके शोध से मनुष्यों में दाँतों को फिर से उगाने की प्रक्रिया में मदद मिलेगी।

जॉर्जिया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के प्रोफेसर टॉड स्ट्रीलमेन ने बताया, हमने मछलियों के दाँतों और स्वाद ग्रंथियों के बीच विकासात्मक प्रक्रिया को खोज लिया है। अब हम कोशिकाओं में होने वाली उस प्रक्रिया को जानने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे दाँतों और संवेदी तंत्रों का विकास होता है। सिक्लिड मछली व मनुष्यों में दाँतों, स्वाद ग्रंथियों का विकास एक ही तरह के सतही ऊतकों से होता है। ये सिक्लिड मछलियाँ अपनी जरूरत के हिसाब से दाँतों और स्वाद ग्रंथियों को फैलाती है। जब यह मछली प्लवक खाती है, तो उसे केवल कुछ दाँतों की जरूरत होती है, क्योंकि यह पूरे प्लवक को निगल जाती है।

अश्वगंधा रसायनम्

डॉ. दया शंकर त्रिपाठी

अश्वगंधा आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में प्रयोग किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण पौधा है। इससे अकेले और मिश्रण के रूप में अनेक रोगों की चिकित्सा की जाती हैं। इस नकदी फसल के रूप में भी उगाया जाता है। सभी ग्रंथों में अश्वगंधा की महत्ता का भरपूर वर्णन मिलता है। इसकी ताजा पत्तियों तथा जड़ों से घोड़े के मूत्र जैसी गंध आती है, अतः इसका नाम अश्वगंधा पड़ा। विथेनिया कुल की विश्व में 10 तथा भारत में 2 प्रजातियाँ ही पायी जाती हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में अश्वगंधा की बढ़ती माँग इसके अधिक गुणकारी होने का प्रमाण है।

अश्वगंधा की खेती

विभिन्न भाषाओं में अश्वगंधा के अलग-अलग नाम हैं। संस्कृत में अश्वगंधा, हिन्दी में असगन्ध, मराठी में आसगन्ध, गुजराती में आसंध, बंगाली में अश्वगंध, कन्नड़ में आसान्दु व अश्वगंधी, तेलुगू में पिल्ली आंगा व पनेरु, तमिल में आम कुलांग, फारसी में मेहेमत वररी, इंग्लिश में विण्टर चेरी और लैटिन में *विथेनिया सोम्नीफेरा (Withania somnifera)* कहते हैं।

विश्व में विथेनिया कुल के पौधे स्पेन, मोरक्को, जार्डन, मिश्र, अफ्रिका, पाकिस्तान, भारत तथा श्रीलंका में प्राकृतिक रूप में पाये जाते हैं। भारत में इसकी खेती 1500 मीटर की ऊँचाई तक के सभी क्षेत्रों में की जा रही है। भारत के पश्चिमोत्तर भाग राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं हिमाचल आदि प्रदेशों में अश्वगंधा की खेती होती है। राजस्थान और मध्य प्रदेश में अश्वगंधा की खेती बड़े स्तर पर हो रही है। इन्हीं क्षेत्रों से पूरे देश में अश्वगंधा की आपूर्ति की जा रही है।

अश्वगंधा एक द्विबीजपत्रीय पौधा है जो कि सोलेनेसी कुल का है। सोलेनेसी परिवार की पूरे विश्व में लगभग 3000 जातियाँ और 90 वंश पाये जाते हैं। इनमें से केवल दो जातियाँ ही भारत में पाई जाती हैं। अश्वगंधा के पौधे सीधे, अत्यन्त शाखित, सदाबहार तथा झाड़ीनुमा 1.25 मीटर तक लम्बे पौधे होते हैं। पत्तियाँ रोमयुक्त व अण्डाकार होती हैं। फूल हरे, पीले तथा छोटे एवं पाँच के समूह में लगे हुये होते हैं। इसका फल बेरी

अश्वगंधा का पौधा, पुष्प और फल

जो कि मटर के समान दूध युक्त होता है, पकने पर लाल हो जाता है। जड़ें 30-45 सेमी. लम्बी, 2.5-3.5 सेमी. मोटी मूली की तरह होती हैं। इनकी जड़ों का बाह्य रंग भूरा तथा यह अन्दर से सफेद होती है।

वस्तुतः यह जड़ी ही है, क्योंकि इसके पौधे की जड़ ही प्रयोग में ली जाती है। इसके बीज वर्षाकाल में बोए जाते हैं और शीतकाल में फसल आ जाती है। शीतकाल में इसका विधिवत सेवन करने पर घोड़े की तरह शक्ति, पुष्टि और स्फूर्ति मिलती है। यह जड़ी पंसारियों की दुकान पर हर गाँव-शहर में आसानी से मिल जाती है।

अश्वगंधा में अनेक रसायन पाये जाते हैं। इसकी जड़ से क्यूसिओहायग्रीन, एनाहायग्रीन, ट्रॉपीन, एनाफेरीन आदि 13 क्षाराभ (एल्केलायड्स) निकाले जा चुके हैं। इसमें कुल क्षाराभ 0.13 से 0.31 प्रतिशत होता है। इसके अतिरिक्त अश्वगंधा की जड़ में ग्लाइकोसाइड, विटानिआल, अम्ल, स्टार्च, शर्करा व एमिनो एसिड आदि भी पाए जाते हैं जो स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक रसायन हैं।

आयुर्वेद के अनुसार अश्वगंधा में अनेक औषधीय गुण पाये जाते हैं। यह बलवर्द्धक, रसायन, कड़वी, गरम, वीर्यवर्द्धक तथा वायु, कफ, श्वेतकुष्ठ, शोथ तथा क्षय, इन सबको हरने वाली है। यह हल्की, स्निग्ध, तिक्त, कटु व मधुर रसयुक्त, विपाक में मधुर और उष्णवीर्य है। अत्यन्त शुक्रल अर्थात शुक्र उत्पन्न करने वाली है। अश्वगंधा के चूर्ण को आधे से एक चम्मच (3 से 6 ग्राम) और इसके काढ़े की मात्रा 4-4 चम्मच सुबह-शाम लेना चाहिए। अश्वगंधा को जीणोद्धारक औषधि के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसमें एण्टीट्यूमर एवं एण्टाबायोटिक गुण भी पाये जाते हैं। निम्नलिखित बीमारियों के उपचार में अश्वगंधा का प्रयोग प्रभावी पाया गया है। अश्वगंधा की जड़ें शक्तिवर्द्धक, शुक्राणुवर्द्धक एवं पौष्टिक होती हैं। यह

* उप-सम्पादक, हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

अश्वगंधा का जड़ और चूर्ण

शरीर को शक्ति प्रदान कर बलवान बनाती हैं। इसकी जड़ों के चूर्ण का प्रयोग खाँसी एवं अस्थमा को दूर करने के लिये भी किया जाता है। महिलाओं की बीमारियों जैसे श्वेतप्रदर, अधिक रक्तस्राव, गर्भपात आदि में अश्वगंधा की जड़ें लाभकारी होती हैं। तंत्रिका तंत्र संबंधी कमजोरी को दूर करने में इसका प्रयोग किया जाता है। अश्वगंधा के द्वारा अनेक आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण किया जाता है। जिसमें अश्वगंधारिष्ट मुख्य शास्त्रीय औषधि है जो अनेक रोगों में उपयोगी है। गठिया एवं जोड़ों के दर्द को ठीक करने के लिए भी इसकी जड़ों के चूर्ण का प्रयोग किया जाता है। नपुंसकता में पौधे की जड़ों का एक चम्मच चूर्ण दूध के साथ प्रतिदिन सेवन करने से काफी लाभ मिलता है। अश्वगंधा की जड़ों को त्वचा संबंधी बीमारियों के निदान में भी प्रयोग किया जाता है। आजकल अवश्वगंधा चूर्ण और इसके सत् की गोलियाँ, कैप्सूल, सीरफ और चूर्ण के रूप में विभिन्न नामों से बाजार में उपलब्ध हैं।

आधा चम्मच अश्वगंधा सोने से पहले एक गिलास गर्म दूध के साथ लें, इससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ेगी। शरीर में कम्पन हो तो ठीक होगा। अश्वगंधा एक प्राकृतिक औषधि है, जो अपने शक्तिवर्धक गुणों के लिए मशहूर है। आप चाहें तो इसकी पत्तियों को पीसकर या जड़ों को उबालकर भी उपयोग में ला सकते हैं। अश्वगंधा के इस्तेमाल के लिए इसमें घी मिलाकर एक चम्मच चीनी डाल लें। इस मिश्रण को एक जार में डालकर फ्रिज में रख दें और सुबह नाश्ते से करीब 20 मिनट पहले इसका सेवन करें। इस मिश्रण को दोपहर और रात में भी लें। ध्यान रखें कि रात में इस मिश्रण को एक गिलास गर्म पानी के साथ लेना है। आमतौर पर महिलाओं में पायी जाने वाली बीमारी थायराइड में अश्वगंधा का इस्तेमाल कारगर होता है। इसके लिए 200 से 1200 मिलीग्राम अश्वगंधा चूर्ण को चाय के साथ मिलाकर लें। चाहें तो इसे स्वादिष्ट बनाने के लिए तुलसी का प्रयोग भी कर सकते हैं। यदि आप वजन कम होने से परेशान हैं तो एक गिलास दूध में 1 से 3 ग्राम अश्वगंधा चूर्ण को मिलाकर सेवन करें। इससे आप तरोताजा महसूस करेंगे। यदि आपको शरीर के किसी भी हिस्से में चोट या किसी अन्य कारण से सूजन है तो अश्वगंधा के पत्तों को एरण्ड (रेणी) के तेल में गर्म कर उस जगह पर लगाये, लाभ होगा। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए अवश्वगंधा, आँवला और हरड़ को महीन पीसकर उसमें 400 ग्राम मिश्री मिला लें। इस मिश्रण को सुबह-शाम एक गिलास गर्म दूध में मिलाकर पीयें। अगर आप पेट में गैस की समस्या से परेशान हैं तो अश्वगंधा चूर्ण में सोंठ तथा मिश्री को 2:1:3 के अनुपात में मिलायें। सुबह-शाम खाना खाने के पश्चात गर्म पानी के साथ इस मिश्रण का सेवन करें।

प्रसिद्ध आयुर्वेदिक ग्रन्थ योगरत्नाकरः के रसायन चिकित्सा के अन्तर्गत अश्वंगधा प्रयोग के बारे में लिखा है कि जो मनुष्य अश्वगंधा के जड़ की चूर्ण को 15 दिनों तक दूध, घी, तेल अथवा समशीतोष्ण जल के साथ सेवन करता है उस मनुष्य के कृष शरीर को वैसे ही पुष्ट करता है जैसे जल की वर्ण धान्य को पुष्ट करती है। इसमें यह भी लिखा है कि शिशिर ऋतु में अश्वगंधा के मूल का चूर्ण दूध में मिलाकर या दूध में पकाकर शहद तथा घृत मिलाकर जो एक महीने तक पान करता है वह वृद्ध भी युवा के समान हो जाता है। अश्वगंधा के कुछ विपरीत प्रभाव भी पाये गये हैं। कई बीमारियों का सफल इलाज अश्वंगधा से होता है और आयुर्वेद में अश्वगंधा से कई तरह की औषधियाँ बनाई जाती हैं जो त्वचा की बीमारियों, थायराइड, शरीर का दुबलापन जैसी बीमारियों को जड़ से ठीक करती हैं। परन्तु इसका अधिक प्रयोग करने से शरीर में इसके गलत परिणाम भी हो सकते हैं। आखिर अश्वगंधा से क्या-क्या नुकसान हो सकते हैं, इनकी जानकारियाँ भी आवश्यक हैं।

अश्वगंधा के अधिक सेवन से पेट संबंधी परेशानियाँ होने लगती हैं, जैसे पेट में अधिक गैस बनना, दस्त लगना, उल्टी आना आदि। यही नहीं अश्वगंधा आँतों को भी हानि पहुँचाती है इसलिए इसका ज्यादा सेवन नहीं करना चाहिए। अश्वगंधा का दूसरा सबसे बड़ा नुकसान है नींद ज्यादा लगना और अधिक समय तक लेते रहने से इंसान को फिर नींद आना भी बंद हो जाती है जो सेहत के लिए अधिक खतरनाक है। जब भी अश्वगंधा का इस्तेमाल करें किसी चिकित्सक से सलाह जरूर लें। तीसरा सबसे बड़ा नुकसान है कोई दवा शरीर पर असर नहीं करती है। यदि आप अश्वगंधा का प्रयोग लंबे समय से कर रहे हों तो यह अन्य दवाइयों को शरीर पर असर नहीं करने देती है, जिस वजह से रोगी और बीमार होने लगता है। यदि आप अश्वगंधा का इस्तेमाल कर रहे हो तो अपने डाक्टर से पूछकर ही कोई दूसरी दवा लें। जो लोग अश्वगंधा का इस्तेमाल अधिक करते हैं उनके शरीर में परिवर्तन आने लगता है, जैसे शरीर का तापमान अधिक बढ़ना जिसकी वजह से बुखार तक आने लगता है। यदि आपका तापमान बढ़ने लगे तो आप इसका सेवन तुरंत बंद कर दें, नहीं तो परेशानी अधिक बढ़ सकती है, साथ ही अपने डाक्टर को इस बारे में जरूर बता दें।

अश्वगंधा के सेवन से किन लोगों को बचना चाहिए, ये भी जानना जरूरी है। जो लोग मधुमेह, गठिया, अर्थराइटिस आदि बीमारियों से बचने के लिए अश्वगंधा का इस्तेमाल करते हैं उन्हें भी इसका सेवन नहीं करना चाहिए। अल्सर के रोगी, गैस की समस्या वाले रोगी और गर्भवती महिलाओं को भी अश्वगंधा का सेवन करने से बचना चाहिए। अश्वगंधा जितना शरीर के लिए लाभदायक है उतना ही इसके विपरीत गुण भी हैं जो आपको पता होने चाहिए ताकि आप इससे होने वाली गंभीर परेशानियों से बच सकें। इसलिए अपने डाक्टर की सलाह पर ही अश्वगंधा का इस्तेमाल करें।

अश्वगंधा के बीज का गलती से भी सेवन न करें। इसके बीज के सेवन से आँतों में दर्द की समस्या हो सकती है। गर्भवती स्त्रियों को अश्वगंधा का सेवन विशेषज्ञ की सलाह पर ही करना चाहिए, क्योंकि इसके सेवन से गर्भपात भी हो सकता है। इसके अधिक सेवन से डायरिया की भी संभावना रहती है।

मानवीय मूल्यों के संरक्षण में योग-एक महत्वपूर्ण अध्ययन

मृत्युंजय द्विवेदी एवं संचित मिश्र

"क्या बात है द्विवेदीजी ? आपका स्वभाव पहले से ज्यादा शांत और मधुर हो गया है, किसी ने कोई जादू तो नहीं कर दिया ?" नहीं भैया, जब से योग का अभ्यास शुरू किया हूँ, कुछ सकारात्मकता बढ़ गयी है।" "अच्छा ! अगली बार मुझे भी ले चलना अपने साथ।"

"अरे सीमा कहाँ जा रही हो ?" "मैं मालवीय भवन जा रही हूँ, योग करने.....।" "रुक मैं भी चलती हूँ तेरे साथ। "हाँ हाँ, तू भी आ जा।"

इस तरह के उदाहरण यह बात पुष्ट करते हैं कि वास्तव में योग की लोकप्रियता बहुत तेजी से बढ़ रही है और कि जगह-जगह योगशालाएँ खुल रहीं हैं। दूरदर्शन और इंटरनेट आदि पर ऑनलाइन योग की कक्षाएँ चल रहीं हैं। अखिल विश्व में योग की लोकप्रियता बहुत तेजी से बढ़ रही है और बहुत तेजी से योग के सन्दर्भ में अनुसंधान किये जा रहे हैं। दूरदर्शन और इंटरनेट आदि पर ऑनलाइन योग की कक्षाएँ और जानकारियाँ भी दी जा रही हैं।

सामूहिक योग प्रशिक्षण का दृश्य

हफिंग्टन पोस्ट के अनुसार अमेरिका में योग एक 27 अरब डालर का उद्योग है। लगभग 20 मिलियन लोग योगाभ्यास करने लगे हैं। उनमें से 83 प्रतिशत महिलायें हैं। फिर बच्चा हो या बूढ़ा सब आजकल योग के दीवाने हैं। किसी को बीमारी से निजात चाहिए तो किसी को अध्ययन में एकाग्रता चाहिए। लेकिन अपनी समस्याओं के समाधान तक ही सीमित रखते हुए हम इसके दूसरे पहलू से दूर होते जा रहे हैं। योग महज एक व्यधिनाशक न होकर हमारी मानसिक तथा शारीरिक क्षमता को बल प्रदान कर हमें संपूर्ण मानव बनाता है।

हिन्दू मान्यता के अनुसार जब ईश्वर ने सृष्टि की रचना की, उस समय उसकी सबसे कीमती और अनोखी कृति थी- मानव। उसने मानव को बहुत समझदार और दूसरों से अलग बनाया। अन्य प्राणियों से भिन्न करते हुए उसने मानव जीवन के कुछ उद्देश्य निर्धारित किये। मगर वे उद्देश्य सिर्फ उस तक ही सीमित न हो संपूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए थे। प्रत्येक मनुष्य एक दूसरे की मदद करे और कठिनाइयों में साथ दे। मुख्य उद्देश्य था कि संसार में आने पर उसका पहला कर्तव्य ईश्वर-भक्ति करना होगा। भक्ति से ही आत्मा और परमात्मा का योग होगा। इस योग के सहारे परमात्मा और मनुष्य के बीच दैवीय तथा मानवीय गुणों का अविरल प्रवाह प्रारम्भ हो जाता है। इसमें कोई संशय नहीं कि अष्टांग योग के दिव्य ज्ञान में कोई भी मानवीय मूल्य अछूता नहीं रहा है।

परिचय

"मनात् मानवः" अर्थात् - "जो मनन करे वह मानव है।" परन्तु सच्चे मानवीय गुणों को सतत् बनाये रखने के लिए योग बलवर्द्धक है। योग शब्द *"युजिर योगे"* धातु से बना है, इसका अर्थ है- "जुड़ना, तात्पर्य है, जीवात्मा का परमात्मा से जुड़ जाना या मिल जाना।"

पतंजलि कृत योग का लक्षण है- *"योगश्चित्तवृत्तीनिरोधः* अर्थात् "मन की वृत्तियों (व्यापार) को रोकना ही योग है।" इससे योगी शुद्ध परमात्मा के रूप में हो जाता है। उपनिषदों में भी योग के विषय में कहा गया है कि *"तां योगमिति मन्यते स्थिरमिन्द्रियधारणम्"* अर्थात् "योग वह है जहाँ इन्द्रियाँ स्थिर रूप से साधक के वश में हो जाती हैं।" भगवद्गीता के अनुसार *"योगः कर्मसु कौशलम्"* अर्थात् कर्मों में कुशलता ही योग है। श्रीमद्भगवद्गीता में प्रभु ने योगारूढ़ पुरुष के बारे में यह भी कहा है कि- *यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते। निः स्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते सदा।।* अत्यंत वश में किया हुआ चित्त जिस काल में परमात्मा में स्थित हो जाता है, उस काल में संपूर्ण भोगों से स्पृहारहित पुरुष योगयुक्त है ऐसा कहा जाता है।

इतिहास

भगवान शिव की पद्मासन मुद्रा योग की प्राचीनता दर्शाने के लिए पर्याप्त है। योग तो अनादि तथा शाश्वत है। कई प्राचीन ग्रंथों जैसे श्रीमद्भगवद्गीता, विष्णुपुराण में योग का उल्लेख प्रमुखता से हुआ है। इसके अतिरिक्त सांख्यदर्शन तथा बौद्ध धर्म में भी योग के प्रमाण मिलते हैं, किन्तु पातंजल योग दर्शन इसका प्रमुख ग्रन्थ है तथा पतंजलि ही योग के संस्थापक माने जाते हैं।

योग मुद्रा में भगवान शिव जी

योग की उत्पत्ति के सम्बन्ध में काफी मतभेद भी मिलते हैं। पश्चिम के विद्वान योग को 500 ईसा पूर्व का मानते हैं। हड़प्पा की सभ्यता में भी

*स्नातक छात्र, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

योग काफी लोकप्रिय हुआ करता था और योग की मुद्राओं में रहकर मांगलिक कार्यों का संपादन किया जाता था। इस बात की पुष्टि खुदाई में मिले अवशेषों के आधार पर हो चुकी है। वहाँ की मुहरों पर योगी के चित्र उकेरे गए हैं। लेकिन समय-समय पर योग पर होते अनुसंधान मानव को आश्चर्यचकित कर इसकी नवीनता का परिचय देते रहते हैं।

अष्टांग योग में मानवीय मूल्य

आठों प्रकार के योग विशेषतः मानवीय मूल्यों का ह्रास रोकने के लिए ही बनाये गये हैं। आगे हम इनका बिन्दुवार वर्णन करेंगे-

1. **यम-** इसमें सीधे-सीधे नैतिक मूल्यों को रखा गया है, जैसे- सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य। महात्मा गाँधी के ही आदर्शों को अगर ले लें तो हमेशा सत्य बोलते हुए इसकी कड़ी पर पहुँच जाते हैं। अहिंसा अर्थात् किसी भी प्राणी को मानसिक या शारीरिक रूप से कोई क्लेश या कष्ट न पहुँचाना अथवा किसी प्राणी की हत्या नहीं करना। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक प्राणी में आत्मा सामान है। कोई जीव छोटा नहीं और न ही कोई बड़ा है। ऐसा महात्मा बुद्ध ने भी माना था। अब अस्तेय का मतलब है चोरी न करना। सिर्फ चोरी न करना ही नहीं बल्कि किसी और की वस्तु को मन से पाने की चेष्टा भी नहीं करनी चाहिए। अपरिग्रह का अर्थ है- अनावश्यक वस्तुओं का संचय न करना और अधिकार की भावना न रखना। फिर ब्रह्मचर्य का है- कामादि वासनाओं से शारीरिक और मानसिक रूप से दूर रहना। योग की इस प्रथम शाखा में शायद ही कोई मानवीय गुण अछूता रहा हो। अगर हम इसको ही आत्मसात कर लें तो जीवन में कुछ भी कठिन नहीं होगा और इसका पालन न करना मनुष्य के जीवन और समाज दोनों को दुष्प्रभावित करता है।

2. **नियम-** इसमें व्यक्तिगत अनुसाशन की बात की गयी है जिसके लिए कुछ चीजें परमावश्यक हैं। वे हैं- शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश-प्राणिधान। आन्तरिक तथा बाह्य रूप से स्वयं को पवित्र व स्वच्छ रखना शौच में आता है। फिर है संतोष अर्थात शारीरिक और मानसिक रूप से तृप्त रहना। चूँकि तृष्णा अनेक बुराइयों की जननी है, इसलिए इस पर मुक्ति पाना कई बुराइयों से स्वतः दूर होना है। तप अर्थात शरीर को कष्ट देते हुए और समस्याओं से जूझते हुए धैर्य का विकास करना। स्वाध्याय में आत्म-मनन और अपने आप पर चिंतन का निर्देश किया गया है तथा ईश-प्राणिधान में समर्पण की भावना को ऊपर रखा गया है। मानव को कर्तव्यपरायण बनाने और जीवन को सुव्यवस्थित करते हेतु इनका पालन तो अवश्य करना होगा। इतने सारे मानवीय गुणों का एकसाथ विकास तो केवल योग ही कर सकता है।

3. **आसन-** योग का तीसरा अंग है- आसन। आसन का अर्थ है- शरीर को एक आरामदायक विशेष अवस्था में बनाकर रखना। यह एक स्थिर अवस्था है जिसके द्वारा हम अनेक बीमारियों पर विजय तो पाते ही हैं, साथ ही अपने मन को भी साम्य करते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि आसन से मानवीय गुणों का क्या संबंध है ? तो जवाब यह है कि एक स्वस्थ शरीर में ही एक स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। वैसे भी यहाँ पर एक पंथ दो काज हो ही रहे हैं।

आसनों का सामूहिक अभ्यास

एक अध्ययन में पाया गया है कि चिड़चिड़ापन होना अनिद्रा के प्रमुख दुष्प्रभावों में एक है। श्री मंजुनाथ एन के, स्वामी विवेकानंद योग अनुसंधान संस्थान के अनुसार अनिद्रा से ग्रस्त वृद्ध रोगियों में योग करने के बाद आश्चर्यजनक परिणाम देखने को मिले और योगोपरांत उनके निद्रा आने के समय में कम से कम 10 मिनट का ह्रास देखा गया। एक अन्य अध्ययन में एल एम मुलुर ने स्त्रियों में भी योग करने के पश्चात चिड़चिड़ापन में आश्चर्यजनक गिरावट दर्ज की।

4. **प्राणायाम-** चौथी शाखा है प्राणायाम अर्थात् प्राणों का नियंत्रण। श्वाँस प्रश्वाँस की विशेष गति से शरीर, इन्द्रियाँ, मन और आत्मा के बीच समन्वय स्थापित करने की क्रिया ही प्राणायाम है। योग की यथेष्ट भूमिका को समझने के लिए नाड़ी शोधन प्राणायाम का ही उदाहरण ले लें। यह प्राणायाम रक्त में शोधन करने, कोलेस्ट्रॉल नियंत्रित करने के अतिरिक्त मन की चंचलता और तृष्णा पर विजय दिलाता है। कहने का मतलब यह है कि प्राणायाम से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अंहकार आदि पर विजय आसानी से मिल जाती है।

एक अध्ययन में एम नोसाका ने एक विद्यालय के 90 कर्मचारियों पर प्राणायाम योगाभ्यास के बाद उनमें तनावमुक्ति के साथ शांति, आनन्द और उत्साह में वृद्धि दर्ज की।

5. **प्रत्याहार-** अब आते हैं अगले अंग की ओर- प्रत्याहार। मनुष्य की पाँच कर्मेन्द्रियाँ है- आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा। उनके अर्थ है- शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। इन्द्रियाँ तो मनुष्य को विषयों की ओर ले जाती हैं और मनुष्य को बाह्याभिमुख करती हैं। इससे विषयों के प्रति आसक्ति बढ़ती है और आसक्ति में भंग पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है। अतः उन्हें बाहरी अनावश्यक विषयों से खींचकर नियंत्रित करना परम् आवश्यक है। इंद्रियों को विषयों से विमुख करने का नाम ही प्रत्याहार है। प्रत्याहार के इस अभ्यास से साधक योग के लिए अत्यंत आवश्यक स्थिति जिसे अंतर्मुखी होना कहते हैं, प्राप्त करता है। हालाँकि इस सन्दर्भ में अर्जुन भी विस्मित हो गए और बोले-

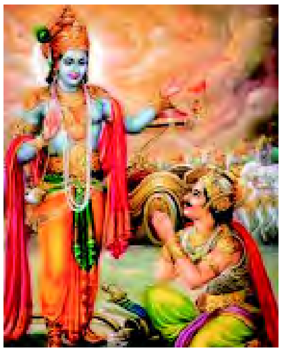

कृष्ण द्वारा अर्जुन को उपदेश

चंचल हि मनः कृष्ण प्रमथि बलवद्दृढ़म।
तस्याहं निग्रहं मन्य वयोरिव सुदुष्करम्।

हे श्रीकृष्ण ! यह मन बड़ा चंचल और प्रमथन स्वभाव वाला, बड़ा दृढ़ और बलवान है। इसलिए उसका वश में करना मैं वायु को रोकने की भाँति अत्यंत दुष्कर मानता हूँ।

तब योगेश्वर श्रीकृष्ण बोले- *असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्। अभ्यासेन तू कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।*

हे महाबाहो ! निःसंदेह मन चंचल और कठिनता से वश में होने वाला है परन्तु हे कुंतीपुत्र अर्जुन यह अभ्यास और वैराग्य से वश में होता है।

6. धारणा- अब छठवाँ अंग- धारणा। किसी स्थान विशेष पर अपने चित्त को केंद्रित करना ही धारणा है। हम मन को किसी वस्तु या उसके वातावरण पर केंद्रित करते हैं तब हम धारणा योग का पालन कर रहे होते हैं। हम मानवीय मूल्यों पर अपने चित्त को केंद्रित कर सकते हैं।

7. ध्यान- सातवाँ अंग ध्यान है। जब ध्येय वस्तु का चिंतन करते हुए चित्त तद्रूप हो जाता है तो उसे ध्यान कहते हैं। पूर्ण ध्यान की स्थिति में किसी अन्य वस्तु की स्मृति अथवा ज्ञान चित्त में प्रविष्ट नहीं होते। केवल अच्छाइयों का ध्यान कर हम मानवीय मूल्यों को पल्लवित रख सकते हैं।

8. समाधि-आठवाँ तथा अन्तिम अंग है- समाधि। दरअसल मोक्षप्राप्ति का मार्ग तो यही है। इसमें मन ध्येय वस्तु के चिंतन में पूरी तरह लीन हो जाता है। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में ''समाधि वह राह है जिसके द्वारा हम मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक सुख सब कुछ पा सकते हैं।'' एक मानवीय मूल्यों से युक्त पुरुष समाधि योग से अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है जो मूल्यों के लिए संजीवनी का कार्य करेगा।

निष्कर्ष : आज के इस भौतिकवादी समाज में मनुष्य सारे रिश्तों और मानवीय मूल्यों को रौंदते हुए आगे भागा जा रहा है। गलाकाट प्रतियोगिता में उलझा हुआ मानव अपने संस्कारों और अपनी संस्कृति और सभ्यता को नितांत भूल गया है। अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए वह किसी को भी चोट पहुँचा सकता है। मगर भारतीय संस्कृति के लिए यह समस्या नासूर बनती जा रही है और हम विदेशी संस्कृति का अनुकरण करते जा रहे हैं। ऐसे में योग इन मूल्यों को पुनर्जीवित करने में अहम भूमिका निभा सकता है। ये बड़े सौभाग्य की बात है कि हमारे प्राचीन मनीषियों के पास उत्तम कोटि का वह ज्ञान था जो आज भी उतना ही युवा और प्रभावशाली है जितना था। हमारी इस प्रतिभा का समूचे विश्व ने लोहा माना और संसार ने हमें जगद्गुरू कहकर पुकारा। मगर इस पर अपनी पीठ थपथपाने के बजाय हमें इस ज्ञान को पूरे समाज में प्रसारित करना है क्योंकि ज्ञान बाँटने से बढ़ता है। दूसरा, आने वाली पीढ़ी देश की कर्णधार है। उसके अंदर इन उत्तम संस्कारों को समाहित करना और पाश्चात्य हवा के प्रभाव से रोकना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

आज के परिदृश्य में ही कुछ अलगाववादी ताकतें इसे धर्म से जोड़कर प्रस्तुत करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहीं हैं। हमें मिलकर उन्हें मुँहतोड़ जवाब देना होगा और देशभक्ति के इस मधुर पीयुष में जातिवाद का विष मिश्रित नहीं होने देना होगा। उसके लिए आवश्यकता है सांप्रदायिक सद्भावना की और वह सद्भावना आती है योग से। तो आइये मिलकर योग अपनाएँ, स्वस्थ निरोधी जीवन पाएँ।

भारत के योग को अंतर्राष्ट्रीय मान्यता, 21 जून 'विश्व योग दिवस'

संयुक्त राष्ट्र ने अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाए जाने के भारत के प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। इस घोषणा के साथ ही अब प्रत्येक वर्ष के 21 जून को विश्वभर में 'अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस' मनाया जायेगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा के 69वें सत्र में इस आशय के प्रस्ताव को लगभग सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। भारत के साथ 177 सदस्य देश इस प्रस्ताव के समर्थक और सह-प्रस्तावक भी बने।

गत 27 सितम्बर, 2014 को भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने संयुक्त राष्ट्र में अपने पहले संबोधन में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने का आग्रह किया था। इस प्रस्ताव में उन्होंने 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मान्यता दिये जाने का भी प्रस्ताव रखा था। मोदी जी की इस पहल का 177 देशों ने समर्थन किया। संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने भाषण में उन्होंने कहा था कि भारत के लिए प्रकृति का सम्मान, आध्यात्मवाद का अनिवार्य हिस्सा है। हम प्रकृति की विपुलता को पवित्र मानते हैं। उन्होंने कहा कि योग हमारी प्राचीन परंपरा का अमूल्य उपहार है। उन्होंने यह भी कहा कि योग मन और शरीर को, विचार और कार्य को, अवरोध और सिद्धि को साकार रूप प्रदान करता है और यह व्यक्ति और प्रकृति के बीच सामंजस्य बनाता है। यह स्वास्थ्य को अखंड स्वरूप प्रदान करता है। इसमे केवल व्यायाम नहीं है, बल्कि यह प्रकृति और मनुष्य के बीच की कड़ी है। यह जलवायु परिवर्तन से लड़ने में हमारी मदद करता है। उन्होंने संयुक्तराष्ट्र महासभा द्वारा 21को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाये जाने के फैसले का स्वागत करते हुए प्रसन्नता व्यक्त की और उन सभी 177 देशों को हार्दिक धन्यवाद दिया जो इस प्रस्ताव के समर्थक बने थे। प्रधानमंत्री ने कहा कि योग में समूची मानवता को एकजुट करने की अद्भुत शक्ति है, यह ज्ञान, कर्म और भक्ति का सुन्दर मेल है। दुनिया में असंख्य लोगों ने योग को अपने जीवन का अभिन्न अंग बनाया है। निश्चय ही अब और अधिक लोग योग की तरफ आकर्षित होंगे। ज्ञातव्य हो कि संयुक्त राष्ट्र महासभा में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी की पहल के बाद संयुक्त राष्ट्र स्थित भारत के स्थायी मिशन ने सभी 193 देशों को अनौपचारिक रूप से प्रस्ताव के बारे में समझाया था। विचार-विमर्श के बाद 22 अक्टूबर, 2014 को प्रस्ताव के अंतिम मसौदे को सहमति दे दी गई।

5 दिसम्बर, 2014 तक 177 देश इस प्रस्ताव के प्रायोजक बन गए थे। प्रस्ताव के सहप्रायोजकों में संयुक्ताराष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्य भी हैं। भारत में 5000 वर्ष से भी पहले जन्मी योग पद्धति के चाहने वाले पूरी दुनिया में हैं। बॉलीवुड से लेकर हॉलीवुड तक के सितारे योग करते है और उसकी तारीफ भी करते हैं। योग हमेशा से ही विदेशियों को प्रभावित करता आया है। अमेरिका सहित यूरोप में लाखों लोग नियमित योग करते हैं। वहीं योग सीखने की ललक कई विदेशियों को भारत की ओर खींचती लाती है।

-सम्पादक

विज्ञान चलचित्र मेला : अब बनेंगी अच्छी विज्ञान फिल्में

डॉ० इरफान ह्यूमन

उद्‌घाटन करते पद्मश्री मुजफ्फर अली

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के विज्ञान प्रसार और राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा दूरदर्शन, आकाशवाणी, यूनिसेफ, लखनऊ विश्वविद्यालय के पर्यावरण शिक्षा केंद्र, एमेटी विश्वविद्यालय, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद उ०प्र० और सोसाइटी ऑफ अर्थ साइंटिस्ट के सहयोग से ''5वाँ राष्ट्रीय विज्ञान मेला और प्रतियोगिता-2015'' का आयोजन 4 से 8 फरवरी, 2015 तक लखनऊ की आँचलिक विज्ञान नगरी में किया गया, जिसका उद्‌घाटन मुख्य अतिथि फिल्मकार व प्रसार भारती बोर्ड के सदस्य पद्मश्री मुजफ्फर अली ने किया। इस अवसर पर विज्ञान प्रसार के निदेशक डॉ० आर० गोपीचन्द्रन, यूनिसेफ-उत्तर प्रदेश की प्रमुख नीलोफर पोरजंद, कलाकार और वैज्ञानिक डॉ० अनिल कुमार रस्तोगी और राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् से सम्बद्ध राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र के निदेशक डॉ० रामा शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किये। आँचलिक विज्ञान नगरी के परियोजना समायोजक डॉ० उमेश कुमार ने अतिथियों का स्वागत किया और फिल्मोत्सव के मुख्य संयोजक निमिष कपूर ने अतिथियों का धन्यवाद ज्ञापित किया। उद्‌घाटन सत्र का संचालन आकाशवाणी की उद्‌घोषिका पारूल शर्मा ने किया।

इस पाँच दिवसीय विज्ञान चलचित्र मेले में 152 प्रविष्टियों में से चयनित 64 फिल्मों का प्रदर्शन किया गया, जिसमें विज्ञान और तकनीकी की ऐतिहासिक यात्रा को ''फ्यूजन-हिस्टोरिकल जर्नी ऑफ साइंस एण्ड टेक्नॉलाजी इन पंजाब'', एचआईवी पीड़ितों के प्रति मानवीय दृष्टिकोण को ''एचआईवी'' फिल्मों में प्रदर्शित किया गया। मैंग्रूव वनों, रेडियो, दूरबीन और साँपों के रोचक संसार की झलक भी फिल्मों के माध्यम से देखने को मिली। फिल्म 'अंडे का फंडा' समारोह का खास आकर्षण रही। इनके साथ ही जब हम सो जाते हैं तो क्या होता है, शांति के क्षेत्र में एटम का प्रयोग यूनिसेफ द्वारा निर्मित किशोरियों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं पर आधारित फिल्म 'पहेली की सहेली' का प्रदर्शन किया गया।

समारोह में ''बीटी ब्रिंजल-सेफर बेटर एफोरडेबिल'' का प्रदर्शन किया गया। कम कैलोरी की इस सब्जी में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेड और फाइबर की प्रचुरता रहती है। फिल्म ''मैथेमैजिक (खुदबुद् गणित सिखाने का एक प्रयोग है), 'मेरे आंगन के पक्षी' (पर्यावरण में बदलाव से आए खतरे) का प्रदर्शन किया गया है।

यहीं उर्दू भाषा की फिल्म ''पैगाम'' में जंगलों को बचाने का संदेश ''वैनिशिंग वल्चर'' में तेजी से लुप्त हो रहे गिद्धों को बचाने का संदेश, ''विज्ञान से ध्यान की ओर'' में पुरातन भारतीय विज्ञान ध्यान और आध्यात्म का महत्व, ''विसर्जन'' में दुर्गापूजा जैसे धार्मिक पर्व के बाद नदियों में मूर्ति विसर्जन का दुष्परिणाम, ''ड्राप बाई ड्राप'' में पानी की एक-एक बूँद को बचाकर सुरक्षित कल का सपना का प्रदर्शन किया गया। ऐनीमेटेड फिल्मों ''गप्पी'' में एक मछली की गंगा नदी की यात्रा, ''द पलाइट'' में वर्तमान के हालातों में आने वाला कल का प्रदर्शन किया गया। इसके साथ फिल्म ''इंसेक्ट्स ऐट ग्लो'', ''कैन क्राउड सोर्सिंग डिस्कवर न्यू ड्रग'', ''कम एलाँगविद हरिया'', ''मदर वॉस्प'', ''अंडर द सिलिका डस्ट'', ''वेस्ट मैनेजमेंट अर्थक्वेक सेफ'', ''पॉवर शोअर'' व मॉन्युमेंटल साइंस'' का प्रदर्शन भी किया गया। इस चलचित्र मेले में गैर प्रतियोगी वर्ग और माइक गनटन के निर्देशन में बीबीसी टेलीविजन, डिस्कवरी चैनल द्वारा निर्मित फिल्म ''लाइफ हिस्ट्री'' का प्रदर्शन किया गया।

फिल्म ''आओ चले सुनहरे कल की ओर'' में किसानों को भविष्य सुरक्षित रखने के लिए न्यूनतम रसायनिक खाद्य का प्रयोग, ''घारत-द रिवाइवल ऑफ वाटरमिल्स'' में ग्रामीण क्षेत्र में बिजली निर्माण की कहानी, ''हाउ कैन एडवांस कम्प्यूटिंग इम्प्रूव अवर लाइव्स'' में दैनिक जीवन में कम्प्यूटर का प्रयोग कर जीवन स्तर का विकास का प्रदर्शन किया गया। इनके साथ ही अनेक अन्य उपयोगी व ज्ञानवर्द्धक फिल्में भी प्रदर्शित की गयी।

इस महोत्सव के तहत तकनीकी उत्कृष्ठता हेतु ट्राफी एवं प्रमाण पत्र के साथ 20 हजार रुपये का पुरस्कार चार विधाओं में दिया गया। सिनेमोटोग्राफी के लिए शैलेंद्र हूडे निर्देशित फिल्म स्नेक्स, संपादन के लिए एंटोनी फीलिक्स की लार्ज मेश पर्स सिनिंग, ग्राफिक्स, एनीमेशन व विशेष प्रभाव के लिए सुमित ऑसमंड शॉ निर्देशित फिल्म गप्पी व ध्वनि रिकार्डिंग और संरचना के लिए श्रीनिवास ओली निर्देशित फिल्म घरात-

*संपादक-साइंस टाइम्स न्यूज एण्ड व्यूज, 67 अन्टा, निकट मोहनी स्कूल, शाहजहाँपुर - 242 001.

रिवाइवल ऑफ वॉटरमिल्स को प्रदान किया गया। ट्राफी एवं प्रमाण पत्र के साथ 40 हजार रुपये का विशेष जूरी पुरस्कार नल्ला निर्देशित फिल्म आइगर्स रिवेंज को मिला।

इसके साथ ही सोसाइटी ऑफ अर्थ साइंसिस्ट यानी एसईएस के विशेष पुरस्कार से मौतियर रहमान निर्देशित फिल्म मौनूमेंटल सांइस, कुलवंत भाबरा की पाइथेरेमेन्डिएशन ऑफ मैंगनिज माइन स्पॉइल डम्पस् थ्रू इंटिग्रेटेड बायो-टेक्नोलॉजिकल एप्रोच व अब्बास हसनैन द्वारा निर्देशित फिल्म वैनिशिंग वल्चर को सम्मानित किया गया। जूरी में चंद्रप्रकाश द्विवेदी की अध्यक्षता में डॉ0 अनिल रस्तोगी, सी.एम. नौटियाल, शरद दत्ता, संतोष के. पांडेय, रतनमणि लाल, कमर रहमान, ललिथा वैद्यानाथन व जयंत कृष्णा बतौर सदस्व्य शामिल रहे।

कार्यक्रम के दौरान नव फिल्मकारों के लिए कार्यशाला का आयोजन किया गया। यहीं विभिन्न क्षेत्रों से वैज्ञानिकों और फिल्मकारों ने विज्ञान संवाद कार्यक्रम में अपने व्याख्यान कर अपने अनुभवों को साझा किया। समापन समारोह के मुख्य अतिथि निर्माता निर्देशक डॉ0 चंद्रप्रकाश द्विवेदी सहित विशिष्ट अतिथि सूर्यमोहन कुलश्रेष्ठ, फिल्मकार शरद दत्त ने अपने विचार व्यक्त किये। कार्यक्रम का संचालन संयुक्त रूप से मंजरी गुप्ता और वीथिका माहे ने किया।

सम्मान समारोह

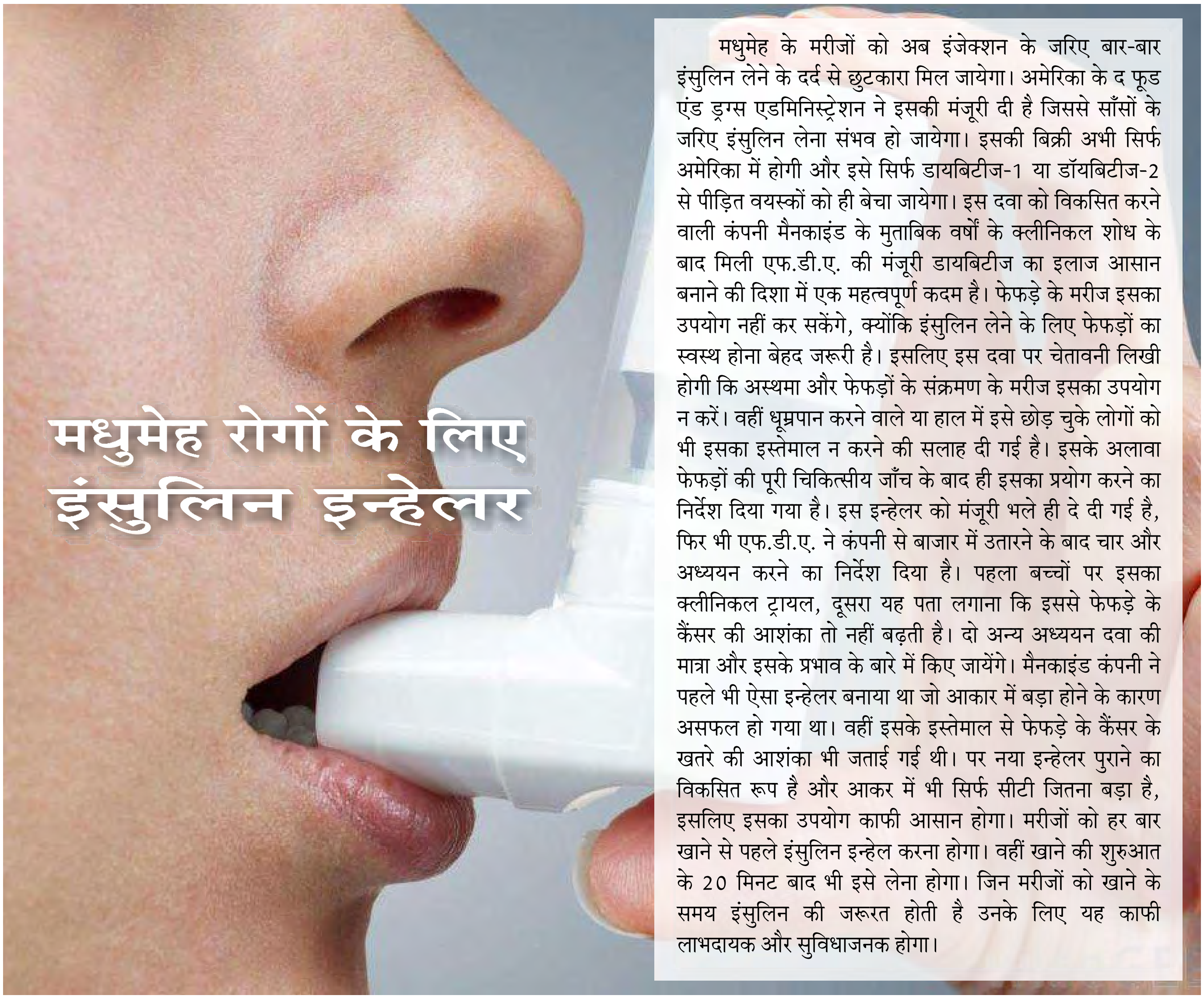

मधुमेह रोगों के लिए इंसुलिन इन्हेलर

मधुमेह के मरीजों को अब इंजेक्शन के जरिए बार-बार इंसुलिन लेने के दर्द से छुटकारा मिल जायेगा। अमेरिका के द फूड एंड ड्रग्स एडमिनिस्ट्रेशन ने इसकी मंजूरी दी है जिससे साँसों के जरिए इंसुलिन लेना संभव हो जायेगा। इसकी बिक्री अभी सिर्फ अमेरिका में होगी और इसे सिर्फ डायबिटीज-1 या डॉयबिटीज-2 से पीड़ित वयस्कों को ही बेचा जायेगा। इस दवा को विकसित करने वाली कंपनी मैनकाइंड के मुताबिक वर्षों के क्लीनिकल शोध के बाद मिली एफ.डी.ए. की मंजूरी डायबिटीज का इलाज आसान बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। फेफड़े के मरीज इसका उपयोग नहीं कर सकेंगे, क्योंकि इंसुलिन लेने के लिए फेफड़ों का स्वस्थ होना बेहद जरूरी है। इसलिए इस दवा पर चेतावनी लिखी होगी कि अस्थमा और फेफड़ों के संक्रमण के मरीज इसका उपयोग न करें। वहीं धूम्रपान करने वाले या हाल में इसे छोड़ चुके लोगों को भी इसका इस्तेमाल न करने की सलाह दी गई है। इसके अलावा फेफड़ों की पूरी चिकित्सीय जाँच के बाद ही इसका प्रयोग करने का निर्देश दिया गया है। इस इन्हेलर को मंजूरी भले ही दे दी गई है, फिर भी एफ.डी.ए. ने कंपनी से बाजार में उतारने के बाद चार और अध्ययन करने का निर्देश दिया है। पहला बच्चों पर इसका क्लीनिकल ट्रायल, दूसरा यह पता लगाना कि इससे फेफड़े के कैंसर की आशंका तो नहीं बढ़ती है। दो अन्य अध्ययन दवा की मात्रा और इसके प्रभाव के बारे में किए जायेंगे। मैनकाइंड कंपनी ने पहले भी ऐसा इन्हेलर बनाया था जो आकार में बड़ा होने के कारण असफल हो गया था। वहीं इसके इस्तेमाल से फेफड़े के कैंसर के खतरे की आशंका भी जताई गई थी। पर नया इन्हेलर पुराने का विकसित रूप है और आकार में भी सिर्फ सीटी जितना बड़ा है, इसलिए इसका उपयोग काफी आसान होगा। मरीजों को हर बार खाने से पहले इंसुलिन इन्हेल करना होगा। वहीं खाने की शुरुआत के 20 मिनट बाद भी इसे लेना होगा। जिन मरीजों को खाने के समय इंसुलिन की जरूरत होती है उनके लिए यह काफी लाभदायक और सुविधाजनक होगा।

सूचना प्रौद्योगिकी : कल, आज और कल पर द्विभाषी अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन

डॉ0 डी.डी. ओझा

नई दिल्ली स्थित रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन (डी.आर.डी.ओ.) द्वारा 19 से 21 फरवरी 2015 को "सूचना प्रौद्योगिकी : कल, आज और कल" पर त्रिदिवसीय द्विभाषी (हिन्दी एवं अंग्रेजी) अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन आयोजित किया गया। वस्तुतः डी.आर.डी.ओ. का विगत तीन वर्षों में यह दूसरा ऐतिहासिक प्रयास रहा। जिसमें इस बात की पुष्टि कर दी है कि हिन्दी में विज्ञान लेखन, संप्रेषण सरल एवं सहज है। आयोज्य सम्मेलन रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र (डेसी डॉक), दिल्ली द्वारा वल्लभ भाई पटेल चेस्ट संस्थान के पेंटल स्मृति स्वर्ण जयन्ती सभागार में आयोजित किया गया था।

उद्घाटन सत्र में मंचस्थ विद्वान

इस सम्मेलन के मुख्य अतिथि भारत सरकार के संयुक्त सचिव, ई. प्रशासन श्री राजेन्द्र कुमार थे तथा डॉ0 मानस कुमार मंडल, विशिष्ट वैज्ञानिक एवं महानिदेशक (जैव विज्ञान) ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। सम्मेलन की आयोजन समिति के अध्यक्ष तथा डेसी डॉक के निदेशक श्री सुरेश कुमार जिंदल ने स्वागत करते हुए बताया कि इसमें देश-विदेश से प्राप्त लगभग 270 आलेख/शोध-पत्र प्रस्तुतिकरण हेतु चयन किये गये हैं। इसमें 21 देशों के विद्वानों ने प्रतिभागिता की है। प्राप्त आलेखों एवं शोधपत्रों को निम्नलिखित 3-3 पुस्तकों में क्रमशः हिन्दी एवं अंग्रेजी में प्रकाशित किया गया- 1. सूचना प्रौद्योगिकी : कल, आज और कल, 2.सूचना प्रबंधन, 3. सूचना और समाज, 4. Electronic resources and Digital Services, 5. Artificial Intelligence and Network Security तथा 6. Managing Information technology.

मुख्य अतिथि श्री राजेन्द्र कुमार ने ई-प्रशासन के क्षेत्र में भारत सरकार के विभिन्न प्रकल्पों की जानकारी दी। उद्घाटन सत्र के अध्यक्ष डॉ0 मानस कुमार मंडल ने मानवीय मस्तिष्क को सूचनाओं की प्राप्ति, उनका भंडारण एवं उसका पुनः संप्रेषण के बारे में बताया। रोमानिया की डॉ0 अलैक्जेंड्रिया ने रूस की शैक्षणिक व्यवस्था पर तथा बच्चों द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग में बरती जाने वाली सावधानियों पर प्रकाश डाला। धन्यवाद ज्ञापन आयोजन सचिव डेसी डॉक के वैज्ञानिक श्री फुलदीप कुमार ने की।

सम्मेलन में विशिष्ठ आमंत्रित व्याख्यान प्रो0 हुजुर सरन, डॉ0 आर.सी. गुप्ता, डॉ0 ओमविकास, डॉ0 धर्मेन्द्र सैनी, प्रो0 मोहन, श्री अजय कुमार, डॉ0 विजय गुप्ता, श्री बी.के. गैरोला जैसे विद्वानों ने व्याख्यान प्रस्तुत किये। इस वैज्ञानिक सम्मेलन में 28 तकनीकी सत्र निम्न विषयों पर आयोजित किए गए- संचार प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी : कल, आज और कल, ई-गवर्नेंस, भाषा विज्ञान विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी के सामाजिक सरोकार, डाटावेयर हाउसिंग एंड डाटा माइनिंग, एडवान्स कम्प्यूटिंग, सूचना विज्ञान, अनुप्रयुक्त विज्ञान, साइबर सिक्योरिटी, सेटेलाइट एंड मोबाइल कम्यूनिकेशन, सूचना प्रौद्योगिकी के विविध आयाम, वेब इनेबल्ड लाइब्रेरी सर्विसेज, विज्ञान के विविध आयाम, मानव कल्याण हेतु विज्ञान, रोबोटिक्स, करेन्ट ट्रेन्ड इन डिजिटल पब्लिशिंग, पॉवर इलेक्ट्रॉनिक्स, इलेक्ट्रोनिक्स, एनक्रिप्पसन एंड सिक्योरिटी टेक्नीक, ऑटोमेशन एंड कंट्रोल इंजीनियरिंग, इन्टेलीजेंट सिस्टम, बिबिलोमीट्रिक एंड एनालिटिकल स्टडीज तथा ई-रिर्सोसेज एंड ओपन सोर्स मेनेजमेंट आदि व्याख्यान के मुख्य विषय रहे। इस सम्मेलन का समापन आई.आई.एम. लखनऊ के प्रो0 रोशनलाल रेना के मुख्य आतिथ्य में तथा केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के निदेशक प्रो0 मोहन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

*'गुरुकृपा', ब्रह्मपुरी, हजारी चबूतरा, जोधपुर - 342 001.

ISSN 2231 - 2455

पुरस्कार/सम्मान/सदस्यता/नियुक्ति

प्रो0 धीरेन्द्र पाल सिंह बने नैक के निदेशक

प्रो0 धीरेन्द्र पाल सिंह

तीन विश्वविद्यालयों - काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, डॉ0 हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर तथा देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के कुलपति रह चुके प्रो0 धीरेन्द्र पाल सिंह को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्वायत्त संस्था राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद (नेशनल एसेसमेंट एण्ड एक्रिडियेशन कौन्सिल) का निदेशक नियुक्त किया गया है। प्रो0 सिंह ने गत 17 अगस्त 2015 को निदेशक पद का कार्यभार संभाल लिया और वे इस पद पर आगामी पाँच वर्षों तक अपनी सेवायें देंगे।

प्रो0 सिंह के पास तीन विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में शैक्षणिक योजना व प्रशासन, संस्थान स्थापन, शिक्षण व प्रशिक्षण, अनुसंधान व विकास, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग आदि के विविध क्षेत्रों में 31 वर्षों का समृद्ध अनुभव है। नैक एक राष्ट्रीय संस्था है जिसके जिम्मे भारतीय विश्वविद्यालयों और उच्च शैक्षणिक संस्थानों का मूल्यांकन और प्रत्यायन के आधार पर मानकीकृत किया जाना और उनके स्तर के अनुसार श्रेणी प्रदान करना है। प्रो0 धीरेन्द्र पाल सिंह जी को इस उपलब्धि के लिए विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से हार्दिक बधाई।

डॉ0 गिरीश साहनी बने सी.एस.आई.आर. के महानिदेशक

डॉ0 गिरीश साहनी

प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं सीएसआईआर- इंस्टीट्यूट ऑफ माइक्रोबियल टेक्नोलॉजी, चंडीगढ़ के निदेशक डॉ0 गिरीश साहनी को गत 24 अगस्त 2015 को वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) का महानिदेशक तथा वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डीएसआइआर), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार का सचिव नियुक्त किया गया है। डॉ0 साहनी को इस उपलब्धि के लिए विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से हार्दिक बधाई।

प्रो. वी.के. शुक्ल बने आई.एम.एस., बी.एच.यू. के निदेशक

प्रो. वी.के. शुक्ल

विश्व प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक एवं शल्यक्रिया विभाग, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यक्ष प्रो. विजय कुमार शुक्ल चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के निदेशक नियुक्त किये गये है। प्रो. शुक्ल ने गत 4 नवम्बर, 2015 को निदेशक पद का कार्यभार ग्रहण कर लिया। प्रो. वी.के. शुक्ल को इस उपलब्धि के लिए विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से हार्दिक बधाई।

प्रो0 एल.सी. राय को राजा रमन्ना फेलोशिप

प्रो0 एल.सी. राय

वनस्पति विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व विभागाध्यक्ष व प्रसिद्ध शैवाल वैज्ञानिक प्रो0 एल.सी. राय को परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार का प्रतिष्ठित 'राजा रमन्ना फेलोशिप ट्रैक-I'' पुरस्कार के लिए चयन किया गया है। यह पुरस्कार अभी उन्हें तीन वर्षों के लिए प्रदान किया गया है जिसे बाद में दो अतिरिक्त वर्षों के लिए विस्तारित किया जा सकेगा। विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से प्रो0 राय को हार्दिक बधाई।

डॉ0 दुर्गादत्त ओझा के सम्मान में 'विज्ञान' का विशेष अंक

डॉ0 दुर्गा दत्त ओझा

विगत दिनों सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय विज्ञान लेखक डॉ0 दुर्गा दत्त ओझा को विज्ञान परिषद, प्रयाग ने अपने शताब्दी वर्ष के अवसर पर उनके सम्मान में 'विज्ञान' का एक 'सम्मान अंक' प्रकाशित कर उन्हें सम्मानित किया। इस सम्मान विशेषांक में डॉ0 ओझा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर उनके जीवन से जुड़े विविध पक्षों पर विशद्रूप से प्रकाश डाला गया है। डॉ0 दुर्गा दत्त ओझा एक ख्यातिलब्ध विज्ञान लेखक के साथ-साथ अच्छे वक्ता भी हैं। विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से उन्हें हार्दिक बधाई।

डॉ0 दिनेश मणि को 'बाबू श्याम सुन्दर दास पुरस्कार'

डॉ0 दिनेश मणि

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग के एसोशियेट प्रोफेसर एवं सुप्रसिद्ध लोकप्रिय विज्ञान लेखक डॉ0 दिनेश मणि, डी.एससी. को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा उनकी पुस्तक 'विकिरण हमारे जीवन में' पर 'बाबू श्याम सुन्दर दास पुरस्कार' प्रदान करने की घोषणा की गयी है। डॉ0 मणि की विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में अब तक 50 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं तथा 1000 से अधिक लोकप्रिय लेख तथा 100 से अधिक शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं। विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से बधाई।

प्रो0 कृष्ण कुमार मिश्र राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित

विज्ञान-गंगा सलाहकार मंडल के सदस्य एवं होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मुंबई के आचार्य प्रो0 कृष्ण कुमार मिश्र द्वारा लिखी पुस्तक 'खान-पान और रसायन' को वर्ष 2014 के भारत के नागरिकों हेतु हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन के लिए राजभाषा गौरव पुस्तक की श्रेणी के अंतर्गत प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया गया। यह पुरस्कार गृह मंत्रालय, भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा प्रदान किया जाता है। विज्ञान भवन, नई दिल्ली में 14 सितम्बर, 2015 को विश्व हिन्दी दिवस के अवसर पर आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में भारत के राष्ट्रपति माननीय श्री प्रणब मुखर्जी ने प्रो0 मिश्र को यह पुरस्कार प्रदान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता माननीय गृह मंत्री श्री राजनाथ सिंह द्वारा की गयी। इस उपलब्धि के लिए विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से बधाई।

डॉ0 ओउम प्रकाश शर्मा राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित

विश्व हिन्दी दिवस 14 सितंबर, 2015 के अवसर पर भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित समारोह में प्रसिद्ध विज्ञान लेखक तथा 'विज्ञान आपके लिए' के मुख्य संपादक डॉ0 ओउम प्रकाश शर्मा द्वारा लिखी पुस्तक 'विज्ञान के बढ़ते कदम' के लिए भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री प्रणब मुखर्जी ने वर्ष 2013 के 'राजीव गाँधी राष्ट्रीय पुरस्कार' योजना के अन्तर्गत प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया। इस अवसर पर पुस्तक के सह लेखक और 'विज्ञान आपके लिए' के संपादक श्री राम शरण दास जी को भी इस पुरस्कार से राष्ट्रपति महोदय ने सम्मानित किया। डॉ0 शर्मा को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा भी उनकी दूसरी पुस्तक विज्ञान के नये आयाम के लिए 'सम्पूर्णानन्द नामित पुरस्कार' उ0प्र0 के मुख्यमंत्री माननीय श्री अखिलेश यादव द्वारा प्रदान किया गया। विज्ञान-गंगा परिवार की तरफ से बधाई।

प्रो0 कृष्ण कुमार मिश्र को विज्ञान भवन में पुरस्कार प्रदान करते महामहिम श्री प्रणब मुखर्जी

डॉ0 ओउम प्रकाश शर्मा को विज्ञान भवन में पुरस्कार प्रदान करते महामहिम श्री प्रणब मुखर्जी

भारत ने पहली अंतरिक्ष वेधशाला प्रक्षेपित की

भारत ने गत 28 सितम्बर, 2015 को अंतरिक्ष विज्ञान में एक और उपलब्धि हासिल करते हुए देश के पहले अंतरिक्ष वेधशाला एस्ट्रोसैट का सफल प्रक्षेपण किया। इससे ब्रह्मांड की विस्तृत समझ विकसित करने में मदद मिलेगी। श्रीहरिकोटा से एस्ट्रोसैट को पीएसएलवी-सी30 रॉकेट की मदद से प्रक्षेपित किया गया। इसके साथ ही अमेरिका के चार उपग्रहों सहित छह विदेशी उपग्रहों को भी अंतरिक्ष में स्थापित किया गया।

इसरो ने बताया कि एस्ट्रोसैट को सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से पोलर सेटेलाइट लॉन्च व्हीकल (पीएसएलवी) की मदद से सोमवार सुबह दस बजे प्रक्षेपित किया गया। पीएसएलवी की यह 31वीं उड़ान थी। उन्होंने बताया कि 25 मिनट बाद मिशन को आधिकारिक रूप से सफल घोषित किया गया। एस्ट्रोसैट का लक्ष्य है अंतरिक्ष में विभिन्न तरंगों की निगरानी कर अलग-अलग तरह के खगोलीय पिंड खोजना, एक्स-रे और पराबैंगनी किरणों के आधार पर आसमान का सर्वे करना तथा आकाशगंगाओं के झुंड, नक्षत्रों का विभिन्न तरंगों के आधार पर अध्ययन करना।

पाठकों के पत्र

महोदय,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'विज्ञान-गंगा' के अंक-8 की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका बहुत ही ज्ञानवर्द्धक एवं रुचिपूर्ण है। इसे पढ़कर ज्ञान-विज्ञान के अनेक रहस्यों की जानकारी हुई। पत्रिका में लेखों का चयन एवं उसकी प्रस्तुति बहुत ही सटीक एवं आकर्षक है। लेखों के बीच-बीच में फोटो का समावेश एवं उसका चयन अत्यंत ही विषयसंगत है। विज्ञान-गंगा के इस अंक में देश के अनेक प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, शिक्षकों एवं लेखकों के लेख अत्यन्त ही उपयोगी, रुचिकर, ज्ञानवर्द्धक एवं समसामयिक हैं। इसमें प्रकाशित वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन : कुछ जाने-अनजाने तथ्य, भारतीय वैज्ञानिकों के कुछ प्रेरणादायी प्रसंग, भारत में है जैव ऊर्जा की विशाल सम्भावनाएँ जैसी अत्यन्त रुचिकर एवं ज्ञानप्रद लेख हैं। आदिवासी जनजातियाँ एवं वनौषधियाँ एवं मातृत्व शिशु सुरक्षा में : सोनोग्राफी, तीसरी आँख जैसे लेख पत्रिका को सामयिक भी बनाते हैं।

'विज्ञान-गंगा' पत्रिका वास्तव में प्रशंसनीय है आशा करते हैं कि 'विज्ञान-गंगा' का प्रकाशन हिन्दी को प्रोत्साहन व संस्थान की प्रतिभा को आभा एवं मंच प्रदान करेगा। साथ ही आपको अवगत कराना है कि पत्रिका के नवें अंक में प्रकाशन हेतु लेख भेजने के लिए विश्वविद्यालय के शिक्षकों, शोधार्थियों एवं छात्रों को उत्कृष्ट, रुचिकर एवं ज्ञानवर्द्धक लेख प्रेषित करने के लिए सूचित कर दिया गया है।

धन्यवाद,

डॉ0 सुनीता चन्द्रा

कुलसचिव

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

विद्या बिहार, रायबरेली रोड, लखनऊ-226 025.

मान्यवर,

आपकी प्रतिष्ठित लोकप्रिय पत्रिका 'विज्ञान-गंगा' का वर्ष 5 अंक 8 प्राप्त हुआ। आभारी हूँ। मुझे यह अंक इतना अच्छा लगा कि मैं इस अंक के विषय में कुछ लिखने के लोभ का संवरण नहीं कर सका। इस अंक में 37 अत्यंत ज्ञानवर्द्धक और संग्रहणीय लेख और 4 कविताएँ संकलित हैं। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ किस लेख और किस कविता की प्रशंसा करूँ और किन्हें छोड़ दूँ। सभी रचनाएँ उच्चकोटि की हैं। एक अंक के लिए इतनी अधिक रचनाओं का चयन, प्रस्तुतिकरण और सम्पादन में आप और आपकी टीम को कितना परिश्रम करना पड़ा होगा उसकी मैं केवल कल्पना ही कर सकता हूँ। अपने सम्पादकीय में आपने थोड़े में बहुत कुछ कह दिया है। लेखों के साथ बहुरंगी चित्र जहाँ एक ओर इन्द्रधनुषी छटा बिखेरते हैं वहीं दूसरी ओर लेखों की गुणवत्ता में वृद्धि भी करते हैं। सारणियाँ लेखों को समझने में सहायता करती है।

पत्रिका का मुख पृष्ठ आकर्षक है, मुद्रण साफ-सुथरा और कागज बढ़िया है। कुल मिलाकर पत्रिका अत्यंत सुन्दर और उपयोगी है। पाठक निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे। प्रकाशक और मुद्रक जहाँ बधाई के पात्र हैं वहीं आप और आपके दोनों उप-सम्पादक डॉ0 देवेश कुमार गुप्त और डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी जी साधुवाद के पात्र हैं।

मेरी शुभकामना है कि पत्रिका उत्तरोतर प्रगति पथ पर बढ़ती रहे और जन मानस में हिन्दी भाषा के माध्यम से, विज्ञान का प्रचार-प्रसार करती रहे। महामना मदन मोहन मालवीय जी की स्मृति को नमन करते हुए मैं पत्र समाप्त करता हूँ। आशा है स्वस्थ हैं, सानन्द हैं।, अत्यंत

आदर सहित

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

'अनुकम्पा', वाई 2 सी, 115/6

त्रिवेणीपुरम झूँसी, इलाहाबाद-211 019.

आदरणीय अग्रवाल साहब

सादर प्रणाम,

'विज्ञान-गंगा' अंक-8 मिला। धन्यवाद। अंक देखकर तबियत खुश हो गयी। एक ही अंक में अंतरिक्ष, चिकित्सा विज्ञान, पर्यावरण, ग्रामीण समस्याएँ और अन्य विविध सामग्रियों को प्रस्तुत करके आपने गागर में सागर भर दिया है। उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण यह कि प्रत्येक लेख के साथ आपने जमकर मेहनत की है और उनके लिए नेट से एवं अन्य स्रोतों से चित्रादि एकत्र करने का सराहनीय प्रयास किया है। उक्त के लिए आदरणीय डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी जी एवं डॉ0 देवेश कुमार गुप्त जी सहित आपकी सम्पूर्ण टीम बधाई की पात्र है। अंक की अन्य रचनाएँ भी पत्रिका के स्तर के अनुकूल और उपयोगी हैं। सभी रचनाकार धन्यवाद और बधाई के पात्र है।

शुभकामनाओं के साथ,

विजय चितौरी

संपादक 'नई आवाज' (त्रैमासिक)

ग्रामोदय प्रकाशन, घूरपुर

पो0 घूरपुर वाया जसरा, इलाहाबाद-212 107.

'विज्ञान-गंगा' की एक प्रति (वर्ष-4, अंक-7) प्राप्त हुई। पूर्णतया रंगीन एवं नए स्वरूप में विज्ञान-गंगा खूब आकर्षक लगा। इस पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेख व कविताएँ काफी ज्ञानवर्द्धक है।

'ड्रैकुला आर्किड्स' और 'कहाँ जन्मा था पहला जीव' नामक लेख से कई नवीन जानकारियाँ मिली। साथ ही अन्य लेख भी ज्ञानवर्द्धक है। विज्ञान के लोकप्रियकरण के दिशा में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के इस विज्ञान पत्रिका के लिए समस्त सम्पादक मण्डल को बधाई।

रवि रौशन कुमार

प्रखण्ड शिक्षक

राजकीय मध्य विद्यालय, माधोपट्टी (केवटी)

दरभंगा (बिहार) 846 004.

माननीय सम्पादक महोदय,

सादर नमन!

सहर्ष विदित हो कि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा निःसरित 'विज्ञान-गंगा' का दर्शन करके मैं बहुत उत्साहित हूँ। इस पत्रिका का नयनाभिराम कलेवर जिस पर दोनों तरफ 'भारत रत्नों' के दर्शन पत्रिका की सार्थकता को दर्शाते हैं। हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक दृष्टिकोण संवर्द्धक 'विज्ञान-गंगा' जन-जन के मानस पटल पर ऐसे प्रभाव डालेगी कि शिवजी की जटाओं से निःसरित 'भागीरथी' का प्रदूषण, जो मानवीय क्रिया-कलापों की देन है, दूर करने में मदद मिलेगी। अनुक्रमणिका का प्रत्येक पद प्रेरक है जिसमें अनुमान मौसम का (घाघ और भड्डरी की कहावतें) विज्ञान पढ़ना और समझना ही नहीं बल्कि विज्ञान जीना सिखाती है। हमारे देश में हिन्दी ही ऐसी भाषा है जो अन्तःप्रेरण के लिए और एकता संवर्द्धन के लिए सशक्त माध्यम के रूप में जानी जाती है। अतः पत्रिका का नाम और काम दोनों हृदय स्पर्शी है। विज्ञान-गंगा हृदय स्पर्शी क्यों लगी?

लेखन शिक्षण और प्रशिक्षण का माध्यम हिन्दी भाषा हो,
अन्वेषण पर प्रेरण हो हिन्दी में ये अभिलाषा है।
गाँव, शहर, गरीब अरु धनपति, प्रकृति, चेतन या स्थूल,
भारत को एक करे हिन्दी, जैसे खाट के पाद में चूल।
हिन्दी में साहित्य सृजन, ज्यों प्रकृति का उपहार हैं फूल,
जागो! हिन्दी प्रेमी जागो! करो परागण हो मशगूल।

(स्वरचित कविता से)

पुनश्च शिक्षाविद् सलाहकार मण्डल में आस्थाशील, मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि ऊपर विस्तृत "आकाश-गंगा" है तो धरा पर 'विज्ञान-गंगा' है। मैं विज्ञान-गंगा परिवार को बधाई देता हूँ तथा शुभकामनाएँ भी कि गंगा जल की तरह 'विज्ञान-गंगा' आम आदमी तक शीघ्र ही पहुँचे।

साभार,

आपका सुहद

अनिल कुमार मिश्र "विज्ञ"

राजकीय सर्वोदय बाल विद्यालय

कोण्डली, दिल्ली-110 091.

गंगा में सीवेज गिराने वाले 184 नगर निकायों से माँगा जवाब

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) ने सीवेज को शोधन के बगैर गंगा एवं अन्य नदियों में छोड़े जाने पर 184 नगर निकायों को नोटिस जारी किए हैं। नोटिस में इस पर तुरन्त रोक लगाने के साथ इस समस्या के स्थायी समाधान के लिए 60 दिनों के भीतर विस्तृत कार्य योजना पेश करने को कहा है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के अनुसार उत्तर प्रदेश के 31, बिहार के 26, उत्तराखंड के 15 तथा झारखंड के दो नगर निकायों को नोटिस भेजे गये हैं। इनमें नगर निगम, नगर पालिका परिषद आदि शामिल हैं। साथ ही इन राज्यों के मुख्य सचिवों को भी इस आदेश के क्रियान्वयन के लिए कहा गया है। नोटिस में कहा गया है कि वाटर पोल्यूशन कंट्रोल एक्ट के तहत सीवेज के पानी को शोधित किए बगैर नदियों या झीलों में नहीं डाला जा सकता है। लेकिन नगर निकाय इसका पालन नहीं कर रहे हैं। इसी वजह से गंगा और इसकी तमाम सहयोगी नदियाँ, झीलें प्रदूषित हो रही हैं।

अधिक वसा वाले आहार से हो सकता है अवसाद

अधिक वसा वाला भोजन न केवल मोटापा बढ़ाता है, बल्कि इससे इंसान के अवसादग्रस्त होने का खतरा भी बढ़जाता है। शोधकर्ताओं ने एक रिपोर्ट में पाया गया कि अधिक वसा वाला भोजन दिमाग में कई बदलाव ला सकता है जिससे अवसाद और चिंता जैसे मनोरोग हो सकते हैं।

फ्रांसीसी शोधकर्ताओं ने चूहों पर किये गये अध्ययन में देखा कि अधिक वसायुक्त खाना खाने से चूहों में चिंता और अवसाद में वृद्धि हुई। इस भोजन से शरीर के वजन और शर्करा में वृद्धि हुई, जिससे अवसाद के लक्षण देखे गए। ज्यादा वसा खाना अवसादरोधी दवाओं के प्रभाव को भी कम कर देता है।

ISSN 2231 - 2455

हिन्दी प्रकाशन समिति की गतिविधियाँ

डॉ. दया शंकर त्रिपाठी

'विज्ञान-गंगा अंक-8' का लोकार्पण

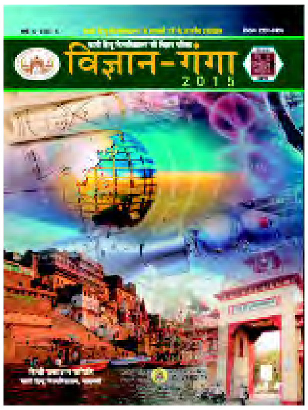

गत दिनांक 13 जुलाई, 2015 को दोपहर 01:00 बजे केन्द्रीय कार्यालय स्थित कुलपति कक्ष में हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत प्रकाशित शोध पत्रिका 'विज्ञान-गंगा' के आठवें अंक का लोकार्पण माननीय कुलपति प्रो0 गिरीश चन्द्र त्रिपाठी जी द्वारा किया गया। इस अवसर पर पत्रिका की प्रशंसा करते हुए कुलपति प्रो0 गिरीश चन्द्र त्रिपाठी जी ने कहा कि आज हमें विज्ञान को राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रेषित करने एवं सुदृढबनाने की अत्यन्त आवश्यकता है जिससे इसका लाभ अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके। अब हमारे देश के छात्रगण भी मातृभाषा हिन्दी में मौलिक चिंतन प्रस्तुत कर नई दिशायें प्रदान कर रहे हैं। विज्ञान-गंगा हिन्दी में प्रकाशित होने वाली एक ऐसी लोकप्रिय वैज्ञानिक पत्रिका है जो देशभर के विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों में कार्यरत विद्वानों के लिए उपयोगी है।

हिन्दी प्रकाशन समिति के समन्वयक एवं पत्रिका के संपादक प्रो0 शशि भूषण अग्रवाल ने बताया कि विज्ञान-गंगा के माध्यम से आमजनों को विज्ञान, कृषि, चिकित्सा और प्रौद्योगिकी सम्बन्धी जनोपयोगी सूचनाओं से लाभान्वित कराया जा रहा है। यह हिन्दी में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में काफी योगदान कर रहा है। प्रो0 अग्रवाल ने बताया कि इस पत्रिका के उप-सम्पादक डॉ0 देवेश कुमार गुप्त एवं डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी ने सम्पादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

'भारतीय वैज्ञानिक पुनर्जागरण की आधुनिक महाविभूतियाँ' पुस्तक का लोकार्पण

इसी अवसर पर समिति द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत ही प्रकाशित पुस्तक भारतीय वैज्ञानिक पुनर्जागरण की आधुनिक महाविभूतियाँ (लेखक-जगनारायण) का लोकार्पण माननीय कुलपति जी द्वारा किया गया। पुस्तक का लोकार्पण करते हुए माननीय कुलपति प्रो0 गिरीश चन्द्र त्रिपाठी जी ने कहा कि इन वैज्ञानिकों की जीवनी हमारी नई पीढ़ी के लिए काफी प्रेरणाप्रद है।

लोकार्पण के अवसर पर कुलसचिव प्रो0 के.पी. उपाध्याय, विज्ञान संकाय प्रमुख प्रो0 अरुण कुमार श्रीवास्तव, वनस्पति विज्ञान विभाग की वरिष्ठ आचार्या प्रो0 मधूलिका अग्रवाल, उपकुलसचिव डॉ0 संजय कुमार, उपसम्पादक डॉ0 देवेश कुमार गुप्त व डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी तथा सहायक सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी डॉ0 राजेश सिंह आदि उपस्थित रहे।

पिछले वर्षों में समिति द्वारा विश्वविद्यालय स्तरीय पुस्तक निर्माण योजना के अन्तर्गत ''ओजोन प्रदूषण : वनस्पतियों एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव'' (लेखक- प्रो0 शशि भूषण अग्रवाल एवं निवेदिता चौधरी) तथा ''पर्यावरण विज्ञान के विविध आयाम'' (लेखक- डॉ0 दया शंकर त्रिपाठी) पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है, जो छात्र-छात्राओं में काफी लोकप्रिय है। पर्यावरण के प्रति रुझान पैदा करने के उद्देश्य से दो पुस्तिकाओं ''जल संरक्षण - समस्याएँ एवं समाधान'' तथा ''पर्यावरण सुरक्षा - मूलभूत समस्याएँ एवं निदान'' का भी प्रकाशन किया गया है। प्रकाशनाधीन दो पुस्तकें ''मधुमेह के कारण एवं निवारण'' तथा ''तरलन : एक सामान्य परिचय'' (शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत) मुद्रणाधीन हैं जो बहुत शीघ्र ही आपके हाथों में होंगी। कुछ पुस्तकों का लेखन कार्य भी प्रगति पर है।

समिति के अद्यतन प्रकाशन

*हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005.

हिन्दी प्रकाशन समिति (भौ.प्र.) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अद्यतन प्रकाशन

1. **भारतीय वैज्ञानिक पुनर्जागरण की आधुनिक महाविभूतियाँ**
ए 4 आकार में रंगीन आकर्षक आवरण सहित कुल 108 पृष्ठों की पुस्तक
लेखक : जगनारायण
सम्पादन : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल
प्रकाशन वर्ष : 2015 (ISBN 978-81-929746-5-1)
मूल्य : रु. 160.00 (रुपये एक सौ साठ मात्र)

2. **ओजोन प्रदूषण : वनस्पतियों एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव**
ए 4 आकार में रंगीन आकर्षक आवरण सहित कुल 86 रंगीन पृष्ठों की पुस्तक
लेखक : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल एवं सुश्री निवेदिता चौधरी
प्रकाशन वर्ष : 2014 (ISBN 978-81-929746-3-7)

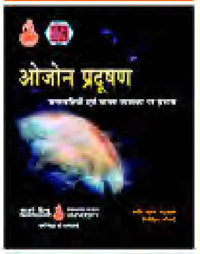

3. **पर्यावरण विज्ञान के विविध आयाम**
ए 4 आकार में रंगीन आकर्षक आवरण सहित कुल 208 पृष्ठों की पुस्तक
लेखक : डॉ. दया शंकर त्रिपाठी
सम्पादन : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल
प्रकाशन वर्ष : 2013 (ISBN 978-81-929746-2-0)
मूल्य : रु. 160.00 (रुपये एक सौ साठ मात्र)

4. **जल संरक्षण : समस्याएँ एवं समाधान**
ए 4 आकार में रंगीन आकर्षक आवरण सहित (23 उपयोगी चित्रों एवं 5 तालिकाओं के साथ) कुल 28 पृष्ठों की पुस्तिका।
लेखन एवं सम्पादन : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल एवं डॉ. दया शंकर त्रिपाठी
प्रकाशन वर्ष : 2012 (ISBN 978-81-929746-1-3)
मूल्य : रु. 30.00 (रुपये तीस मात्र)

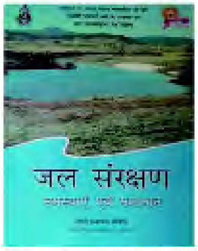

5. **पर्यावरण सुरक्षा : मूलभूत समस्याएँ एवं निदान**
20.5 × 13.5 सेमी. आकार में रंगीन आकर्षक आवरण सहित
कुल 20 पृष्ठों की पुस्तिका
संकलन व आलेख : डॉ. दया शंकर त्रिपाठी
सम्पादन : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल
प्रकाशन वर्ष : 2011 (ISBN 978-81-929746-0-6)
मूल्य : रु. 15.00 (रुपये पन्द्रह मात्र)

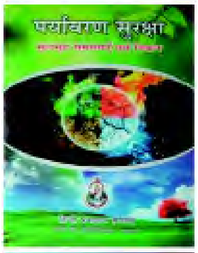

6. **विज्ञान-गंगा (अर्द्धवार्षिक विज्ञान पत्रिका)**
रंगीन आकर्षक आवरण सहित ए 4 आकार में कुल 136 रंगीन पृष्ठों की पत्रिका
सन् 2011 से प्रकाशित, (ISSN 2231 - 2455)
अब तक 9 अंकों का प्रकाशन हो चुका है।
सम्पादक : प्रो. शशि भूषण अग्रवाल
मूल्य : रु. 100.00 (रुपये एक सौ मात्र) प्रति अंक

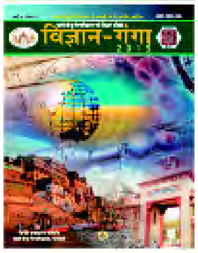

* एक वर्ष (दो अंक) के लिए वार्षिक सदस्यता शुल्क डाक व्यय सहित रु. 275.00 देय है। एक अंक के लिए रजिस्टर्ड पार्सल का व्यय रु. 36.00 देय है। केन्द्रीय विद्यालय के पुस्तकालयों के लिए क्र.सं. 1 से 4 तक के विक्रय मूल्य पर 15 प्रतिशत की छूट दी जाती है, परन्तु डाक व्यय अतिरिक्त देय है।
पुस्तकें प्राप्त करने के लिए सभी भुगतान डिमाण्ड ड्राफ्ट के माध्यम से कुलसचिव, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के नाम वाराणसी में देय होना चाहिए अथवा समन्वयक के पते पर मनीआर्डर द्वारा भी प्रेषित किया जा सकता है।

सम्पर्क करें : समन्वयक, हिन्दी प्रकाशन समिति (भौ.प्र.), द्वितीय तल, हिन्दी भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी–221 005
दूरभाष : 0542-6701424, 2307342 • **E-mail :** hindipublications.bhu@gmail.com

''विज्ञान-गंगा'' अंक-8 का लोकार्पण करते हुए माननीय कुलपति प्रो. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी

''भारतीय वैज्ञानिक पुनर्जागरण की आधुनिक महाविभूतियाँ'' पुस्तक का लोकार्पण करते हुए माननीय कुलपति प्रो. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी

मालवीय जी के जनोपयोगी सदुपदेश

- परमेश्वर को प्रणाम कर सब प्राणियों के उपकार के लिए बुराई करने वालों को दबाने और दण्ड देने के लिए, धर्म स्थापना के लिये धर्म के अनुसार संगठन कर गाँव-गाँव में सभा करनी चाहिए। गाँव-गाँव में पाठशाला खोलनी चाहिए। गाँव-गाँव में अखाड़ा खोलना चाहिए और पर्व-पर्व पर मिलकर बड़ा उत्सव मनाना चाहिये।
- सब भाइयों को मिलकर अनाथों की, विधवाओं की, मन्दिरों की और गौ माता की रक्षा करनी चाहिए और इन सब कामों के लिए दान देना चाहिये।
- स्त्रियों का सम्मान करना चाहिये।
- दुखियों पर दया करनी चाहिये।
- उन जीवों को नहीं मारना चाहिए, जो किसी पर चोट नहीं करते।
- मारना उनको चाहिये, जो आततायी हों अर्थात् जो स्त्रियों पर या किसी दूसरे के धन, धर्म या प्राण पर वार करते हों। यदि ऐसे लोगों को मारे बिना अपना या दूसरों का धर्म, प्राण या धन न बच सके तो उनको मारना धर्म है।
- स्त्रियों को भी, पुरुषों को भी निडरपन, सच्चाई, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य, धीरज और क्षमा का अमृत के समान सदा सेवन करना चाहिये।
- इस बात को कभी न भूलना चाहिए कि भले कर्मों का फल भला और बुरे कर्मों का फल बुरा होता है।
- घट-घट में बसने वाले भगवान विष्णु-सर्वव्यापी ईश्वर का सुमिरन सदा करना चाहिये, जिसके समान दूसरा कोई नहीं है, जो एक ही है और अद्वितीय है।
- सनातनधर्मी, आर्यसमाजी, ब्रह्मसमाजी, सिक्ख, जैन और बौद्ध आदि सब हिन्दुओं को चाहिए कि अपने-अपने विशेष धर्म का पालन करते हुए एक दूसरे के साथ प्रेम और आदर बरतें।
- अपने विश्वास में दृढ़ता, दूसरे की निन्दा का त्याग, मतभेद में (चाहे वह धर्मसम्बन्धी हो या लोकसम्बन्धी) सहनशीलता और प्राणिमात्र से मित्रता रखनी चाहिये।
- जो काम अपने को बुरा या दुखदायी जान पड़े उसको दूसरे के साथ मत करो।
- हर एक को उचित है कि वह चाहे कि सब लोग सुखी रहें, सब निरोग रहें, सबका भला हो, कोई दुःख न पावे। प्राणियों के दुःख को दूर करने में तत्पर यह दया बलवानों की शोभा है।

सहयोग राशि अधिकतम ₹100/- मात्र

प्रकाशक

हिन्दी प्रकाशन समिति (भौतिकी प्रकोष्ठ)

द्वितीय तल, हिन्दी भवन

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221 005

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग, भारत सरकार) के
आंशिक वित्तीय अनुदान द्वारा प्रकाशित